(भाई गुरदास)

डॉ० हरमहेन्द्र सिंह बेदी
निर्मल कुमार कौशिक

कबित्त सवैये
(भाई गुरदास)

सम्पादन, भूमिकलेखन एवं लिप्यांतरण
डॉ हरमहेन्द्र सिंह बेदी
एम. ए. (हिन्दी तथा पंजाबी) पी-एच. डी.
हिन्दी विभाग, गुरु नानक देव यूनिवर्सिटी, अमृतसर

सहायक सम्पादक :
निर्मल कुमार कौशिक
एम. ए. (हिन्दी तथा संस्कृत)
शोध छात्र, हिन्दी विभाग
गुरु नानक देव यूनिवर्सिटी, अमृतसर

न्यू ऐज बुक सैंटर अमृतसर

M.A. (Hindi & Panjabi) Ph.D.
Hindi Deptt. Guru Nanak Dev University Amritsar.

NIRMAL KUMAR KAUSHIK
M.A. (Hindi & Sanskrit)
Research Student, Hindi Deptt.
Guru Nanak Dev University Amritsar.

FIRST EDITION : 1985

मूल्य : 50 रू०

प्रकाशक : प्यारा सिंह, न्यू ऐज बुक सैंटर, अमृतसर ।
मुद्रक : हरमुख प्रिंटर्ज़,
23, महाँ सिंह गेट मार्कीट,
अमृतसर ।

POETRY OF BHAI GURDAS
Edited by Dr. Harmohinder Singh Bedi, Nirmal Kumar Kaushik

पंजाब,

पंजाबी

और पंजाबीयत

के

प्रबल समर्थक

प्रो० प्रीतम सिंह जी को

सादर

समर्पित

आशीर्वाद

यह काव्य-रचना और उसका साहित्यिक महत्व :

भाई गुरुदास की काव्य-रचना, जिस तरह कि प्रारम्भ में ही बताया गया है, दो भागों में विभक्त की जा सकती है और वह काव्य-रचना दो प्रकार की है—1. **वारां ज्ञान रत्नावली।** यह 40 वारों पर अवलम्बित विशुद्ध तथा ठेठ पंजाबी काव्य-रचना है, और (2) ब्रज भाषा के ये कबित्त-सवैये। वारां ज्ञान रत्नावली गुरुबाणी की अत्यंत मनोहर बिल्कुल नये ढंग की व्याख्यायिक रचना होने पर भी, जिस तरह कि गुरु अर्जुन ने उसको गुरुबाणी की कुंजी होने का वरदान दिया है, अपने आपमें एक प्रकार की अत्यंत प्रभावशाली मौलिक रचना है, जिसमें काव्य-साहित्य के ओज, प्रसाद आदि सभी गुण पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। अत: इसको पंजाबी भाषा की एक अनुपम तथा अद्वितीय काव्य-रचना कहना चाहिए। इसका सबसे अच्छा शुद्ध सम्पादित संस्करण शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबन्ध कमेटी, अमृतसर की ओर से छप चुका है।

भाई गुरुदास की दूसरी अनुपम काव्य-रचना है कबित्त-सवैये। ये कबित्त सवैये कतिपय प्रकाशकों की ओर से प्रथम स्कन्ध के रुप में केवल 555 कबित्त सवैयों ही छपते रहे हैं, परन्तु सन् 1940 ई. में हमारे प्रसिद्ध विद्वान भाई साहिब भाई वीर सिंह जी स्वर्गीय ने बड़ी गम्भीर खोज के बाद इसका द्वितीय स्कन्ध को जो 117 नव प्राप्त कबित्तों पर आधारित है, कबित्त अंक 557 से 675 तक बड़े अच्छे सम्पादित रुप में खालसा समाचार, अमृतसर की ओर से प्रकाशित कर दिया, जिससे इस अभाव की पूर्ति हो गई और भाई गुरुदास जी की वह ब्रजवाणी सम्पूर्ण रुप धारन कर गई। जब इस ब्रज वाणी को इस विशुद्ध हिन्दी संस्करण के रुप में सुचारु रीति से सम्पादित होकर सुविज्ञ पाठकों के सम्मुख उपस्थित हैं, राष्ट्र भाषा की अक्षय निधि में शामिल करने का श्रेय हमारे उदीयमान लेखक डाक्टर हरमहेन्द्र सिंह बेदी प्राध्यापक हिन्दी विभाग, गुरु नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर को है। उनके सहायक सम्पादक हैं श्री निर्मल कुमार कौशिक जिन्होंने इस पुस्तक के सम्पादन में बड़ी अन्वेषणात्मक तत्परता से काम लिया है और इसको यथाविधि सुसम्पादित तथा संशोधित रुप में देव नागरी लिपि का जामा पहनाया है आशा है उनके इस श्लाघनीय कार्य को सम्यक रुपेण हिन्दी संसार की ओर से अपनाया जायेगा।

ग्राम गुआरा, संगरूर — शमशेर सिंह अशोक

आश्विन विजय दशमी, 1984

भूमिका

मध्ययुगीन पंजाब के हिन्दी साहित्येतिहास में भाई गुरदास कई कारणों से महत्वपूर्ण कवि दिखाई देते हैं। युग की अपेक्षाओं का सरलीकृत रूप हमें उनके पजाबी और हिन्दी के काव्य में बराबर उपलब्ध होता है। इन दोनों बिन्दुओं का समानांतर अध्ययन पंजाब के मध्ययुगीन साहित्य की कई पूर्व मान्यताओं को खण्डित कर सकता है। भाई गुरदास के सम्पूर्ण 'कबित्त सवैयों" का यह सम्पादन कार्य भी इसी दृष्टि से करने का संकल्प किया है।

शिरोमणि गु: प्र. कमेटी की ओर से भाई गुरदास की दोनों रचनाएं प्रकाशित की गई हैं। "वारां भाई गुरदास" "ज्ञान रत्नावली" तथा "कबित्त सवैये—भाई गुरदास" पंजाबी की वारों वाली पुस्तक को तो पंजाबी जगत में सर्वाधिक मान्यता प्राप्त हुई है। भाई गुरदास की सभी वारों का विवरण या ब्योरा अनुसंधानकर्त्ता इसी ग्रन्थ को आधार बनाकर उद्धृत करते हैं। इसके सम्पादक भी पंजाब की भाषाओं के अधिकारी विद्वान शमशेर सिंह अशोक तथा अमर सिंह चाकर हैं। परंतु भाई गुरदास के कवित्त सवैयों के सम्पादन में (पाठ निर्धारण, लिप्यांतरण तथा अर्थावली) बहुत सी अकादमिक भूलें हुई हैं। हमने भाई गुरदास के "कवित्त-सवैयों" पर शोधकार्य करते समय ऐसी भूलों को अपनी पुस्तक "भाई गुरदास व्यक्तित्व और कृतित्व" में रेखांकित भी किया है। इसी अनुसंधान के दौरान हमें भाई गुरदास के कुछ और कवित्त सवैयों की सूचना भाई वीर सिंह द्वारा सम्पादित 'कवित्त भाई गुरदास दूसरा स्कंध' से प्राप्त हुई। शिरोमणि गुरद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा सम्पादित पुस्तक में 556 कवित्त सवैयों का संकलन किया गया है। जबकि भाई वीर सिंह वाली पुस्तक में 119 कवित्त सवैयों की सूचना भी दी गई है। हमने अपने इस सम्पादन में 119 कवित्त सवैयों को

भी शामिल किया है इस प्रकार हमारी इस पुस्तक में पहली बारहिन्दी में 675 कवित्त सवैयों की प्रामाणिकता पर विस्तृत टिप्पणी भी की है। उन्हें 119 कवित्त सवैयों की पहली सूचना भाई संतोख सिंह कृत 'गुरु प्रताप सूरज' से प्राप्त हुई। ।।दूसरा स्कंध में।। वे लिखते हैं "काफी समय से यह आवाज कानों में पड़ रही थी कि भाई गुरदास जी की रचना के कवित्त-सवैये 556 से अधिक और भी हैं। इस सम्भावना को भाई संतोख सिंह जी कर्त्ता—'गुरु प्रताप सूरज' और बढ़ा देते हैं। जब उनकी रचना में हमें भाई गुरदास के चार छन्दों का कवि की अपनी भाषा में टीका किया हुआ मिलता है। देखें रास 7 अंस चार का अंक 61 और 62 और इसी रास के अंस पांच का अंक 39—40।"[1]

इस प्रकार यहां से संकेत ग्रहण कर भाई वीर सिंह ने इन कबित्त सवैयों की प्राप्ति के लिए अपनी तलाश जारी रखी। अनुसंधान की मूल प्रवृत्ति होती भी यही है कि किसी नये क्षेत्र में पदार्पण करने के लिए जली हुई ज्वाला को मन, कर्म और ज्ञान से प्रशाँत करना। उनको सिख साहित्य का मुत्तालहा करते हुए 119 कवित्त सवैयों की अलग से पाण्डुलिपि प्राप्त हो गई। हम इन कबित्त सवैयों को भाई गुरदास की रचना मानने के लिए उन्हीं के शब्दों में इस बात की पुष्टि करते हैं।" "अन्त में गुरु कृपा से एक लिखी पोथी मिली, जिसमें कई और पोथियां भी थी और आरम्भ के करीब ये कबित्त थे जो 556 से आगे आरम्भ होकर 673 पर अन्त होते हैं। इसकी सूचना अखबार "खालसा समाचार" जिल्द-40, अंक 21, 6 अप्रैल 1838 पृष्ठ 3, कालम-3 में सम्पादक द्वारा दी गई थी। फिर एक पोथी मिली, जिसमें 21 कबित्त थे। इनमें से 15 तो पहले स्कंध के थे और चार थे दूसरे स्कंध के और दो ऐसे थे जो दोनों स्कंधों में नहीं थे। वे दोनों छन्द इस दूसरे स्कंध के अन्त में अंक 674-675 पर लाकर जोड़ दिए गए। उस 21 छन्दों वाली पोथी से जब ये छन्द आरम्भ होते हैं वहाँ लिखा है। सवैये भाई गुरदास जी।"[2]

भाषा, शैली, शिल्प, प्रतिपाद्य एवं लेखन प्रक्रिया से भी यह अनुमान सुविधाजनक प्रतीत होता है कि भाई गुरदास ने 556 कबित्त सवैयों की रचना न कर 675 की रचना की। भाई संतोख सिंह ने भाई गुरदास की संस्कृत रचना

---

1. भाई वीर सिंह, कबित्त भाई गुरदास, दूसरा स्कंध ।।अमृतसर : खालसा समाचार, 1980 ई.।।, पृ. 5 भूमिका।

2. भाई वीर सिंह, कबित्त भाई गुरुदास ।। दूसरा स्कंध ।। खालसा समाचार: 1980 ।। पृ. 6 ।। भूमिका ।।

हिन्दी-देवी-देवताओं का स्वामि, राम बीज रुप हैं,
दैत्य देव अभिवादन करें, ईश तू अनूप है।
सबका आधार, "ओ" सर्वस्व शक्ति रूप है,
नमस्कार है उसे जो "र" का स्वरूप है।

सं. इत्येव महावर्ण भावनाय मुहुर्मुहुः,
चतुर्वर्ग फलं दाश्यं सिद्धि एवं न संशय ॥ 6 ॥

हिन्दी-"वाहिगुरु" चार वर्ण चारो ही महान हैं।
इनका जो श्रद्धा से बार-बार करते ध्यान हैं,
धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष करते उसे प्रदान हैं।
बात सत्य और यह निस्संदेह प्रमाण है।
"इति श्री गुरु प्रताप सूरज ग्रन्थे सप्तमि रासे
भाई गुरुदास प्रसंग वरनन नाम तृतीय अंशु ॥

भाई गुरदास की प्रकाशित उपलब्ध रचनाएं केवल दो ही हैं परन्तु नये अनुसंधन के आधार पर यदि संस्कृत की रचना को भी मिला दिया जाए तो उनकी संख्या तीन हो जाती है।

1. संस्कृत के श्लोक ॥ सन् 1614 ॥ वाहिगुरु स्तोत्र ॥
"गुरु प्रताप सूरज" में वाहिगुरु स्तोत्र के अंतर्गत
2. वारा ॥ ज्ञान रत्नावली ॥ सन् 1604-1629 ॥ संख्या 40 और भाषा पंजाबी है।
3. कबित्त-सवैये ॥ वाणी भाई गुरदास भल्ले की ॥
1614-16 ॥ प्रथम स्कंध 556 ॥ दूसरा स्कंध 119 ॥
कुल संख्या 675 और भाषा ब्रज है।

"वाहिगुरु स्तोत्र" और "वारो" के पश्चात् भाई गुरदास की महत्व पूर्ण रचना "कबित्त-सवैये" है। प्रचार के दौरान इन "कबित्त-सवैये" की रचना की गई। विद्वानों का यह मत है छि भाई गुरदास ने इन कबित्त सवैयों की रचना बनारस, और आगरा की यात्रा के दौरान की। भाई गुरदास की ब्रजभाषा के इस रचना में 675 कबित्त सवैये हैं। इनमें ९5 से अधिक कबित्त हैं शेष में से आठ दोहरे, आठ सोरठे, आठ छन्द आदि हैं। सवैये तो केवल पांच छः ही है और वे भी पहले स्कध में। यह बात भी ऐतिहासिक दृष्टि से विलक्षण प्रतीत होती है कि दूसरे स्कंध के 117 कबित्तों में सवैया एक भी नहीं है। भाई वीर सिंह जी ने इस रचना का नाम रखा है "कबित्त भाई गुरदास" ॥दूसरा स्कंध॥ । हमें तो यह भी प्रतीत होता है कि शायद काल के अन्तराल ने भाई गुरदास द्वारा विरचित और कबित्त सवैयों को या तो धुंधला कर दिया है या फिर अनुपलब्ध बना दिया है। भावी असुसंधान कर्ता हमारे इस तथ्य को अध्ययन का विष्य बना सकते हैं। है तो यह अत्यत दुष्कर कार्य परन्तु "जिनि खोजा तिनि पाया गहरे पानी पैठ।"

हमारा यह संकलन कई दृष्टियों से अनुसंधान के नये गवाक्षों को खोलता है। हमारा यह निश्चित मत है कि भाई गुरदास की वाणी के पुनर्मूल्यांकन में यह ग्रन्थ काफी सहायक सिद्ध हो सकता है। अभी तक सभी कबित्त सवैयों के एक जगह संकलित न होने के कारण हिन्दी और पंजाबी पर हुए शोध कार्य अपूर्ण हैं। सम्पूर्ण अध्ययन के लिए, वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालने के लिए, तथा भाई गुरदास की सम्पूर्ण रचना का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करने के लिए यह ग्रंथ पजाबी और हिन्दी विद्वानों, शोधार्थियों के लिए किंचित् सहायक सिद्ध हो तो हम अपना प्रयास सफल मानेंगे। हमारा यह अध्ययन, पाठ अनुसंधान, ब्रजभाषा में व्याकरण के नियमों तथा लिप्यांतरण की अद्यतन पद्धतियों के अनुसार यहां तक हो सका सम्पन्न किया गया है।

हमने अपने इस सम्पादन के लिए भाई गुरदास 'कबित्त सवैयों' की कई टीकाओं का अध्ययन किया लेकिन इस ग्रन्थ के सम्पादन का आधार हमने ज्ञानी बिशन सिंह कृत 'कबित्त-सवैये सटीक भाई गुरदास जी' को बनाया है। ।।प्रकाशक, जवाहर सिंह कृपाल सिंह, बाजार माई सेवां, अमृतसर।। 1976 ।।

जैसा कि हमने भूमिका के पूर्व में यह कहा है कि भाई गुरदास के 'कबित्त-सवैये' जिनका सम्पादन शि. गु. प्र. कमेटी ने किया है हमारे उद्देश्य की प्रकृति के अनुकूल नहीं है। इसमें गुरुमुखी के शब्दों को हिन्दी के वर्णों के अनुरूप लिखा गया है। जिससे उनमें ध्वन्यात्मक परिवर्तन आ गया है और कबित्त-सवैयों की लयात्मकता भी खण्डित हुई है। इन्हीं अभावों की पूर्ति हमने लिप्यांतरण करते समय पंजाबी के शब्दों को उन्हीं की प्रकृति के अनुरूप देवनागरी में ढालने का प्रयत्न किया है।

भूल मानव-प्रकृति है। पूर्णता की प्राप्ति असम्भव होती है। हमारे इस ग्रंथ में ऐसी कई भूलें हो सकती हैं जिनकी ओर ध्यान न गया हो। सुधी पाठक और विद्वान् यदि हमें इन भूलों से परिचित करवायेंगे तो हम उनके कृतज्ञ होंगे।

इस सम्पादन कार्य में हमें आदरणीय डॉ. रमेश कुंतल मेघ, डॉ. पाण्डेय शशि भूषण शीतांशु से निरंतर प्रेरणा और उत्साह मिलता रहा है। उनका आभार प्रकट करने के लिए सम्पादक-गण नतमस्तक हैं। वैसे भी सम्पादन के क्षेत्र में यह हमारा प्रथम प्रयास है। इस सम्पादन कार्य में अशोक ने हिन्दी टंकण का कार्य सराहनीय किया है। वाहिगुरु से यही अरदास है कि वह हमें इस क्षेत्र में और अधिक कार्य करने के लिए अवसर, समय और बल प्रदान करे।

हिन्दी विभाग
गुरु नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर —डॉ. हरमहेन्द्र सिंह बेदी
15 अगस्त (स्वतंत्रता दिवस), 1984 —निर्मल कुमार कौशिक

भाई गुरदास : व्यक्तित्व और कृतित्व

(क) व्यक्तित्व :

भाई गुरदास सिक्ख धर्म के सुप्रसिद्ध प्रचारक, विद्वान, कवि व्याख्याता एवं एक महान लेखक माने जाते हैं। गुरु घर की जितनी सेवा भाई गुरदास ने की है उसके समान कोई दूसरा उदाहरण नहीं मिलता। भाई साहिब भाई गुरदास जी सिक्खी के सबसे बड़े प्रचारक कहे जा सकते हैं क्योंकि आप ने जब से सिक्खी धारण की तब से ही सिक्खी का प्रचार करते रहे। तीसरे सतगुरु से लेकर छटे सतगुरु साहिबान तक गुरसिक्खी का प्रचार बड़े (सुचज्जे) अच्छे ढंग से किया।[1] आपकी विद्वता, बुद्धिमता किसी से भी छुपी नहीं है। इसी के फल स्वरूप आपको गुरु घर के कई महान कार्यों की जिम्मेदारी सौंपी गई थी। आपने सिक्ख धर्म के गहन तत्वों को अपनी रचनाओं के माध्यम से सार रूप में प्रकट किया। जिसका आधार सिक्ख धर्म और दर्शन हैं। आपके महान कृत्यों, रचनाओं तथा व्यक्तित्व के आधार पर अगर आपको सिक्ख धर्म के व्यास (ऋषि) मान लिया जाए तो अत्युक्ति न होगी।

1. जन्म :

भाई गुरदास जी के जन्म के बारे में कोई निश्चित प्रमाण नहीं मिलता। क्योंकि तत्कालीन परम्परा के अनुसार उन्होंने अपनी किसी भी रचना में अपने जीवन अथवा व्यक्तित्व सम्बन्धी कोई संकेत नहीं दिया। कुछ वर्ष पूर्व भाई सन्तोख सिंह के 'गुरु प्रताप सूरज' तथा ज्ञानी ज्ञान सिंह के 'तवारीख गुरु खालसा'

---

1. भाई गुरदास, कवित्त सवैये भाई गुरदास जी (सटीक) पंजाबी (अमृतसर: भाई जवाहर सिंह कृपाल सिंह एण्ड को., 1976), पृ. (ख)

तथा शि. गु. प्र. कमेटी के खालसा समाचार की खोज रिपोर्टों के अध्ययन से कुछ तथ्यों से अनुमान लगाने का प्रयत्न अवश्य हुआ है। भाई वीर सिंह ने इनका जन्म 1600 से 1610 बिक्रमी के बीच सम्वत को माना है।[2] आपके पिता का नाम श्री दातार चन्द था जो तीसरे गुरु अमरदास (1479–1574) के भाई थे। वे भी गुरु घर के अच्छे सेवक थे। कहा जाता है कि एक दिन गुरु अमर दास को ध्यान आया कि दातार चन्द गुरु घर के अच्छे सेवक हैं मगर नि:सन्तान होने से दु:खी है। ऐसी उच्च आत्मा दम्पत्ति के घर किसी महान विद्वान् ज्ञानवान रूह (आत्मा) का प्रकाश होना चाहिए......सो आप के इस (फुरने) विचार के पूरे एक वर्ष के बाद सन् 1558 को माता जीवनी की कोख से गोईन्दवाल (अमृतसर) में एक बालक ने जन्म लिया। सिक्ख परिवार ने अपनी श्रद्धा के अनुसार सतगुरु और संगत की हजूरी में नाम गुरदास रखा।[3] भाई रणधीर सिंह के अनुसार "भाई साहिब का जन्म भल्ले परविार के सिक्ख सजन और गोइंदवाल आ बसने के बाद संवत् 1608 वि. में अर्थात् गुरु अर्जुनदेव के जन्म से दो वर्ष पहले हुआ।"[4] उपरोक्त चारों विद्वानों के मतानुसार भाई गुरदास का जन्म लगभग भाई वीर सिंह के बताए संवत् 1600–1610 के आस पास ही ठहरता है। भल्ला परिवार से सम्बन्ध रखने के कारण ही आप भाई गुरदास भल्ला के नाम से प्रसिद्ध हुए।

इतना तो स्पष्ट ही है कि आपने गुरु अमरदास जी से ही विद्या और सिक्खी ग्रहण की। इस दृष्टि से भी अगर बेखा जाए तो गुरु अमरदास जी सन् 1552 में गद्दी पर बैठे तब (भाई) गुरदास की आयु नौ दस वर्ष की होगी जिस कारण वे पढ़ाई के योग्य थे। इस हिसाब से आपका जन्म सन् 1543 के पास ही बनता है।"[5] जो भी हो इन सभी तिथ्यां और घटनाओं के आधार पर भाई गुरदास का जन्म 1600 और 1610 के बीच ही ठहरता है जो लगभग सभी विद्वानों को मान्य है। भाई रणधीर सिंह ने भी इनका जन्म 1600 बिक्रमी (1551 ई०) में ही

---

2. भाई वीर सिंह, कवित्त भाई गुरदास (दूसरा स्कंध) (अमृतसर : खालसा समाचार, 1980 ई.), पृ. 26

3. सरदूल सिंह, भाई गुरदास (पटियाला, भाषा विभाग, पंजाब, 1961) पृ 5

4. रणधीर सिंह भाई गुरदास भल्ले का जीवन : पंजाबी दुनियां, भाई गुरदास अंक (पटियाला : भाषा विभाग पंजाब, 1968), पृ. 2

5. तारन सिंह, भाई गुरदास, सम्पादक सुरिन्दर सिंह कोहली, पंजाब यूनिवर्सिटी, पंजाबी साहित्य का इतिहास, भाग पहला (चण्डीगढ़ पंजाब यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन ब्यूरो) 1973, पृ. 339

माना है। जो सर्वमान्य है और भाई वीर सिंह भी इस मत के हैं।

कुछ विद्वानों के अनुसार इनके पिता का नाम दातार चन्द न होकर ईशर दास था। इतना तो निश्चित ही है कि वे गुरु अमरदास जी के भतीजे थे। जो सिख धर्म की गुरु परम्परा के तीसरे गुरु बने। गुरु जी के चाचा भानु के घर दो बालक दातार चन्द और ईशर दास पैदा हुए। इसी ईशर दास के इकलौते पुत्र भाई गुरदास जी हैं।[6]

भले ही गुरदास जी के माता पिता का नाम निश्चित तौर पर नहीं मिलता, तो भी इतना तो स्पष्ट ही है कि भाई गुरदास जी के पूर्वज भल्ले खत्री थे जो जिला अमृतसर के 'बासर की' गांव के निवासी थे इन्हीं की वंश परंपरा में गुरु अमरदास हुए और ईशर दास और दातार चन्द इनके चाचा की सन्तान थे। भाई गुरदास में से किसी एक की सन्तान थे। इस प्रकार भाई गुरदास गुरु अमर दास जी के भतीजे थे।

2. शैशव :

अभी आप तीन ही वर्ष के हुए थे कि आपके पिता जी चलाना कर गए... ...पिता के गुरुपुरी सिधारने से सोए सिद्ध ही पालना, सम्भालना, पढ़ाना, लिखवाना गुरु जी की सरपरस्ती के नीचे होना था।"[7] गुरु जी का आप से जन्म से ही अपार स्नेह था। आप के माता-पिता भी गुरुघर के अनन्य सेवक थे। भाई गुरदास का जन्म भी उन्हीं के वरदान से हुआ ऐसा कहा जाता है। सो आप का बचपन गुरु जी के चरणों में बीता। आप बचपन से ही योग्य प्रतिभा-शाली व श्रेष्ठ कवि थे। बचपन में ही आप ने अपनी माता जी के साथ कई तीर्थ स्थलों की यात्रा कर ली थी। जब गुरु जी संवत् 1615 बि. (सन् 1558) में अभिजित नक्षत्र के समय तीर्थों पर गई। 'तीर्थ उधम सतगुर किया लोक उधरन अरबा' तो उस समय गुरदास जी अपनी माता जी के साथ छोटी सी आयु में थे। छोटे बहुत छोटे गुरदास जी पांच वर्ष की अवस्था में भी भाव पूरित कविता रच लेते थे। आप में दैवी प्रतिभा थी।[8] सरस्वती के वरद पुत्र भाई गुरदास अपनी प्रतिभा का प्रमाण बचपन में ही देने लगे थे। आप को छोटी अवस्था में ही गुरु

---

6. रणधीर सिंह, भाई गुरदास भल्ले दा जीवन, पंजाबी दुनियां, सं० लाल सिंह, भाई गुरदास विशेषांक, 1968, पृ. 2

7. सरदूल सिंह, भाई गुरदास (पटियाला : भाषा विभाग, पंजाब, 1961), पृ. 6

8. वही पृ. 6

घर के कई कार्य सौंपे गए जिनका निर्वाह सफलता पूर्वं सम्पन्न हुआ। जब गुरु अमरदास जी ने गुरु अंगद (1504-1552) की आज्ञा से गोइंदवाल (अमृतसर) नगर की स्थापना की तो सारा गुरु परिवार गोइंदवाल में आकर रहने लगा। अतः भाई गुरदास के बचपन के दिन गोइंदवाल में ही बीते। वहां के सम्पूर्ण आध्यात्मिक वातावरण का प्रभाव भाई गुरदास पर भी पड़ना स्वाभाविक ही था। सो यहां यह होनहार विरवा फूटती मसू भेदी उमर में गुरमुखी, हिन्दी, संस्कृत और फारसी आदि विद्या से हरियाला हो गया और शास्त्रों उपनिषदों, पुराणों की अत्यन्त वाक्फीयत से प्रफुल्लित हो गया।[9] आप गुरु घर के वातावरण में पूरी तरह से रंग गये। आप हरमन प्यारे हो गये। आपकी विद्वता की धाक चारों ओर फैल गई।

3. यौवन :

आप का व्यक्तित्व महान था और विचार उच्च थे। गुरु जी के बताए मार्ग पर दृढ़भाव से चलना आपका स्वभाव बन चुका था। आप में एक अच्छे सेवक आदर्शभक्त और आज्ञाकारी शिष्य के सभी गुण मौजूद थे। आप विद्यार्थी काल में भी प्रत्येक बात को गहराई से सोचते थे और उसकी अपने ही ढंग से व्याख्या करते थे। आप संस्कृत का गहन अध्ययन करने हेतु काशी भी गए। तीव्र बुद्धि के कारण आप शीघ ही प्रकाण्ड विद्वान हो गये। आप ने आध्यात्मिक विषयों को लेकर अनेक पण्डितों से तर्क-वितर्क भी किए लेकिन विजय आप ही की हुई। गुरु जी की आप पर अपार कृपा थी। आप सतगुरु जी के निर्वाचित और निकटवर्ती सिक्खों में से एक थे। पालन-पोषण और पढ़ाई लिखाई ही गुरु जी के हाथों हुई थी। घर एक ही था। कोई भिन्न भेद नहीं था। अब तो आठों पहर ही हजूरी में रहते थे जो आप ने आंखों देखा, केवल देखा ही नहीं, सतगुरु जी से तद्रुप हुए।[10] बादशाह अकबर की गुरु अमरदास के प्रति असीम श्रद्धा थी। गुरु जी के निकट होने के कारण उसे आप से भी प्रेम हो गया। इस लिए कई-कई दिन वह गुरु जी से आज्ञा लेकर आगरा या दिल्ली बुला लिया करता था। अकबर विद्वानों को उचित सम्मान देता था। वह भाई गुरदास से गुरुबाणी सुन कर आनन्दमग्न होता था और भाई गुरदास इस तरह से गुरुबाणी का प्रचार करने में गौरव का अनुभव करते थे। जब गुरु अमरदास जी ज्योति ज्योत

---

9. भाई वीर सिंह, कवित्त, भाई गुरदास (दूसरा स्कंध, अमृतसर खालसा समाचार, 1980), पृ. 27

10. सरदूल सिंह, भाई गुरदास (पटियाला : भाषा विभाग, पंजाब), 1961, पृ. 8

समाए तब आप आगरा में थे। पता तो चल गया था पर आगरे से गोईंदवाल आते आते देर लग गई।

भाई जेठा को गुरु गद्दी का अधिकारी मान कर उन्हें गुरु अमरदास का स्वरूप जान लिया गया और वे भाई जेठा से चतुर्थ गुरु रामदास होकर गुरु गद्दी पर सुशोभित हुए। भाई गुरदास जी ने अपने सिक्खी प्रचार के कर्त्तव्य को पहले से भी अधिक विकसित किया। चतुर्थ गुरु रामदास जी के आदेश पर आप ने सिक्ख-धर्म के प्रचार के साथ साथ गुरुबाणी को भी एकत्र करना भी आरम्भ किया। आप लोगों की संशय निवृत्ति भी करते और कीर्तन द्वारा उन्हें मुग्ध भी। श्री गुरु रामदास जी के गुरुआई के सात वर्षों में भाई साहिब जी की छोटी बड़ी कई उदासिया थीं। आप को दिन रात सेवा और गुरबाणी एकत्र करने की लग्न थी। इतना ही नहीं आप बाहर रहते हुए भी गुरु घर—के प्रत्येक कार्य में आप तन्मयता से भाग लेते थे। भाई साहिब ने आगरा केन्द्र बना कर चारों कोनों में सच-धर्म के बीजमन्त्र का छींटा दिया। बड़े-बड़े नगरों में संगतों और धर्म-शालाओं की स्थापनाएं कीं।[12] सिक्ख धर्म सम्बन्धी भवनों का निर्माण कार्य भी आपकी देख रेख में ही होता था। गुरुओं द्वारा अनेक गांव और नगर बसाए जाने में भी इनका महत्वपूर्ण योगदान है। इतना ही नहीं कि आप ने निर्माण कार्य की देख रेख ही की अपितु इनके बनाने में भी हाथ बटाया। अतः इन्हें भवन निर्माण कला का पूर्ण ज्ञान था। 1606 ई. में 'अकाल तख्त' भवन के निर्माण हेतु गुरु हर गोबिन्द साहिब ने महान गुरसिक्खों की सेवा प्राप्त की थी और वे थे भाई गुरदास जी और बाबा बुड्डा जी।[13] भाई गुरदास की योग्यता और प्रतिभा के बल पर ही इन्हें गुरु घर के प्रत्येक कार्य की पूर्णतया जिम्मेदारी लगन, परिश्रम और योग्यता से निभाते। पिता गुरु रामदास की आज्ञानुसार गुरु अर्जुन देव जी ने 'अमृत सरोवर' को पक्का करने और उसमें हरमन्दिर का निर्माण करने की जिम्मेदारी भाई गुरदास और बाबा बुड्डा जी को सोंपी।[14] भाई गुरदास ने दिन रात परिश्रम करकेकार्य इसको सम्पन्न कराया। गुरु

---

11. सरदूल सिंह, भाई गुरदास, (पटियाला : भाषा विभाग, पंजाब, 1961), पृ. 10–11
12. रणधीर सिंह, भाई गुरदास भल्ले दा संखेप जीवन, पंजाबी दुनियां, भाई गुरदास विशेषांक (पटियाला : भाषा विभाग पंजाब, 1968), पृ. 5
13. दलीप सिंह दीप, भाई गुरदास, (पटियाला, भाषा विभाग पंजाब, 1981) पृ. 13
14. वही, पृ. 8

रामदास जी ने अपनी ज्योति ज्योत के पूर्व ही अपने लड़के पृथी चन्द को गुरु गद्दी के अयोग्य मान कर अपने छोटे लड़के अर्जुन मल को गुरु गद्दी का अधिकारी बनाया जो बाद में सिक्खों के पांचवें गुरु बने (1563-1608)। आप छोटे होने पर भी अपने बड़े भाई पृथीमल की अपेक्षा प्रतिभाशाली व एक उच्च व्यक्तित्व के स्वामी थे। जहाँ आप प्रभु के सच्चे भक्त थे वहां अमर कवि, अद्वितीय सम्पादक, संगीतकार, एक अच्छे पिता, महान उद्धमी, आज्ञाकारी सुपुत्र, क्षमावान भाई व एक अच्छे मार्ग दर्शक भी थे।[15] आपका बड़ा भाई पृथीमल आप से ईर्ष्या करने लगा और कई बार आपको मारने की भी चेष्टा की गई। मगर गुरु जी को आरम्भ से ही परम पिता परमात्मा की भक्ति की अटूट लग्न थी। अत. आप डरते न थे। आपका सारा जीवन सहन-शीलता और नम्रता की प्रत्पक्ष उदाहरण है। बड़े भाई पृथीमल की ईर्ष्या को प्रेम से सम्भाला और कभी भी मन में उसके प्रति विपरीत भाव नहीं लाए।[16] लेकिन पृथी चन्द ने गुरु अर्जुन देव के विरुद्ध अनेक मुस्लिम शासकों के कान भरे। जनता को भी गुमराह किया और अपने को गुरुघर का स्वामी बता कर लोगों से धन बटोरना आरम्भ किया। और गुरु घर की बदनामी करनी शुरू कर दी। गुरु जी ने उसकी आर्थिक सन्तुष्टि हेतु कुछ इमारतें और आमदन उसे दे दी। लेकिन फिर भी पृथीमल के मसंद भोले भाले दूर से आए सिक्खों को घेर कर प्रेरणा देकर पृथीचन्द के चरणों में उपस्थित कर देते थे। भाई गुरदास से नह सब सहन नहीं हुआ। गुरु घर को आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न बनाने और सिक्ख धर्म का प्रचार करने हेतु भाई गुरदास ने 'दसवंध' (अपनी कुल आय का लगभग दसवां भाग नियमित रुप से गुरु के चरणों में अर्पित करना) की रीति चलाई। सतगुर ने भाई गुरदास की यह तजवीज स्वीकार कर ली और सिक्ख की दबवें हिस्से की आधी कमाई (5 फी सदी) (दसवंध का अर्थ दसवें भाग का आधा पांचवां भाग) गुरु के लेखे लगाने का विधान बांध दिया।[17] इससे गुरुघर का आर्थिक ढांचा सुदृढ़ हो गया और प्रचार तेजी से बगने लगा।

गुरु अर्जुन देव ने भाई गुरदास की सहायता से 'आदि ग्रन्थ' (गुरु ग्रन्थ साहिब 1601-1604) का सम्पादन करा कर उसका पठन पाठन आरम्भ करवा

15. साहिब सिंह अरशी, सुखमनी साहिब का आलोचनात्मक अध्ययन (पंजाब) जींद : अरोड़ा पब्लिशर्ज, 1913), पृ 3
16. वही
17. रणधीर सिंह. भाई गुरदास भल्ले दा जीवन, सम्पादक लाल सिंह, पंजाबी दुनियां (पटियाला : भाषा विभाग पंजाब,) पृ. 7

दिया। भाई गुरदास गुरुघर की सेवा भी करते और बाहर प्रचार करने भी जाते। भाई गुरदास जी हर प्रकार से कार्यों को सम्पन्न करने में योग्य थे। अच्छे बुद्धिमान समझदार, अनुभवी, कसी हुई गांठों को खोलने वाले गुरमुख गुरसिक्ख थे। सतगुर जी की बखशिश (कृपा) आपके साथ थी। आप के श्री गुरु अमरदास, गुरु रामदास, गुरु अर्जुन देव जी और गुरु हरगोबिन्द राय के साथ निकट सम्बन्ध थे।[18] आपने आजीवन गुरु घर की सेवा करके और सिक्ख धर्म का सही अर्थ अपने प्रचार द्वारा जनता तक पहुंचाया और गुरुबाणी का सन्देश देकर जनता का मार्ग दर्शन किया। अपने गुरु और गुरमत से बढ़ कर आपकी प्रिय वस्तु कोई दूसरी न थी। इसी के लिए आप ने अपना सर्वस्व त्याग दिया था। आप ने तन मन धन से गुरु की आज्ञा शिरोधार्य कर गुरमत का प्रचार किया।

4, अन्तिम समय :

आप वृद्ध हो चुके थे आप ने गुरु अंगद देव जी से लेकर छटे गुरु हरगोबिंद राय जी के (1504–1553) ई. काल पर्यन्त गुरु घर की अटूट मन से सेवा की। वृद्धावस्था में भी गुरु घर की सेवा करते थकते न थे। अपने अन्तिम समय में गोईंदवाल साहिब के दर्शन करने की इच्छा प्रकट की। गुरु जी सब कुछ जान चुके थे। दीवान सजाया गया, कीर्तन हुआ। अरदास की गई। आप ने सीस झुकाथा। 'सतगुरु और संगत के देखते ही देखते भाई गुरदास जी की ज्योति संवत् 1696 बि. (सन् 1638) को असू के महीने गोईंदवाल में गुरु चरणों में जा मिली।"[19]

भाई गुरदास की रचनाएं :

भाई गुरदास केवल एक आदर्श सिक्ख गुरु घर के सेवक अथवा गुरमत के प्रचारक ही नहीं थे। वे एक प्रतिभाशाली विद्वान कवि थे। उन्होंने गुरुमत सिद्धान्तों की अपने ढंग से व्याख्या की। प्रचारक का सहज स्वभाव उनकी वाणी से प्रकट होता है। मात्र व्याख्या करने से ही गुरुमत का प्रचार नहीं होता। उन्होंने अपनी मौलिक वाणी द्वारा अपने दैनिक जीवन की घटनाओं और अनुभवों को अपनी रचनाओं में साकार फरके गुरुमत काव्य और प्रचार में भी वृद्धि की। "भाई साहिब की काव्य रचना का दायरा खुला है। आप देश देशान्तरों में

18, सरदूल सिंह, भाई गुरदास (पटियाला : भाषा विभाग, पजाब, 1961), पृ. 8

19, सरदूल सिंह, भाई गुरदास (पटियाला : भाषा विभाग पंजाब. 1961), पृ. 36

भ्रमण-कर्त्ता, बहुत सी विद्या के ज्ञाता, धुरन्धर विद्वान थे। आप के विचार गुरु चरणों मे बन्धे हुए थे।[20] अब तक के अनुसन्धानों के आधार पर भाई गुरदास की तीन रचनाएं उपलब्ध होती हैं :—

1. संस्कृत के श्लोक (सन् 1614 ई.) (जो गुरु प्रताप सूरज में वाहिगुरु स्तोत्र के अन्तर्गत संकलित है।)

2. वारें (ज्ञान रत्नावली) (1604–1629 ई.) जिनकी संख्या 40 है और भाषा पंजाबी है।

3. कवित्त-सवैये (वाणी भाई गुरदास भल्ले की) (1614–1616 ई.)

पूर्व स्कंध	556	ब्रज भाषा में है।
दूसरा स्कंध	119	,,
कुल संख्या	675	

1. श्लोक :

संस्कृत के श्लोकों की संख्या निर्धारित नहीं है तो भी 'गुरु प्रताप सूरज' में भाई सन्तोख सिंह जी ने जिन छः श्लोकों का संकलन किया है उनमें 'वाहिगुरु' काव्य का महत्व और स्तुति बताई गई है—

संस्कृत के श्लोक

श्री गुरदासो अथ वाहिगुरु स्तोत्र

अतष्टम छन्द

विश्वेशं, विश्वभिनयुक्तम्, सम्पुटे विश्व भूरवर्णं।
विश्व बोधं, स्वयं ब्रह्म तं प्रणवादि नमामिहं ॥ 1 ॥
वर्णावर्ण विहीनाथ वेद सार प्रवर्त्तकः।
विश्ववर्ग महीधीशं 'वकारं' तं नमामिहं ॥ 2 ॥
हरि हरादि स्वयं ब्रह्म हंस बोध प्रकाशतं।
हरमल वरद बीजं 'हकारं' तं नमामिहं ॥ 3 ॥
ज्ञानाकम् गिराधीशं शोतीतं स्वच्छ सारिवर्णं।
गमनागमय विहीनाय तं 'गकारं' नमामिपं ॥ 4 ॥
राम बीज सुरेश्वरं, देव द्रैत्याभिवंदितं।
सर्व-स्वं नश्रयमिति शक्ति, तं रकारं नमामिहं ॥ 5 ॥
इत्येव महांवर्ण भावनाथ मुहूमुहं:।
चर्तु वर्ग फलं दाश्यं, सिद्धी एवं न संशय: ॥ 6 ॥

---

20. सरदूल सिंह, भाई गुरदास (पटियाला : भाषा विभाग, पंजाब, 1961) पृ. 74

'इति श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थे सप्तमि रासे
भाई गुरदास प्रसंग बरननं नाम तृतीय अंशु ॥[21]

जब भाई गुरदास जी ने काशी के पंडितों के अनेकानेक संशयों का निराकरण कर दिया तब उन्होंने पूछा 'कि गुरु जी ने परमेश्वर के पुरातन नाम छोड़ कर 'वाहिगुरु' नाम क्यों रचा। इसमें क्या विशेषता है।'[22] तब भाई गुरदास जी ने इन श्लोकों द्वारा संस्कृत में उत्तर देकर अपनी विद्वता और प्रतिभा का परिचय दिया। भारतीय सभ्यता और संस्कृति के रंग में रंगे भाई गुरदास जी ने उन विद्वानों के ज्ञान को थोथा सिद्ध कर दिखाया और उनके संकल संशयों को दूर कर दिया तब उन्हों ने मुक्त कंठ से कहा :-

'जे गुरदास विमल मति ग्यान,
अब मन निशचै ठानी,
तुम ते संशय गयो हमारा
बिबिध बेद बिधि कीउ ऊचारा।'[23]

इस प्रकार भाई गुरदास जी ने सिद्ध कर दिया कि मात्र गुरुमत के प्रचारक न हो कर एक उच्चकोटि के विद्वान थे जो कई शास्त्रार्थ कर चुके थे और उन में जीत कर अपनी विद्वता का सिक्का जमा चुके थे। इनके श्लोकों की संख्या इससे भी अधिक बताई जाती है। मगर अभी तक कोई प्रमाण नहीं मिला है। "कहा जाता है कि आप ने एक एक रचना 'वाहिगुरु स्तोत्र संस्कृत' में भी की। यदि यह रचना आपकी है तो यह शायद आप ने काशी बनारस (सन् 1614) में प्रचार के समय की होगी।"[24]

वारां (ज्ञात रत्नावली) पंजाबी भाषा :

भाई गुरदास की पंजाबी भाषा में कुल 41 वारें मिलती हैं। लेकिन आज तक उनकी 36 वारों को ही मान्यता प्राप्त हुई है। 40वीं वार बाद में जोड़ी गई

21. भाई सन्तोख सिंह, गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ (जिल्द-4) (पटियाला : भाषा विभाग पंजाब, 1974), पृ. 14-15
22. भाई वीर सिंह, कवित्त भाई गुरदास (दूसरा स्कंध सटीक) (अमृतसर : खालसा समाचार, 1980), पृ. 68
23. सन्तोख सिंह गुरु प्रताप सूरज (पटियाला : भाषा विभाग पंजाब, रास 7, अंस 4, अंक 51, पृ.
24. तारन सिंह, भाई गुरदास, पंजाब यूनी. पंजाबी साहित्य का इतिहास, सम्पादक सुरिन्दर सिंह कोहली (चण्डीगढ़ : पंजाब यूनी., 1973) पृ. 344

है। अभ तक सभी विद्वानों ने इसके बारे में अपनी सहमति प्रकट की है कि यह वार भाव, भाषा, शैली और छन्द प्रबन्ध की दृष्टि से भाई गुरदास की अन्य वारों से मेल खाती हैं। जहां तक 41वीं वार का सम्बन्ध है यह निश्चय ही भाई गुरदास की लिखी सिद्ध नहीं होती, क्योंकि इसके भाव, भाषा, शैली, छन्दयोजना आदि के अलावा इस में गुरु गोबिन्द सिंह के युद्ध पराक्रम का वर्णन इसका सम्बन्ध भाई गुरदास भल्ले से स्थापित नहीं करती।[25]

यह 41वीं वार गुरु गोबिन्द सिंह के किसी गुरदास नामक श्रद्धालु की रचना जिसने दसम गुरु के पराक्रम का वर्णन करने हेतु इसकी रचना की होगी। लेकिन प्रमाणों के आधार पर नाम का कोई भी श्रद्धालु अथवा दरबारी कवि गुरु गोबिन्द सिंह के दरबार में नहीं था। डा. जग्गी भी लिखते हैं "सभी दृष्टियों से यह वीर रसी वार न भाई गुरदास की रचना है और न गुरु गोबिन्द सिंह के किसी दरबारी कवि की। क्योंकि इतिहास में उनके किसी दरबारी कवि का नाम गुरदास सिद्ध नहीं होता। इस लिए इसके रचयिता 'गुरदास' व्यक्तित्व संदेह युक्त है।"[26] इन वारों का रचना काल अभी तक सन्देह युक्त है। अगर देखा जाए तो भाई गुरदास की वारों में गुरमत की व्याख्याएं की गई हैं और सिद्धान्तों का सरलीकरण किया गया है। इससे अनुमान लगता है कि उनकी वारों का रचना काल गुरबाणी के पश्चात् का है। लेकिन 'सम्प्रादायी परम्परा के अनुसार भाई गुरदास की वाणी ग्रन्थ साहिब के सम्पादन के समय (1601-1604) मौजूद थी। क्योंकि इसे गुरबाणी के संक्लन में सम्मिलित करने के स्थान पर गुरु जी ने इसे 'गुरबाणी की कुंजी' होने का गौरवमयी महत्व प्रदान किया।"[27] आप प्रचारक थे अत: आपकी वाणी में अलग-अलग स्थानों, व्यक्तियों, विषयों का समयोजन है। गुरु कृपा और उसका महत्व आपकी वारों में स्पष्ट है। इसके अतिरिक्त "कई वारों में गुरमुख और मनमुख, संगत और कुसंगत का निर्णय है। निन्दक, झूठे और कपटियों का चित्र सुन्दर खींचा है। सदाचारक शिक्षा उच्च-दर्जे की दी है।"[28] इसमें हास्य, लोक-साहित्य पौराणिक्ता गुरमत काव्य आध्यात्मिकता एवं सामाजिकता का अद्भुत से योग हैं। भाई गुरदास के इस वार' साहित्य ने

---

25. रतम सिंह जग्गी, भाई गुरदास जीवनी ते रचना (पटियाला : पंजाबी विश्व विद्यालय, 1914), पृ. 37
26. रतन सिंह जग्गी, भाई गुरदास जीवन ते रचना (पटियाला : पंजाबी यूनी., 1974), पृ. 37
27. वही, पृ. 39

28 सरदूल सिंह, भाई गुरदास (पटियाला : भाषा विभाग, पंजाब, 1961), पृ. 81

आने वाले पंजाबी साहित्यकारों को एक नई शैली प्रदान की है। आज से चार सौ वर्ष पूर्व भाई गुरदास ने वारों की रचना कर के पंजाबी बोली को जो रुप प्रदान किया वही आगे चल कर लोकप्रिय हुआ। "भाई गुरदास की ये 40 वारें सामाजिक, धार्मिक, ऐतिहासिक और सदाचारक दृष्टि से बहुत महत्व रखती हैं। आप ने समकालीन दशा का टिप्पणी सहित वर्णन भी किया है और जो विचार-धारा गुरु साहिब ने दी और उसका जो प्रभाव पड़ा, उसे साहित्यिक भाषा में लिखा है। उस समय की दशा को भाई साहिब की वारों में देखा जा सकता है।"[29] भाई गुरदास की वारें 'साहित्य समाज का दर्पण है' की उक्ति को अक्षरशः चरितार्थ करती है। साहित्यिक दृष्टि से पंजाबी में टीका अथवा व्याख्या प्रणाली का उद्घाटन कर भाई गुरदास ने पंजाबी साहित्य को नई दिशा प्रदान की है। उनके द्वारा प्रतिपादित व्याख्या प्रणाली को 'भाई प्रणाली' कहा जाता है। उनके समय में "गुरबाणी' को सरल एवं स्पष्ट रूप में प्रस्तुत करने हेतु प्रचारक अपने अपने ढंग से गुरमत सिद्धान्तों को अपनी अपनी शैली में प्रस्तुत करते रहे हैं। भाई गुरदास जी ने मिथक, ऐतिहासिक, एवं दार्शनिक तत्वों का समायोजन कर गुरबाणी के सिद्धान्तों की अत्यन्त सरल ढंग से व्याख्या प्रस्तुत की। "भाई साहिब गुरु अर्जुन देव जी की आज्ञानुसार श्री हरिमन्दिर साहिब में श्री गुरु ग्रन्थ साहिब की कथा भी करते रहे। भाई साहिब ने निश्चित वाणी व्याख्या प्रणाली का निर्माण किया जिसकी सम्पूर्ण झलक उनकी रचनाओं, वारों तथा कवित्तों में उपलब्ध है।"[30] आपकी रचना में गुरवाणी के संकेतों प्रतीकों, सिद्धान्तों, कथाओं को स्पष्ट रुप से व्यक्त किया गया है। पौराणिक कथाओं के सन्दर्भो, दैनिक जीवन की घटनाओं, क्रियात्मक औपचारिकताओं को आप ने पद्य में इस तरह संजोया है। भाई साहिब ने गुरमत के बुनियादी सिद्धान्त गुरु सिक्ख, गुरमुख, भक्ति आदि को अपनी रचना में विस्तार से व्याख्यायित किया है। उन्होंने गुरवाणी के भ्रमों, भेदों, रहस्यों, सिद्धान्तों, भावनाओं, भावों को स्पष्ट किया, कठिन पदों के कोशमयी अर्थ दिये, पारिभाषिक शब्दों की भावना दर्शायी।......वारां भाई गुरदास से गुरु ग्रन्थ की व्याख्या ही विषय है।[31] आपकी व्याख्या

29. दलीप सिंह दीप, भाई गुरदास (पटियाला : भाषा विभाग, पंजाब, 1981), पृ. 20
30. तारन सिंह गुरवाणी दीयां व्याख्या प्रणालियां (पटियाला : पंजाबी यूनी., 1980), पृ. भूमिका-5
31. तारन सिंह, भाई गुरदास, पंजाब यूनीवर्सिटी, पंजाबी साहित दा इतिहास, सम्पा. सुरिन्दर सिंह कोहली (चण्डीगढ़ पंजाब यूनी. 1973), पृ. 361

केवल कठिन शब्दो का अर्थ ही नहीं, बल्कि भावों की गहनता को स्पष्ट करने में पूर्णता है। निश्चय ही आप ने गुरमत और गुरवाणी की अनेक दार्शनिक और रहस्यवादी समस्याओं की व्याख्या की और गुरवाणी के कई सन्दर्भों को खोला।[32] यही कारण है कि आप की वाणी को गुरु जी ने 'गुरवाणी की कुंजी' होने का गौरव प्रदान किया।

कवित्त सवैये (वाणी भाई गुरदास) ब्रजभाषा :—

'वाहिगुरु स्तोत्र' और वारों के पश्चात् आपकी महत्वपूर्ण रचना कवित्त-सवैये हैं। आप ने अपने प्रचार कार्य के दौरान खाली समय में अनुभवों की पुष्टि हेतु जन साधारण की तत्कालीन प्रचलित ब्रजभाषा में कवित्त सवैयों की रचना की। गुरु रामदास से सिक्खी प्राप्त करके आप गुरमत प्रचार के लिए बनारस, काशी और आगरा चले गये। "आप कम से कम 1574 से 1581 ई. तक आगरे में प्रचार करते रहे और साथ ही अपनी रचना कवित्त और सवैये की रचना करते रहे।"[33] पहले तो आपके 556 कवित्त सवैये ही प्रचलित थे। बाद में भाई साहिब भाई वीर सिंह जी के सद्प्रयत्नों से 119 और कवित्तों को प्रकाश में लाया गया। भाव पक्ष और कलापक्ष दोनों दृष्टियों से इसका परीक्षण, निरीक्षण किया गया। अन्तत: सभी विद्वानों ने भाई वीर सिंह जी के इस अद्वितीय कार्य की श्लाघा की और इस रचना को 'कवित्त भाई गुरदास' दूसरा स्कंध के नाम से सर्व सम्पति से साहित्य जगत में प्रतिष्ठित कर भाई गुरदास जी के कवित्तों में श्री वृद्धि कर के कुल संख्या 556+119=कुल 675 मान ली गई। "भाई साहिब की वारों के संग्रह का नाम 'ज्ञान रत्नावली' था और कवित्तों का नाम 'वाणी भाई गुरदास' था।"[34] भाई गुरदास की जो रचना 'वाणी भाई गुरदास' के नाम से प्रसिद्ध है। साहित्य के क्षेत्र में उसका अन्य प्रचलित नाम 'कवित्त-सवैये भाई गुरदास' है जो शिरोमणि प्रबन्धक कमेटी, अमृतसर द्वारा हिन्दी में प्रकाशित है। इसमें केवल प्रकाशित कवित्त-सवैयों की कुल संख्या 556 है। पहले 24 कवित्त मंगला चरण के हैं। बाद में गुरु का महत्व और बिरह का वर्णन किया गया हैं। कवित्तों का बुनियादी विषय सिक्ख आदर्शवाद है। गुरमुख

---

32. तारन सिंह, गुरवाणी दीयां व्याख्या प्रणालियां (पटियाला : पंजाबी यूनी. 1980, पृ. 48

33. तारन सिंह, भाई गुरदास, पंजाब यूनी. पंजाबी साहित्य का इतिहास, सम्पा. सुरिन्दर सिंह कोहली (चण्डीगढ़, पंजाब यूनी. 1973), पृ. 340

34. तारन सिंह, भाई गुरदास, पंजाब यूनी. पंजाबी साहित्य का इतिहास, सम्पा. सुरिन्दर सिंह कोहली (चण्डीगढ़: पंजाब यूनी. 1973), पृ. 348

का आदर्श सदाचार और सभ्याचार है। इस आदर्श की प्राप्ति के प्रमुख साधन 'गुरु' और 'साध संगत' हैं। 'साध' पद गुरु के लिए ही है। कुछ कवित्तों में आप ने जाति बिरह का वर्णन किया है। गुरु वियोग के बिरह का।[35] ब्रज भाषा की आपकी रचना में कुल मिला कर 675 सवैये हैं। इनमें सवैये बहुत कम हैं। कुछ दोहरे, सोरठे, छन्द आदि भी मिलते हैं। "कुल 675 कवित्त सवैयों में से 95 प्रतिशत से अधिक कवित्त हैं। शेष में से आठ दोहरे, आठ सोरठे, आठ छन्द आदि हैं। सवैये तो केवल तीन ही हैं और वे भी पहले स्कंध में।"[36] इन कवित्तों द्वारा भाई गुरदास ने तत्कालीन प्रचलित ब्रजभाषा के माध्यम से गुरमत के सिद्धान्तों, गुरु का महत्व और सिक्ख के कर्तव्य तथा गुरु की श्रद्धा और बिरह का अनुभूति परक चित्रण किया है। "आत्म समर्पण की भावना से लेकर विरह के व्याकुल अवस्था तक अनुभव का सीमा विस्तार हुआ है।"[37] इन कवित्तों के विष्य वस्तु के आधार पर यह कहना असम्भव है कि ये सभी कवित्त एक ही स्थान व एक ही समय में लिखे गये हैं। विषय की भिन्नता इनकी काल व स्थान सम्बन्धी एकता को सन्देहास्पद करती हैं। भाई वीर सिंह के अनुसार "वे बताते हैं कि ये अलग-अलग समय और विषयों के होने पर अलग-अलग निरीक्षणों के सामने आने पस अलग अलग समय और विष्यों पर लिखे जाते रहे हैं। वे सभी वियोग काल में लिखे जाने कम सम्भव हैं। बेशक विशेष रचना बनारस में और उससे पहले आगरे में दोनों स्थानों पर होनी अधिक उचित बात है।"[38] अत: मुख्य रुप से यह कहा जा सकता है कि भाई गुरदास कृत कवित्तों का मुख्य रचना समय आगरा का प्रचार स्थान, बनारस की यात्रा का प्रचार स्थान, बनारस की यात्रा का व संवादों का समय रहा है। "इसके अतिरिक्त, कवित्तों में प्रकट किए भाव संकेत करते हैं कि यह उस काल की रचना है जब भाई गुरदास गुरु चरणों की छोह से दूर थे। और चूंकि प्रचार के लिए भाई साहिब बनारस, आगरा आदि स्थानों पर गये थे। इस लिये क्या बियोगावस्था की दृष्टि से और क्या

35. वही, 349

36. रत्न सिंह जग्गी, भाई गुरदास जीवनी ते रचना (पटिआला : पंजाबी यूनी., 1974), पृ. 35

37. रत्न सिंह जग्गी, भाई गुरदास जीवनी ते रचना (पटियाला : पंजाबी यूनी., 1974), पृ. 34

38. भाई वीर सिंह, कवित्त भाई गुरदास, दूसरा स्कंध (अमृतसर, खालसा लमाचार, 1980), पृ. 13

भाषा की दृष्टि से कवित्त पंजाब से बाहर रहे दिनों की रचना है।"[39] आपका जीवन एक पूर्ण गुरसिक्ख और आदर्श प्रचारक का अनुपम जीवन था। जनता तक अपने आशय को बताने हेतु एवं सन्मार्ग दिखाने हेतु तथा "प्रचारक के कर्तव्य को पूर्ण सुगमता से निभाने हेतु, आपको गुरु जी से सन्देश पर आधारित अपनी अपनी मौलिक रचना करनी पड़ी।......सभी कवित्त सवैये इसी यत्न से पैदा हुए।"[40]

भाई गुरदास की उक्त तीनों रचनाएं गुरमत काव्य की महत्वपूर्ण निधि है। इन रचनाओं द्वारा भाई गुरदास ने पंजाबी बोली को साहित्यिक रुप प्रदान किया और गुरुमत साहित्य को प्रोढ़ता प्रदान की। साहित्य समाज का दर्पण है की उक्ति इनके वार-साहित्य पर अक्षरश: चरितार्थ होती है। आप ने तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक स्थिति का खुले रुप से चित्रण किया है। कविता अनुभूति की अभिव्यक्ति है अथवा आत्मा की वाणी की कविता है इसका साक्षात् प्रमाण भाई गुरदास कृत कवित्त-सवैये हैं। संस्कृत के श्लोक आपकी विद्वता व प्रतिभा का उज्ज्वल प्रमाण हैं। आपकी रचनाएं गुरमत साहित्य की शिरोमणि हैं।

4. आदि ग्रन्थ सम्पादन :

गुरु ग्रन्थ साहिब और भाई गुरदास की सम्पादन कला :

भाई गुरदास तीसरे गुरु के समय से ही गुरुओं की वाणी का संग्रह करने में लगे हुए थे। गुरमत का प्रचार करते समय वे गुरवाणी द्वारा सिक्ख संगतों को निहाल करते थे। लेकिन पंचम गुरु अर्जुन देव के समय में उनके भाई पृथी चन्द के पुत्र मनोहर ने गुरु की वाणी की नकल रुप एक ग्रन्थ का संग्रह आरम्भ किया तब गुरु अर्जुन देव जी ने गुरुओं की असली वाणी को प्रकाश में लाने हेतु एक ग्रन्थ का सम्पादन करने की सोची। "कई वर्षों की घालना (परिश्रम) के पश्चात् जब सारी वाणी इक्ट्ठी हो गई तब उसे संशोधित कर और रागों के अनुसार क्रम देकर अन्तिम रूप में लिखने का काम भाई गुरदास के सुपुर्द किया गया।"[41] भाई गुरदास जी की विद्वता और प्रतिभा का प्रभाव

---

39. रत्न सिंह जग्गी, भाई गुरदास जीवनी ते रचना (पटियाला, पंजाबी यूनी., 1974), पृ. 36

40. तारन सिंह, भाई गुरदास, सम्पादक, सुरिन्दर सिंह कोहली, पंजाबी यूनी., पंजाबी साहित दा इतिहास (पटियाला, पंजाबी यूनीवर्सिटी, 1973), पृ. 341

41. रत्न सिंह जग्गी, भाई गुरदास जीवनी ते रचना (पटियाला : पंजाबी यूनी., 1974), पृ. 18

गुरु जी पर पड़ चुका था और गुरु घर के सर्वप्रिय सेवक व गुरुवाणी के प्रेमी और गुरुमत की गहराई में जानने वाले भाई गुरदास गुरु की आज्ञा को शिरोधार्य कर इस पुण्य कार्य में सहर्ष जुट गये। "वाणी को संकलित करने का कार्य सच-मुच बहुत महान था और उसे पूर्ण करने हेतु भाई गुरदास का चुनाव भी सराहनीय था। इससे भाई गुरदास के गौरव में बहुत वृद्धि हुई।"[42] यह कार्य लगभग एक वर्ष के अन्तर्गत सम्पूर्ण हो गया। "अन्त में सम्मान और सजधज के साथ संवत् 1661 भादों सुदी एकम् की सुबह (सन् 1604) को प्रथम बार बीड़ का प्रकाश श्री हरमन्दिर साहिब में हुआ। सबसे पहले मुख्य ग्रन्थी बाबा बुड्ढा जी नियत हुए।"[43] जिन दिनों यह बीड़ तैयार हो रही थी उन दिनों भाई गुरदास और गुरु अर्जुन देव अमृतसर के दक्षिण दिशा के निर्जन प्रान्त में रामसर के स्थान पर बैठ गए। तम्बू लगाकर जंगल में मंगल मनाया। सभी शिष्यों को वहां जाने की मनाही कर दी गई। सभी भक्तों की वाणी जो गुरुमत सिद्धान्तों के अनुकूल थी उसमें दर्ज की गई। कहा जाता है कि एक बार गुरु जी ने भाई गुरदास को कहा कि आप भी अपनी वाणी ले आओ ताकि अन्य भक्तों के साथ वह भी दर्ज हो जाए। "तब भाई साहिब ने प्रार्थना की कि मैं तो आप का और आप के प्रिय भक्तों का दास हूं। दास की वाणी साहिब की बराबरी में नहीं बैठ सकती। श्री गुरु जी प्रसन्न हुए और वर दिया कि तुम्हारी वाणी गुरवाणी की कुंजी होगी।"[44] वस्तुतः जो गुरमत सिद्धान्तों की व्याख्या भाई गुरदास ने अपनी वाणी में की है वह अन्यत्र दुर्लभ है। निश्चय ही आप सम्पादन (संकलन) कला, गुरुमत ज्ञान और विद्वता की त्रिवेणी थे।

भाई गुरदास :

सिक्ख मनीषी और दार्शनिक के रूप में

भाई गुरदास सिक्ख धर्म के एक अनन्य अनुयायी सच्चे गुरु सेवक, अनुपम शिष्य, आदर्श प्रचारक व निष्काम भक्त थे। इतना ही नहीं आप एक आध्यात्मिक निष्ठावान, कवि, सम्पादक, व्याख्याता और उपदेशक भी थे। आपकी प्रतिभा देख कर आश्चर्य होता है कि आप इतना सब कैसे करते होंगे।

---

42. रत्न सिंह जग्गी, भाई गुरदास जीवनी ते रचना (पटियाला : पंजाबी यूनी, 1974), पृ. 18
43. सरदूल सिंह, भाई गुरदास (पटियाला, भोषा बिभाग, पंजाब, 1967) पृ. 22
44. भाई वीर सिंह, भाई गुरदास, दूसरा स्कंध (अमृतसर खालसा समाचार, 1980), पृ. 44

दो ही बातें स्पष्ट रुप से सामने आती हैं आपकी विद्वता का प्रभाव और गुरु चरणों के प्रति अटूट श्रद्धा। सुरिन्द्र सिंह कोहली के अनुसार "आप के अन्दर गुरु के लिए अटूट और असीम श्रद्धा थी, आपका साध संग में दृढ़ विश्वास था। गुरुबाणी आपके लिए अद्वितीय प्रकाश का कोश थी। गहरे विश्वासों ने काव्य रचना के लिए आपको प्रेरणा दी।"[45] देश देशान्तरों के भ्रमण से आप ने बहुत कुछ सीखा। आप ने अनेक स्थानों पर विद्वानों से संवाद करके अनेक बातों का खण्डन मण्डन किया। आप का ज्ञान बहुत कुछ अनुभावाधारित भी है। काशी में रह कर आप ने संस्कृत भाषा सीखी और उसके साहित्य का ज्ञान अर्जन किया। आगरा में रह कर ब्रज भाषा सीखी और काव्य रचना भी ब्रजभाषा में की। "सतगुरु जी आप समय पर इनकी कविता सुनते, टीका टिप्पणी करते तथा और ऊंचाई की रंगत देते।"[46] आपकी रचनाओं को देख कर ऐसा लगता है कि आप नियमित अध्ययन कर चुके थे मगर ऐसा नहीं था बचपन में इतनी उच्च शिक्षा प्राप्त करना असम्भव होता है जिसमें रहस्यवादी, अध्यात्मिक, दार्शनिक और साहित्यिक गहनता का आभास हो सके। "भाई गुरदास जन्मसिद्ध कवि थे। बुद्धि अपूर्व थी, प्रकाश अनुपम था। आप भी उन उच्च दृष्टियों में से एक थे जिनका समय अनुसार दुनियां में किसी न किसी स्थान पर प्रकाश होता रहता है जो विद्या की अधिष्ठाता होती है।"[47] भाई गुरदास इन्हीं में से थे। आप आरम्भ से ही गुरु चरणों के सेवक रहे तभी से लग्न लगी जो आजीवन टूट न सकी। विद्या प्राप्त करना एक बहाना मात्र था। विद्या तो आपको अमर रुप में मिल चुकी थी। आपकी विद्वता आपकी रचनाओं में स्पष्ट झलकती है। आपकी इन्हीं रचनाओं के आधार पर आपकी विद्वता का अनुमान लगाते हुए यह कहा जा सकता है कि "गुरु घर में भाई साहिब का वही पद है जो हिन्दू धर्म में वेद व्यास और श्री शंकराचार्य तथा ईसाई धर्म में सेंटपाल का है।"[48] आपकी रचनाएं पूर्णतः गुरुमत सिद्धान्तों की व्याख्या करती है। अगर आपके कवित्त सवैये आपकी यथार्थ अनुभूति के आधार पर सत्य के अधिक निकट कहे जा सकते हैं तो आपकी

---

45. तारन सिंह, भाई गुरदास, सम्पादक सुरिन्द्र सिंह कोहली, पंजाब यूनीवर्सिटी, पंजाबी साहित दा इतिहास (चण्डीगढ़ पंजाब यूनी., 1973), पृ. 342

46. सरदूल सिंह, भाई गुरदास (पटियाला : भाषा विभाग, 1961), पृ. 22-23

47. सरदूल सिंह, भाई गुरदास (पटियाला : भाषा विभाग, 1961), पृ. 5

48. भाई गुरदास, कवित्त सवैये-भाई गुरदास, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी, (अमृतसर, 1956), पृ. प्राक्कथन (ग)

धारों को गुरुवाणी का भाष्य होने का गौरव प्राप्त है। "इनकी बाणी के अन्दर गुरु उपमा, सिक्खी सिदक, सिक्ख फिलासफी का विचार कूट-कूट कर भरा हुआ है।"[49] आपकी रचनाएं गुरुमत काव्य के अति निक्ट हो गयी है। आपने अपनी रचनाओं में गुरुमत के सिद्धान्तों का मुक्त कण्ठ से प्रचार एवं प्रसार किया। साहित्य के क्षेत्र में भी इनकी रचनाएं कम महत्वपूर्ण नहीं हैं। गुरुवाणी की व्याख्या होने के कारण आध्यात्मिक पुट अधिक हैं। मगर वैयक्तिकता, मौलिकता व आधुनिकता की भी पूर्ण विद्यमानता है। सर्वत्र यथार्थता फूट फूट कर बाहर आती है।

---

49. भाई गुरदास, कबित्त सवैये सटीक, भाई गुरदास जी (अमृतसर, जवाहर सिंह कृपाल सिंह, 1976), पृ. भूमिका।

कवित्त सवैये-भाई गुरदास

मंगलाचरण

सोरठा : आदि पुरख आदेसु, ओनम स्री सतिगुरचरन ।।
घट घट का परवेस, एक अनेक बिबेक ससि ।।

दोहरा : ओनम श्री सतिगुर चरन, आदि पुरख आदेस ।
एक अनेक बिबेक ससि, घट घट का परवेस ।।

छन्तु : घट घट का परवेस सेस पहि कहत न आवै,
नेति नेति कहि नेति बेदु बंदी जनु गावै ।
आदि मधि अरु अंति सुते हुत है पुनि होनम,
आदि पुरखु आदेस चरन श्री सतिगुर ओनम ।। 1 ।।

सोरठा : अबिगति अलख अभेव, अगम अपार अनंत गुर ।
सतिगुर नानक देव, पारब्रहम पूरन ब्रहम ।।

दोहरा : अगम अपार अनंतगुर, अबिगति अलख अभेव ।
पारब्रहम पूरन ब्रहम, सतिगुर नानक देव ।।

छन्तु : सतिगुर नानक देव, देव देवी सब धियावहि ।
नाद बाद बिसमादु राग रागनि गुन गावहि ।
सुन्न समाधि अराधि साध संगति सं परंपर ।
अबिगत अलख अभेव अगम अगमति अपरंपर ।। 2 ।।

सोरठा : जगमग जोति सरुप, परम जोति मिलि जोत महि ।
अद्भुत अतहि अनूप, परम ततु ततहि मिलिओ ।।

ोहरा : परम जोति मिलि जोति, महि, जगमग जोति सरुप ।
परम ततु ततति मिलिओ, अद्भुत अतति अनूप ॥

छन्तु : अद्भुत अतति अनूप रुप पारस कै पारस ।
गुरु अंगद मिलि अंग संग मिलि संग उधारस ॥
अकल कला भरपूर सूत्रि गति ओति पोति महि ।
जगमग जोति सरुप जोति मिलि जोति जोति महि ॥ 3 ॥

सोरठा : अम्रित द्रिसटि निवास, अम्रित बचन अनहद सबद ।
सतिगुर अमर प्रगास, मिलि अम्रित अम्रित भए ॥

दोहरा : अंम्रित बचन अनहद सबद, अंम्रित द्रिसटि निवास ।
मिलि अंम्रित अंम्रित भए, सतिगुर अमर प्रकास ॥

छन्तु : सतिगुर अमर प्रगास तास चरनाम्रित पावै ।
काम नाम निहकाम परम पद सहज सभावै ॥
गुरमुख संधि सुगन्धि साध संगत निज आसन ।
अम्रित द्रिसटि निवास, अम्रित मुख्य बचन प्रगासन ॥ 4 ॥

सोरठा : ब्रहमासन बिस्राम, गुरभए, गुरमुख संधि मिलि ।
गुरमुखि रमताराम राम नाम गुर मुख भए ॥

दोहरा : गुर भए गुरमुखि संधि मिलि ब्रहमासन बिस्राम ।
राम नाम गुरमुखि भए गुरमुखि रमता राम ॥

छन्तु : गुरमुख रमता राम नाम गुरमुखि प्रगटाइयो ।
सबद सुरति गुर गिआन धिआन गुरु गुरु कहाइयो ॥
दीप जोति मिलि दीप जोति जगमग अंतरि उर ।
गुरमुखि रमता राम संधि गुरमुखि मिलि भए गुर ॥ 5 ॥

सोरठा : आदि अंति बिसमाद फल द्रम गुर सिख संधि गति,
आदि परम परमाद, अंत अनंत न जानीऐ ॥

दोहरा : फल द्रम गुर सिक्ख संधि गति आदि अंति बिसमादि ।
अंत अनंत न जानीऐ, आदि परम परमादि ॥

छन्तु : आदि परम परमाद नाद मिलि नाद सबद धुनि ।
सलिलहि सलिल समाई नाम सरिता सागर सुनि ॥
नरपति सुत नृप होत जोत गुरमुख गुन गरजन ।
राम नाम परसादि भए गुरते गुर अरजन ॥ 6 ॥

सोरठा : पूरन् ब्रह्मबिबेक, आपा आप प्रगास होइ ।
नाम दोइ प्रभ एक, गुरु गोबिन्द बखानिअै ।।
दोहरा : आपा आप प्रगास हुई, पूरन ब्रहम बिबेक,
गुरु गोबिन्द बखानिअै, नाम दोइ प्रभु एक ।
छन्तु : नाम दोइ प्रभु एक टेक गुरमुखि ठहराई ।।
आदि भए गुरु नाम दुतीअ गोबिन्द बड़ाई ।।
हरि गुर हरि गोबिन्द रचन रच थाप उथापन ।
पूरन ब्रहम बिबेक प्रगट हुई आपा आपन ।। 7 ।।

सोरठा : बिसमादहि बिसमाद, अमचरजहि असचरजगति,
आदि पुरख परमादि, अद्भुत भए ।
दोहरा : असचरजहि असचरज गति, विसमादहि बिसमाद,
अद्भुत परमद्भुत भए, आदि पुरख परमाद ।
छन्तु : आदि पुरख परमादि स्वाद रसि गंधि अगोचर ।
द्रिसटि दरस असपरस सुरति मति सबद मनोचर ।
लोग बेद गति ग्यान लखे नहीं अलख अभेवा ।
नेति नेति कर नमो नमो नमो नम सतगुर देवा ।। 8 ।।

दरसन देखत ही सुध की न सुध रही,
बुध की न बुध रही, मति में मति है ।
सुरति में न सुरत औ ध्यान मैं न रह्यो,
ग्यान मैं न ग्यान रह्यो गत मैं न गत है ।
धीरज को धीरज गरब को गरब गयो,
रति में न रत रही, पति रति पति है ।
अद्भुत परमद भुत बिसमै बिसम,
असचरजै असचरज अति अति है ॥ 9 ॥

दसम सथान के समान कौन भौन कहौं,
गुरमुखि पावै सु तौ अनत न पावई ।
उनमनी जोति पटन्तर दीजै कौन जोति,
दया कै दिखावै जाही ताही बन आवई ।
अनहद नाद समसर नाद बाद कौन,
श्री गुरु सुनावै जांहि सोई लिव लावई ।
निझर अपार धार तुल न अंम्रित रस,
अपिऊ पीआवै जाहि ताहि मैं समावई ॥ 10 ॥

गुरसिख सन्धि मिले बीस इक ईस ईस,
इत ते उलंघ उत जाइ ठहिरावई ।
चरम द्रिषटि मूंद पेखै दिब द्रिषटि कै,
जग मग जोति उनमनी सुध पावई ।
सुरति संकोचत ही बज्जर कपाट खोल,
नाद बाद परै अनहत लिव लावई ॥
बचन बिसरजित अनरस रहित ह्वै,
निझर अपार धार अपिऊ पीआवई ॥ 11 ॥

जौ लौ अन रस बस तौ लौ नहीं प्रेम रस,
जौ लौ आन ध्यान आप आप नहीं देखीऐ ॥
जौ लौ आन ग्यान तौ लौ न अध्यातम ग्यान,
जौ लौ नाद बाद न अनाहद बिसेखीऐ ।
जौ लौ अहंबुधि सुध सोइ न अन्तरि गति,
जौ लौ न लखावै तौ लौ अलख न लेखीऐ ।
सति रुप सति नामु सतिगुरु ग्यान ध्यान,
ऐक ही अनेक मेक ऐक ऐक भेखीऐ ॥ 12 ॥

नाना मिष्टान पान बहु बिंजनादि स्वाद,
सीचत सरब रस रसना कहाई है ।
द्रिमटि दरस अरु सबदु सुरति लिव,
ग्यान ध्यान सिमरन अमित बडाई है ।
सकल सुरति असपरस औ राग नाद,
बुध-बल बचन बिबेक टेक पाई है ।। 13 ।।
गुरमति सति नामु सिम्रत सफल होइ,
बोलत मधुर धुनि सुन सुखदाई ॥ 13 ॥

प्रेम रस बस ह्वै पतंग संगत न जानै,
बिरह् बिछोह् मीन ह्वै न भर जाने है ।
दरस धिआन जोति में न ह्वै जोति स्वरुप,
चरन बिमुख होइ प्रान ठहिराने है ।
मिल बिछुरत गति प्रेम न बिरह् जानी,
मीन और पतंग मोहि देखत लजाने हैं ।
मानस जनम ध्रिग धन्न है त्रिगद जोनि,
कपट सनेह् देह् नरक न माने हैं ॥ 14 ॥

गुरमुख सुखफल स्वाद बिसमाद अति,
अकथ कथा बिनोद कहित न आवई ।
गुरमुख सुखफल गन्ध परमद्भुत,
सीतल कोमल परसत बन आवई ।
गुरमुख सुखफल महिमा अगाध बोध,
गुरसिख सन्धि मिले अलख लखावई ।
गुरमुखि सुखफल अंग अंग कोटि सोभा,
मया के दिखावै सो तो अनत न धावई ।। 15 ।।

उलट पवन मन मीन की चपल गति,
सतिगुर परचे परम पद पाए हैं ।
सूर-सरु सोख पोख सोम सर पूरन है,
बन्धनदै म्रित सर अपिअ पीआए हैं ।
अजरहि जार मार अमरहि भ्रान्ति छोड,
असथिर कन्ध हन्स अनत न धाए हैं ।
आदै आदि नादै नाद सलिलै सलिल मिल,
ब्रह्मै ब्रह्म मिल सहज समाए हैं ।। 16 ।।

चिरंकाल मानस जनम निरमोल पाए,
सफल जनम गुर चरन सरन कै ।
लोचन अमोल गुर दरस अमोल देखे,
स्रवन अमोल गुर बचन धरन कै !
नासका अमोल चरनार बिन्द बासना कै,
रसना अमोल गुर मन्त्र सिमरन कै !
हसत अमोल गुरदेव सेव सफल कै,
चरन अमोल परदछना करन कै ॥ 17 ॥

दरस धिआन दिब्ब द्रिसटि प्रगास भए,
करुणा कटाछ दिब्ब देह परवान है ।
सबद सुरति लिव बज्जर कपाट खुले,
प्रेम रस रसन कै अम्रित निधान है ।
चरन कमल मकरन्द बासना सुबास हसत,
पूजा प्रनाम सफल सुग्यान है ।
अंग अंग बिसम स्रबन्ग मैं समाइ भए,
मन मनसा थकत ब्रहम धिआन है ॥ 18 ॥

गुरमुख सुखफल अति असचरज मै,
हेरत हिराने आन ध्यान बिसराने हैं ।
गुरमुख सुखफल गन्ध रस विसम ह्वै,
अनरस बासना बिलास न हिताने हैं ।
गुरमुख सुखफल अद्भुत असथान,
देख त्रित मण्डल असथल न लुभाने हैं ।
गुरमुख सुखफल संगत मिलाप देख,
आन ग्यान ध्यान सब निरस कर जाने हैं ॥ 19 ॥

गुरमुख सुखफल दया कै दिखावै जाहि,
ताहि आन रस रंग देखे नाहि भावई ।
गुरमुख सुखफल मया कै चखावै जाहि,
ताहि अनरस नहीं रसना हितावई ।
गुरमुख सुखफल अगहु गहावै जाहि,
सरब निधान परसन कौ न धावई ।
गुरमुख सुखफल अलख लखावै जाहि,
अकथ कथा बिनोद वाही बन आवई ॥ 20 ॥

सिध नाथ जोगी ध्यान मै न आन सकै,
वेद पाठ कर ब्रह्मादिक न जाने हैं।
अध्यातम ग्यान कै न सिव सनकादि पाए,
जग्ग भोग मैं न इन्द्रादिक पहिचाने हैं।
नाम सिमरन कै सेखादिक न संख्या जानी,
ब्रह्मचरज कै कै नारदादिक हिराने हैं।
नान अवतार कै अपार कौ न पार पायो,
पूरन ब्रह्म गुर सिख मन माने हैं ॥ 21 ॥

गुर उपदेस रिदै निम्रित निवास जास,
ध्यान गुरु मुरति कै पूरन ब्रह्म है।
गुरमुखि सबद सुरति उनमान ग्यान,
सहज सुभाइ सरबातम के सम है।
हौ मै त्याग त्यागी बिसमाद कै बैरागी भए,
मन उनमानि लिव गंमता अगम है।
सूखम सथूल मूल एक ही अनेक मेक,
जीवन मुकति नमो नमो नमो नम है ॥ 22 ॥

दरसन जोति न जोती स्वरूप ह्वै पतंग,
सबद सुरति म्रिग जुगति न जाने है।
चरन कमल मकरन्द मधुकर गति,
बिरह बियोग ह्वै न मीन मर जाने हैं।
ऐकऐक न टरत है त्रिगद जोति,
चातुर चतुर गुन होइ न हिराने है।
पाहन कठोर सतिगुर सुख सागर मैं,
सुन राम नाम जम नरक लजाने हैं ॥ 23 ॥

गुरमति सतिकार चंचल अचल भए,
महामल मूत्रधारी निरमल कीने है।
गुरमत सतिकार जोनि कै अजोनि भए,
काल से अकाल कै अमर पद दीने हैं।
गुरमति सति कर हौमे खोइ होइ रेनु,
त्रिकुट त्रिबेनी पार आपा आप चीने हैं।
गुरमति सति कर बरन अबरन भए,
मैं भ्रम निवार डार निरभै कै लीने हैं ॥ 24 ॥

गुरमति सतिकर अधम असाध साध,
गुरमति सतिकर जन्त सन्त नाम है।
गुरमति सतिकर अबिबेकी ह्वै बिबेकी,
गुरमति सतिकर नाम निहकाम है।
गुरमति सतिकर अग्यानी ब्रहम ग्यानी,
गुरमति सतिकर सहज बिस्राम है।
गुरमति सतिकर जीवन मुक्त भए,
गुरमति सतिकर निहचल धाम है ॥ 25 ॥

गुरमति सतिकर बैर निरबैर भए,
पूरन ब्रहम गुर सरब मैं जाने हैं।
गुरमति सतिकर भेद निरभेद भए,
दुबिधा बिधा निरबेध खेध बिनसाने हैं।
गुरमति सतिकर बाइस परम हंस,
ग्यान अंस बंस निरगन्ध ठाने हैं।
गुरमति सतिकर करम भरम खोइ,
आसा मैं निरास ह्वै बिस्वास उर आने हैं ॥ 26 ॥

गुरमति सतिकर सिम्बल सफल भए,
गुरमति सतिकर बांस मैं सुगन्ध है।
गुरमति सतिकर कंचन मनूर भए,
गुरमति सतिकर परखत अन्ध है।
गुरमति सतिकर काल कूट अंम्रित ह्वै,
काल मै अकाल भए असथिर कन्ध है।
गुरमति सतिकर जीवन मुक्ति भए,
माया मैं उदास बांस बन्ध निरबन्ध है ॥ 27 ॥

सबद सुरति लिव गुरसिख सन्ध मिले,
ससि घर सूर पूर निज घर आए हैं।
उलट पवन मन मीन त्रिबैनी प्रसंग,
त्रिकुटी उलंघ सुख सागर समाए हैं।
त्रिगुनी अतीत चतरथ पद गंमता कै,
निझर अपार धार अमीअ चुआए हैं।
चकई चकोर मोर चात्रिक अनन्द मई,
कदली कमल सो बिमल जल छाए हैं ॥ 28 ॥

सबद सुरत लिव गुरसिख सन्ध मिले,
पंच परपंच मिटे पंच परधारने हैं ।
भागे भै भरम भेद काल औ करम खेद,
लोग बेद उलंघ उदोत गुर ग्याने हैं ।
माया औ ब्रह्म समदसम दुआर पार,
अनहद रुण झुण बाजत नीसाने हैं ।
उनमन मगन गगन जगमग जोत,
अपर अपार हार परम निधाने हैं ॥ 29 ॥

ग्रिह महि ग्रिहसती थे पायो न सहज घर,
बन बन वास न उदास फल पायो है ।
पढ़ पढ़ पंडत न अकथ अकथा बिचारी,
सिंघासन कै न निज आसन द्रिड़ायो हैं ।
जोग ध्यान धारन कै नाथन न देखे नाथ,
जग भोग पूजा कै न अगहु गहायो हैं ।
देवी देव सेव कै न अहंमेव टेवटारी,
अलख अभेव गुरदेव समझायो है ॥ 30 ॥

त्रिगुन अतीत चतुरथ गन गमिता कै,
पंच तत उलंघ परम तत बासी है ।
खट रस त्याग प्रेम रस को प्राप्त भए,
पूर सूर सपत अनहद अभ्यासी है ।
असट सिंधात भेद नाथन कै नाथ भए,
दसम सथल सुख सागर बिलासी है ।
उनमन मगन गगन ह्वै निझर झरै,
सहज समाधि गुर परचै उदासी है ॥ 31 ॥

दुविधा निवार अबरन ह्वै बरन बिखै,
पांच परपंच न दरस अदरस है ।
परम पारस गुर परस पारस भए,
कनिक अनिक धात आपा अपरस है ।
नव द्वार पार ब्रहमासन सिंहासन मैं,
निझर झरन रुचित न अनरस है ।
गुरसिख सन्धि मिले बीस इक ईस ईस,
अनहद गद गद अभर भरस है ॥ 32 ॥

चरण कमल भज कमल प्रगास भए,
दरस दरस सम दरस दिखाए हैं ।
सबद सुरति अ्रनहद लिवलीन भए,
उनमन मगन गगन पुर छाए है ।
प्रेम रस बस होइ बिसम बिदेह भए,
अ्रति अ्रसचरज मै हेरत हिराए है ।
गुरमुखि सुखफल महिमा अ्रगाध बोध,
अ्रकथ कथा बिनोद कहत न आ्राए है ।। 33 ।।

दुरमति मेट गुरमति हिरदै प्रगासी,
खोइ कै अ्रग्यान जाने बहमा गयाने है ।
दरस धिअ्रान आ्रान ध्यान बिसिमरन के,
सबद सुरति मोनि ब्रत परवाने हैं ।
प्रेम रस रसिक ह्वै अ्रनरस रहित ह्वै,
जोति में जोति सरुप सोहं सुरताने हैं ।
गुरसिख सन्धि मिले बीस इकईस ईस,
पूरन बिबेक एक टेक हियै आ्राने है ।। 34 ।।

रोम रोम कोटि ब्रह्माण्ड को निवास जास,
मानस औतार धार दरस दिखाए हैं ।
जां के ओंकार के अकार है नाना प्रकार,
श्री मुख सबद गुर सिखन सुनाए हैं ।
जग्ग भोग नईवेद जगत भगत जाहिं,
असन बसन गुरु सिखन लडाए हैं ।
निगम सेखादिक कथित नेति नेति कर,
पूरन ब्रह्म गुर सिखन लखाएं हैं ॥ 35 ॥

निरगुन सरगुन कै अलख अबिगति रूप,
पूरन ब्रहम गुरु रुप प्रगटाए हैं ।
सरगुन श्री गुरु दरस कै धिआन रूप,
अकल अकाल गुरु सिखन दिखाए हैं ।
निरगुन श्री गुरु सबद अनहद धुनि,
सबद बेदी गुरु-सिखन सुनाएं हैं ।
चरन कमल मकरंद निहकाम धाम,
गुरसिख मधुकर गति लपटाएं हैं ॥ 36 ॥

पूरन ब्रहम गुरु बेल हवै चंबेली गति,
मूल साखा पत्र कर बिबिध बिथार है ।
गुरसिख पुहप सुबास निज रूप तां मैं,
प्रगट हवै करत संसार को उधार है ।
तिल मिल बासना सुबास को निवास कर,
आपा खोइ होइ है फुलेल महिकार है ।
गुरमुखि मारग मैं पतित पुनीत रीति,
संसारी हवै निरंकारी पर उपकार है ॥ 37 ॥

पूरन ब्रहम गुर बिरख बिथार धार,
मूल कंद साखा पत्र अनिक प्रकार है ।
तां मैं निज-रुप गुरसिख फल को प्रगास,
बासना सुबास औ स्वाद उपकार है ।
चरन कमल मकरंद रस रसिक हवै,
चाखै चरणाम्रित संसार को उधार है ।
गुरमुखि मारग महातम अकथ कथा,
नेति नेति नेति नमो नमो नमसकार है ॥ 38 ॥

बरन बरन बहु बरन गोबंस जैसे,
एक ही बरन दूहे दूध जग जानीग्रै ।
ग्रनिक प्रकार फल फूल कै बनासपती,
एकै रूप ग्रगन सरब में समानीग्रै ।
चतुर बरन पान चूना ग्रौ सुपारी काथा,
ग्रापा खोइ मिलत ग्रनूप रूप ठानीग्रै ।
लोगन मैं लोगाचार गुरमुख एकंकार,
सब्रद सुरत उनमन उनमानीग्रै ॥ 39 ॥

सीचत सलल बहु बरन बनासपती,
चंदन सुबास एकै चंदन बखानीग्रैं ।
पर्वत बिखै उतपत ह्वै ग्रसट धात,
पारस परस एकै कंचन कै जानीग्रै ।
निस ग्रंधकार तारा मंडल चमतकार,
दिन दिनकर जोत कएै परवानीग्रै ।
लोगन मैं लोकाचार गुरमुख एकंकार,
सबद सुरत उनमन उनमानीग्रै ॥ 40 ॥

जैसे कुल बधू गुरजन मैं घुंघट पट,
सिहजा संजोग समै ग्रंतर न पीग्र सै ।
जैसे मणि ग्रच्छत कुटंब हीसहत ग्रहि,
बंकत न सूधों बिल पैसत ह्वै जीग्र सै ।
मात पिता ग्रच्छत न बोलै सुत बनित सै,
पाछे कै दै सरबंस मोह सुत तीग्र सै ।
लोगन मैं लोकाचार गुरमुख एकंकार,
सबद सुरत उनमन मन हीग्र सै ॥ 41 ॥

जोग बिखै भोग ग्ररु भोग बिखै जोग जत,
गुर मुख पंथ जोग भोग सै ग्रतीत है ।
ग्यान बिखै ध्यान ग्ररु ध्यान बिखै बेधे ग्यान,
गुरमत गत ग्यान ध्यान कै ग्रजीत हैं ।
प्रेम कै भगत ग्रर भगत कै प्रेम नेम,
ग्रलख भगत प्रेम गुरमुख रीत है ।
निरगुन सरगुन बिखै बिसम बिस्वास रिदै,
बिसम बिस्वास पार पूरन प्रतीत है ॥ 42 ॥

किंचत कटाच्छ दिब देह दिब दृष्टि होइ,
दिब्ब जोत कै धिग्रान दिब द्रिशटांत कै।
सबद बिबेक टेक प्रगट ह्वै गुरमत,
अनहद गंम उनमनी कै मतांत कै।
ग्यान ध्यान करनी कै उपजत प्रेम रस,
गुरमुख सुख प्रेम नेम निज ऋांत कै।
चरन कमल दल संपट मधुप गत,
सहज समाध मध पान प्रान सांत कै ॥ 43 ॥

सूआ गहि नलनी कौ उलट गहावै आप,
हाथ से छडाए छाडै पर बस आवई।
तैसे बारंबार टेर टेर कहो पठो पठो,
आपनो ही नाउं सीख आप ही पढ़ावई।
रघुबंसी राम नाम गाल जामनी सु भाखा,
संगत सुभाव गत बुध प्रगटावई।
तैसे गुर चरन सरन साध संग मिले,
आप आप चीने गुर मुख पावई ॥ 44 ॥

द्रिसटि महि दरस दरस महि द्रिसटि द्रिग
द्रिसटि दरस अदरस गुर ध्यान है।
सबद महि सुरत सुरत महि सबद धुन,
सबद सुरत अगमिति गुरु ग्यान है।
ग्यान ध्यान करनी कै प्रगटत प्रेम रस,
गुरमति गति प्रेम नेम निरबान है।
पिंड प्रान प्रानपति बीस को बरतमान,
गुरमुखि सुख इकईस मो निधान है ॥ 45 ॥

मन बच क्रम ह्वै इकत्र छत्रपति भए,
सहज संघासण कै निहचल राज है।
सत्य औ संतोख दया धरम अरथ मेल,
पंच परवान किये गुरमत साज है।
सकल पदारथ औ सरब निधान सभा,
शिव नगरी सुबास कोट छबि छाज है।
राजनीति नीत प्रीत प्रजा कै सुखैन सुख,
पूरन मनोरथ सफल होत काज है ॥ 46 ॥

चरन सरन मन बच क्रम ह्वै इकत्र,
गमिता त्रिकाल त्रिभवण सुध पाई है।
सहज समाध साध अगम अगाध कथा,
अंतर दिसंतर निरंतरी जताई है।
खंड ब्रह्मंड पिंड प्रान प्रानपति गति,
गुर संधि मिले सोहं लिव लाई है।
दरपन दरस औ जंत्र धुनि जंत्री बिध,
ओत पोत सूत एकै दुबिधा मिटाई है ।। 47 ।।

चरन सरन मन बच क्रम ह्वै इकत्र,
तन त्रिभुवन गति अलख लखाई हु।
मन बच करम करम मन बचन कै,
बचन करम मन उनमनी छाई है।
ग्यानी ध्यानी करनी ज्यों गुर महुआ कमाद,
निझर अपार धार भाठी को चुआई है।
प्रेम रस अंम्रित निधान पान पूरन ह्वै,
गुरमुखि संधि मिले सहजि समाई है ।। 48 ।।

बिबिध बिरख बली फल फूल मूल साखा,
रचन चरित्र चित्र अनिक प्रकार है।
बरन बरन फल बहुबिध स्वाद रस,
बरन बरन फूल बासना बिथार है।
बरन बरन मूल बरन बरन साखा,
बरन बरन पत्र सगुन अचार है।
बिबिध बनासपति अंतरि अगन जैसे,
सकल संसार बिखै एकै एकंकार है ।। 49 ।।

गुरसिख संधि मिले द्रिसटि दरस लिव,
गुरमुखि ब्रहमग्यान साध लिव लाई है।
गुरसिख संधि मिले सबद सुरति लिव,
गुरमुख ब्रहम ग्यान ध्यान सुधि पाई है।
गुरसिख संधि मिले स्वामी सेव सेवक ह्वै,
गुरमुख निहकाम करनी कमाई है।
गुरसिख संधि मिले करनी सु ग्यान ध्यान,
गुरमुखि प्रेम नेम सहज समाई है ।। 50 ।।

गुरमुख संध मिले ब्रहम ग्यान लिव,
एकंकार कै अकार अनिक प्रकार है।
गुरमुखि संधि मिले ब्रहम ध्यान लिव,
निरंकार ओअंकार बिबिध बिथार है।
गुरसिख संधि मिले स्वामी सेव सेवक ह्वै,
ब्रहम बिबेक प्रेम भगति अचार है।
गुरमुख संध मिले परमद्भुत गति,
नेति नेति नमो नमो नमसकार है ॥ 51 ॥

गुरमुख मन बच करम इकत्र भए,
अंग अंग बिसम स्रबंग मै समाए हैं।
प्रेम रस अमृत निधान पान कै मदोन,
रसना थकत भई कहित न आए हैं।
जगमग प्रेम जोति अति असचरज मै,
लोचन चकित भए हेरत हिराए हैं।
राग नाद बांदि बिसमादि प्रेम धुनि सुन,
श्रवन सुरति बिलै बिलै बिलाए हैं ॥ 52 ॥

गुरमुख मन बच करम इकत्र भए,
पूरन परम-पद प्रेम प्रगटाएं हैं।
लोचन में द्रिस्टि दरस रस गंधि संधि,
श्रवन सबद सुरति गंध रस पाए हैं।
रसना में रस गंध सबद सुरत मेल,
नाम बास रस श्रुति सबद लखाए हैं।
रोम रोम रसना श्रवण द्रिग नासा कोटि,
खंड ब्रहमंड पिंड प्रान में जताए हैं ॥ 53 ॥

पूरन ब्रहम आप आपन ही आप साज,
आपन रचिओ है नांउ आप ही बीचार कै।
आदि गुरु दुतीअ गोबिंद नाम कै कहाइओ,
गुरमुख रचना अकार ओअंकार कै।
गुरमुखि नाद बेद गुरमुखि पावै भेद,
गुरमुखि लीलाधारी अनिक औतार कै।
गुरु गोबिन्द औ गोबिन्द गुरु एक मेक,
ओत-पोत सूत्र-गति अंबर उचार कै ॥ 54 ॥

जैसे बीज बोए होत बिरख बिथार, गुरु
पूरन ब्रह्म निरंकार एकंकार है।
जैसे एक बिरख से होत हैं अनेक फल,
तैसे गुरु सिख साध संगति अकार है।
दरस धिआन गुरु सबद गिआन गुरु,
निरगुन सरगुन ब्रह्म बीचार है।
ग्यान ध्यान ब्रह्म सथान सावधान, साध
संगति प्रसंग प्रेम-भगति उधार है ॥ 55 ॥

फल मूल मूल फल मूल फल फल मूल,
आदि परमादि अरु अंत कै अनंत है।
पित सुत सुत पित सुत पित पित सुत,
उतपति गति अति गूढ़ मूल मंत है।
पथिक बसेरा कौ निबेरा ज्यों निकसबैठ,
इत उत बार पार सरित सिधंत है।
प्रन ब्रह्म गुरु गोबिन्द गोबिन्द गुरु,
अबिगति गति सिमरत सिख संत है ॥ 56 ॥

गुरमुख पंथ गहे जम पुर पंथ मेटै,
गुर सिख संग पंच दूत संग त्यागे हैं।
चरन सरन गुरु करम-भरम खोए,
दरस अकाल काल कंटक भै भागे हैं।
गुरु उपदेस वेस बन्जर कपट खुले,
सबद सुरति मूरछत मन जागे हैं।
किंचत कटाछ कृपा सरब निधान पाए,
जीवन मुकति गुरु ग्यान लिव लागे हैं ॥ 57 ॥

गुरमुखि पंथ सुख, चाहत सकल पंथ,
सकल दरस, गुर दरस अधीन है।
सुर सुरसरि गुर चरन सरन चहै,
बेद ब्रह्मादिक सबद लिवलीन हैं।
सरब गिआम गुरु ग्यान अवगाहन में,
सरब निधान गुरु कृपा जल मीन है।
जोगी जोग जुगति में भोगी भोग भुगति में,
गुरमुख निज पद कुल अकुलीन है ॥ 58 ॥

उलट पवन मन मीन की चपल गति,
सुखसना संगम कै ब्रहम सथान है ।
सागर सलिल गहि गगन घटा घमंड,
उनमन मगन लगन गुरु ग्यान है ।
जोति मै जोती सरुप दामिनी चमतकार,
गरजत अनहद सबद नीसान है ।
निझर अपार धार बरखा अम्रित जल,
सेवक सकल फल सरब निधान है ।। 59 ।।

लोगन में लोगाचार बेदन में बेदाचार,
लोग बेद बीस इक ईस गुर ग्यान है ।
जोग में न जोग भोग भोग में न खान पान,
जोग भोगातीत उनमन उनमान है ।
द्रिसटि दरस ध्यान सबद सुरत ग्यान,
ग्यान ध्यान लख प्रेम परम निधान है ।
मन बच क्रम श्रम साधनाध्यात्म क्रम,
गुरमुख सुखसरबोत्तम निधान है ।। 60 ।।

सबद सुरत लिव धावत राखै,
निहचल मति मन उनमनभीन है ।
सागर लहर गति आतम तरंग रंग,
परमद्भुत परमारथ प्रबीन है ।
गुर उपदेस निसमोलक रतन धन,
परम निधान गुर ग्यान लिवलीन है ।
सबद सुरत लिव गुरसिख संध मिले
सोहं हंसो एकमेक आपा आप चीन है ।। 61 ।।

सबद सुरत अवगाहन बिमल मति,
सबद सुरत गुर ग्यान को प्रकास है ।
सबद सुरत सम द्रिसटि कै दिब जोत,
सबद सुरत लिव अनभै अभ्यास है ।
सबद सुरत परमारथ परमपद,
सबद सुरत सुख सहज निवास है ।
सबद सुरत लिव प्रेम रस रसिक ह्वै,
सबद सुरत लिव ब्रहम विस्वास है ।। 62 ।।

द्रिसटि दरस लिव गुर सिख संध मिले,
घटि घटि कास जल अंतर धिआन है ।
सबद सुरत लिव गुरसिख संध मिले,
जंत्र धुनि जंत्री उनमन उनमान है ।
गुरमुखि मन बच क्रम इकत्र भए,
तन त्रिभवन गति गंमता गिआन है ।
एक औ अनेक मेक ब्रहम बिबेक टेक,
श्रोत सरिता समुद्र आतम समान है ॥ 63 ॥

गुरमुख मन बच क्रम इकत्र भए,
परमद्भुत गति अलख लखाए हैं ।
अंतर धिआन दिब्ब जोत को उदोत भयो,
त्रिभुवन रुप घट अंतर दिखाए हैं ।
परम निधान गुर ग्यान को प्रगास भयो,
गंमिता त्रिकाल गति जतन जताए हैं ।
आतम तरंग प्रेम रस मधु पान मत,
अकथ कथा बिनोद हेरत हिराए हैं ॥ 64 ॥

बिन रस रसना बकत ही बहुत बातै,
प्रेमरस बस मए मोनि ब्रत लीन है ।
प्रेम रस अम्रित निधान पान कै मदोन,
अंतर धिआन दृग दुतीआ न चीन है ।
प्रेम नेम सहज समाध अनहद लिव,
दुतीआ सबद श्रवनंतर न कीन है ।
बिसम बिदेह जग जीवन मुक्त भए,
त्रिभुवन औ त्रिकाल गंमिता प्रबीन है ॥ 65 ॥

सकल सुगंधता मिलत अरगजा होत,
कोटि अरगजा मिल बिसम सुबास कै ।
सकल अनूप रुप कमल बिखै समात,
हेरत हिरात कोटि कमला प्रगास कै ।
सरब निधान मिल परम निधान भए,
कोटिक निधान ह्वै चकित से बिलास कै ।
चरन कमल गुर महिमा अगाध बोध,
गुरसिख मधुकर अनभै अभयास कै ॥ 66 ॥

रतन पारख मिल रतन परीखा होत,
गुरमुख हाट साट रतन बिउपार है ।
मानक हीरा अमोल मन मुकताहल कै,
गाहक चाहक लाभ लभत अपार है ।
सबद सुरत अवगाहन बिसाहन कै,
परम निधान प्रेम नेम गुरद्वार है ।
गुरु सिख संध मिल संगम समागम कै,
माया मै उदास भव तरत संसार हैं ॥ 67 ॥

चरन कमल मकरंद रस लुभत ह्वै,
निज घर सहज समाध लिवलागी है ।
चरन कमल मकरंद रस लुभत ह्वै,
गुरमति रिदै जगमग जोति जागी है ।
चरन कमल मकरंद रस लुभत ह्वै,
अंम्रित निधान पान दुरमति भागी है ।
चरन कमल मकरंद रस लुभत ह्वैं,
माया मै उदास बास बिरलो बैरागी है ॥ 68 ॥

जैसे नाउ बूडत से जोई बचै सोई भलो,
बूड गए पाछै पछतायो रहि जात है ।
जैसे घर लागै आग जोई नचै सोई भलो,
जर बुझै पाछै कछु बसु न बसात है ।
जैसे चोर लागै जागै जोई रहै सोई भलो,
सोई गए रीतो घर देखै उठ प्रात है ।
तैसे अंत काल गुर चरन सरन आवै,
पावै मोख पदवी नतर बिललात है ॥ 69 ॥

अंत काल एक घरी निग्रह कै सती होइ,
* धन्नय धन्न कहत है सकल संसार जी ।
अंत काल एक घरी निग्रह कै जोधा जूझै,
इत उत जत कत होत जै जैकार जी ।
अंत काल एक घरी निग्रह कै चोर मरै,
फांसी कै सूरी चढ़ाए जग मैं धिकार जी ।
तैसे दुरमत गुरमत कै असाध साध,
संगत सुभाव गति मानस औतार जी ॥ 70 ॥

आदि के अनादि अर अंत के अनंत अति,
पार के अपार न अथाह थाह पाई है ।
मिति के अमिति अर संख कै असंख पुन,
लेख के अलेख नहीं तोल के तुलाई है ।
अरध उरध परंजंत के अपार जंत,
अगम अगोचर न मोल के मुलाई है ।
परमद्भुत असचरज बिसम अति,
अबिगति गति सतिगुरु की बडाई है ॥ 71 ॥

चरन सरन गुरु तीरथ पुरब कोटि,
देवी देव सेव गुर चरन सरन हैं ।
चरन सरन सुर कामना सफल फल,
ऋद्धि सिधि निधि अवतार अमरन है ।
चरन सरन गुर नाम निहकाम धाम,
भगत जुगति कर तारन तरन है ।
चरन सरन गुर महिमा अगाध बोध,
हरन भरन गति कारन करन है ॥ 72 ॥

गुरसिख एकमेक रोम महिमा अनंत,
अगम अपार गुरु महिमा निधान है ।
गुरसिख एकमेक बोल को न तोल मोल,
श्री गुर सबद अगमिति ग्यान ध्यान है ।
गुरसिख एक मेक मेक द्रिसटि द्रिसटि तारै,
श्री गुर कटाखछ क्रिपा को न परमान है ।
गुरसिख एकमेक पल संग रंग रस,
अबिगति गति सतिगुरु निरबान है ॥ 73 ॥

बरन बरन बहु बरन घटा घमंड,
बसुधा बिराजमान बरखा आनद कै ।
बरन बरन ह्वै प्रफुलत बनासपती,
बरन बरन फल फूल मूल कंद कै ।
बरन बरन खग बिबिध भाखा प्रगास,
कुसम सुगंध पौन गौन सीत मंद कै ।
रवन गवन जल थल त्रिन सोभा निधि,
सफल ह्वै चरन कमल मकरंद कै ॥ 74 ॥

चीटी के उदर बिखै हसती समाइ कैसे,
अ्रतुल अ्रपार भार भ्रिंगी न उठावई ।
मछर के डंग न मरत है बासक नाग,
मकरी न चीतै जीतै सर न पुजावई ।
तमचर उडत न पहुचै अ्रकास बास,
मूसा तो न तैरत समुद्र पार पावई ।
तैसे प्रिय प्रेम नेम अ्रगम अ्रगाध बोध,
गुरमुख सागर ज्यो बूंद हवै समावई ।। 75 ।।

सबद सुरत अ्रवगाहन के साध संग,
अ्रातम तरंग रंग सागर लहर है ।
अ्रगम अ्रथाहि अ्राहि अ्रपर अ्रपार अ्रति,
रतन प्रगास निधि पूरन गहर है ।
हंस मरजीवा गुन गाहक चाहक संत,
निस दिन घटिका मूहरत पहिर है ।
स्वाति बूंद बरखा ज्यों गवन घटा घमंड,
होत मुकताहल अ्रौ नर नर हर है ।। 76 ।।

सबद सुरति लिव जोति को उदो भयो,
त्रिभवन अ्रौ त्रिकाल अ्रंतर दिखाए हैं ।
सबद सुरति लिव गुरमति को प्रगास,
अ्रकथ कथा बिनोद अ्रलख लखाए हैं ।
सबद सुरति लिव निझर अ्रपार धार,
प्रेम रस रसिक हवै अ्रपिअ्र पीअ्राए हैं ।
सबद सुरत लिव सोहं सो अ्रजपा जाप,
सहजि समाधि सुख सागर समाए हैं ।। 77 ।।

अ्राधि के बिअ्राधि के उपाधि के त्रिदोख हुते,
गुर सिख साध गुर बेद पै लै अ्राए हैं ।
अ्रमृत कटाखछ पेख जनम मरन मेटे,
जोनि जम भय निवारै अ्रभै पद पाए हैं ।
चरन कमल मकरंद रज लेपन कै,
दीख्या सीख्या संजम के अ्रौखधि खवाए हैं ।
करम भरम खोए धावत बरज राखै,
निहचल मती सुख सहिज समाए हैं ।। 78 ।।

बोहिथ प्रवेस भए निरभै होइ पारग्रामी,
बोहिथ समीप बूड मरत अभागे है।
चंदन समीप दुरगन्ध सो सुगन्ध होइ,
दूरंतर तर गंध मारूत न लागे हैं।
सिहजा संजोग भोग नार गर हार होत,
पुरख बिदेस कुल दीपक न जागे हैं।
श्री गुरकृपा निधान सिमरन ग्यान ध्यान,
गुरमुख सुखफल फल अनुरागे हैं ॥ 79 ॥

चरन कमल को महातम अगाध बोध,
अति असचरज मै नमो नमो नम है।
कोमल कोमलता औ सीतल सीतलता कै,
बासना सुबास तास दुतिया न सम है।
सहजि समाधि निज आसन सिंघासन में,
स्वाद बिसमाद रस गम्यता अगम है।
रूप के अनूप रूप मन मनसा थकत,
अकथ कथा बिनोद बिसमै बिसम है ॥ 80 ॥

सतिगुर दरसन सबद अगाध बोध,
अबिगति गति नेति नेति नमो नम है।
दरस धिआन अरु सबद ग्यान लिव,
गुपत प्रगट ठट पूर्ण बह्म है।
निरगुन स्रगुन कुसमावली सुगंधि संधि,
एक औ अनेक रूप गंमिता अगम है।
परमद्भुत असचरजै असचरज मैं,
अकथ कथा अलख बिसमै बिसम है ॥ 81 ॥

सतगुरु दरस धिआन ग्यान अंजन कै,
मित्र सत्रता निवारी पूर्ण ब्रह्म है।
गुरु उपदेस परवेस आदि कौ अदेस,
उसतति निन्दा मेट गंमिता अगम है।
चरन सरन गहे धावत बरज राखै,
आसा मनसा थकत सफल जनम है।
साध संग प्रेम नेम जीवन मुकति गति,
काम निहकाम निहकरम करम है ॥ 82 ॥

सतिगुर देव सेव अलख अभेव गति,
सावधान साध संग सिमरन मात्र कै।
पतित पुनीत रीत पारस करै मनूर,
बास मैं सुबास दै कुपात्रहिं सुपात्र कै।
पतित पुनीत कर पावन पवित्र कीने,
पारस मनूर बास बासै द्रुम जात्र कै।
सरिता समुद्र साधु संगत त्रिखावंत जीअ,
क्रपा जल बीजै मोहि कंठ छेद चात्रकै ॥ 83 ॥

बोस के बरतमान भए न सुबास बास,
हेम न भए मनूर लोग बेद ग्यान है।
गुरमुख पंथ एक ईस को बरतमान,
चंदन सुबास बास बासै द्रुम आन है।
कंचन मनूर होइ पारस परस भेट,
पारस मनूर करै और ठौर मान है।
गुरसिख साध संग पतित पुनीत रीत,
गुरुसिख संधि मिले गुरसिख जान है ॥ 84 ॥

चरन सरन गुर भई निहचल मति,
मन उनमान लिव सहज समाए हैं।
द्रिसटि दरस अरु सबद सुरति मिले,
परमद्भुत प्रेम नेम उपजाए हैं।
गुरसिख साध संग रंग ह्वै तंबोल रस,
पारस परस धात कंचन दिखाए हैं।
चंदन सुगंध संध बासना सुबास तास,
अकथ कथा विनोद कहित न आए हैं ॥ 85 ॥

प्रेम रस अंम्रित निधान पाण पूर्ण ह्वै,
अकथ कथा बिनोद कहित न आए हैं।
ग्यान ध्यान स्यान सिमरन बिसिमरन कै,
बिसम बिदेह बिसमाद बिसमाए हैं।
आदि परमाद अरु अंत कै अनंत भए,
थाह कै अथाह न अपार पार पाए हैं।
गुरसिख संध मिले बीस इक ईस ईस,
सोहं सोई दीपक से दीपक जगाए हैं ॥ 86 ॥

सतिगुर चरन सरन चल जाइ सिख,
चरन सरन तांकी जग चल आवई ।
सतिगुरु आग्या सत्य सत्य कर माने सिख,
आग्या ताहि सकल संसारहि हितावई ।
सतगुरु सेवा भाइ प्राण पूजा करै सिख,
सरब निधान अग्र भाग लिवलावई ।
सतिगुर सीख्या दीख्या हिरदै प्रवेस जाहि,
तांकी सिख सुनत परम पद पावई ॥ 87 ॥

गुरसिख साध संग रंग मैं रंगीले भए,
बारनी बिगंध गंग संग मिले गंग है ।
सुरसरी संगम ह्वै प्रबल प्रवाहि लिव,
सागर अथाह सतगुरु संग संग है ।
चरन कमल मकरंद निहचल चित्त,
दरसन सोभा निध लहर तरंग है ।
अनहद सबद के सरब निधान दान,
ग्यान अंस हंस गति सुमति स्रवंग है ॥ 88 ॥

गुरमुख मारगि ह्वै दुबिधा भरम खोए,
चरन सरन गहे निज घर आए हैं ।
दरस दरस दिब्ब द्रिसटि प्रगास भई,
अंम्रित कटाखछ के अमर पद पाए हैं ।
सबद सुरत अनहद निझर झरन,
सिमरन मंत्र लिव उनमन छाए हैं ।
मन बच क्रम ह्वै इकत्र गुरमुख सुख,
प्रेम नेम बिसम बिस्वास उपजाए हैं ॥ 89 ॥

गुरमुख आपा खोइ जीवन मुकति गति,
बिसम बिदेह गेह समति सुभाउ है ।
जनम मरन सम नरक सुरग अर,
पुन्न पाप संपत बिपति चिंता चाउ है ।
बनु ग्रह जोग भोग लोग बेद ग्यान ध्यान,
दुख सुख सोगानन्द मित्र सत्र ताउ है ।
लोसट कनक बिख अंम्रित अगम जल,
सहज समाधि उनमन अनराउ है ॥ 90 ॥

सफल जनम गुरमुख ह्वै जनम जीत्यो,
चरन सफल गुरु मारग रवन के ।
लोचन सफल गुर दरसाविलोकन के,
मसतक सफल रज पद गवन के ।
हसत सफल नम सतिगुर बाणी लिखे,
सुरत सफल गुरु सबद श्रवन के ।
संगति सफल गुरु सिख साध संगम के,
प्रेम नेम गंमिता त्रिकाल त्रिभवन के ।। 91 ।।

चरन कमल मकरंद रस लुभत ह्वै,
सहज समाधि सुख संपट समाने है ।
भै जल भयानक लहर न बिग्राप सकै,
दुबिधा निवार एक टेक ठहिराने हैं ।
द्रिसटि सबद सुरति बरज बिसरजत,
प्रेम नेम बिसम बिस्वास उर ग्राने हैं ।
जीवन मुकति जग जीवन जीवन मूल,
ग्रापा खोइ होइ ग्रपरंपर पराने है ।। 92 ।।

सरिता सरोवर सलिल मिल एक भए,
एक से ग्रनेक होत कैसे निरवारो जी ।
पान चूना काथा सुपारी खाय सुरंग भए,
बहुर न चतुर बरन बिसथारो जी ।
पारस-परस होत कनिक ग्रनिक धात,
कनिक सै ग्रनिक न होत गोताचारो जी ।
चंदन सुबास के सुबासना बनासपती,
भगति जगत पति बिसम बिचारो जी ।। 93 ।।

चतुर बरन मिल सुरंग तंबोल रस,
गुरसिख साध संग रंग में रंगीले हैं ।
खांउ घ्रित चून जल मिले बिंजनादि स्वाद,
प्रैम रस ग्रंमित मैं रसक रसीले हैं ।
सकल सुगंध सनबंध ग्ररगजा होइ,
सबद सुरत लिव बासना बसीले हैं ।
पारस परस जैसे कनक ग्रनिक धात,
दिब्य देह मन उनमन उनमीले हैं ।। 94 ।।

पवन गवन जैसे गुडीया उडत रहै,
पवन रहत गुड्डी उड़ न सकत है ।
डोरी की मरोर जैसे लट्टूआ फिरत रहै,
ताउ हाउ मिटे गिर परै ह्वै थकत है ।
कंचन असुद्ध ज्यो कुठारी ठहिरात नहीं,
सुद्ध भए निहचल छबि कै छकत है ।
दुरमति दुबिधा भ्रमत है चतुर कुँट,
गुरमति एक टेक मौन न बकत है ॥ 95 ॥

प्रेम रस अंम्रित निधान पान पूरन ह्वै,
परमद्भुत गति आतम तरंग है ।
इत ते द्रिसटि सुरति सबद बिसरजत,
उत ते बिसम असचरज प्रसंग है ।
देखै सो दिखावै कैसे सुने सो सुनावै कैसे,
चाखै सो बतावै कैसे राग रस रंग है ।
अकथ कथा बिनोद अंग अंग थकत है्वै,
हेरत हिरानी बूंद सागर स्रबंग है ॥ 96 ॥

साध संग गंग मिल स्री गुर सागर मिले,
ग्यान ध्यान परम निधान लिवलीन है ।
चरन कमल मकरंद मधुकर गति,
चंद्रमा चकोर गुर ध्यान रस मीन है ।
सबद सुरत मुकताहल अहार हंस,
प्रेम परमारथ बिमल जल मीन है ।
अंम्रित कटाछ्य अमरापद क्रिपा क्रिपाल,
कमल कलपतरु कामधेनाधीन है ॥ 97 ॥

एक ब्रह्माण्ड के बिथार की अपार कथा,
कोटि ब्रह्मण्ड को नायक कैसे जानीअै ।
घटि घटि अंतर और सरब निरंतर ह्वै,
सूखम सथूल मूल कैसे पहिचानीअै ।
निरगुन अद्रिसटि औद्रिसटि में नाना प्रकार,
अलख लख्यो न जाइ कैसे उर आनीअै ।
सत्ति रुप सतिनाम सत्तिगुरु ग्यान ध्यान,
पूरन ब्रह्म सरबातम कै मानीअै ॥ 98 ॥

पूरन ब्रहम गुर पूरन सरब मयी,
पूरन क्रिपा कै परपूरन कै जानीग्रै ।
दरस धियान लिव एक ग्रौ ग्रनेक मेक,
सबद बिबेक टेक एकै उर ग्रानीग्रै ।
द्रिसटि दरस ग्रर सबद सुरति मिल,
पेखता बकता स्रोता एकै पहिचानीग्रै ।
सूखम सथूल मूल गुपत प्रगठ ठट,
नट बट सिमरन मंत्र मन मानीग्रै ॥ 99 ॥

नहीं ददसार पिता पितामा परपितामा,
सज्जन कुटम्ब सुत बांधव न भ्राता है ।
नहीं ननसार माता परमाता ब्रिधमाता,
मामू मामी मासी मौसा बिबिध बख्याता है ।
नहीं ससुराल सास ससुर ग्रौ सारो सारी,
नहीं बिरतीसर ग्रौ जाचक न दाता है ।
ग्रसन बसन धन धाम काहू मैं न देख्यों,
जैसो गुरसिख साध संगत को नाता है ॥ 100 ॥

जैसे मात पिता प्रतिपालत ग्रनेक सुत,
ग्रनिक सुतन पै न तैसो होवू ग्रावई ।
जैसे माता पिता चित चाहत है सुतन कौ,
तैसे न सुतन चित चाह उपजावई ।
जैसे मात पिता सुत सुख दुख सोगानंद,
सुख दुख मैं न तैसे सुत ठहिरावई ।
जैसे मन बच क्रम सिख्खन लडावै गुर,
तैसे गुरसेवा गुरसिख न हितावई ॥ 101 ॥

जैसे कछप धन धियान सावधान करै,
तैसे मात पिता प्रीति सुत न लगावई ।
जैसे सिमरन कर कुंज परपक्क करै,
तैसे सिमरन सुत पै न बन ग्रावई ।
जैसे गऊ बछुरा को दुग्ध पीग्राइ पौखे,
तैसे बछुरा न गऊ प्रीति हित लावई ।
जैसे ग्यान ध्यान सिमरन गुरसिख प्रति,
तैसे कैसे सिख गुर सेवा ठहरावई ॥ 102 ॥

जैसे मात पिता केरी सेवा सरवन कीनी,
सिख बिरलोई गुर सेवा ठहिरावई ।
जैसे लखमन रघुपति भाई भगति में,
कोटि मधे काहूं गुर भाई बन आवई ।
जैसे जल बरन बरन सरबंग रंग,
बिरलो बिबेकी साध संगति समावई ।
गुरसिख संधि मिले बीस इक ईस ईस,
पूरन क्रिपा कै काहू अलख लखावई ।। 103 ।।

लोचन धियान सम लोसट कनिक तां कै,
स्रवन उसतति निंदा समसर जानीऐ ।
नासका सुगन्ध बिरगंध तुल तां के,
रिदै मित्र सत्र सरसर उनमानीऐ ।
रसन सवादि अंम्रित समान तां के,
कर सपरस जल अगनि समानीऐ ।
दुख सुख समसर ब्यापे न हरख सोग,
जीवन मुकति गति सतिगुरु ग्यानीऐ ।। 104 ।।

चरन सरन गहे निज-घर मैं निवास,
आसा मनसा थकत अनत न धावई ।
दरसन मात्र आन ध्यान से रहत होइ,
सिमरन आन सिमरन बिसरावई ।
सबद सुरत मौन ब्रत कौ प्रापत होइ,
प्रेम रस अकथ कथा न कहि आवई ।
किंचत कटाखछ क्रिपा परम निधान दान,
परमद्भुत गति अति बिसमावई ।। 105 ।।

सबद सुरति आपा खोइ गुरदोम होइ,
बरतै बरतमान गुर उपदेस के ।
होनहार होइ जोई जोई सोई सोई भलो,
पूरन ब्रहमा ग्यान ध्यान परवेस के ।
नाम निहकाम धाम सहज सुभाइ चाइ,
प्रेम रस रसिक हवै अम्रित अवेस के ।
सत्त रूप सत्तिनामु सतिगुरु ग्यान ध्यान,
पूरन सरबमई आदि कौ अदेस के ।। 106 ।।

सबद सुरत आपा खोइ गुरदास होइ,
बालबुधि सुधि न करत मोह द्रोह की ।
स्रवनोसतति निन्दा सम तुलि स्रुति लिव,
लोचन धिआन लिव कंचन औ लोह की ।
नासका सुगंधि बिरगंध समसरि ताकै,
जिह्वा समान बिख अंम्रित न बोह की ।
करच करम अकरम अपथ पथ,
किरति बिरति सम उकति न द्रोह की ॥ 107 ॥

सबद सुरति आपा खोइ गुरदास होइ,
सरब में पूरन ब्रह्म कर मानीऐ ।
कासट अगनि माला सूत्र गोरस गोबंस,
एक औ अनेक कौ बिबेक पहिचानीऐ ।
लोचन स्रवन मुख नासका अनेक सोत्र,
देखै सुनै बोलै मन मेक उर ठानीऐ ।
गुरसिख संधि मिलै सोहं सोई ओतिपोति,
जोती जोति मिलत जोती सरुप जानीऐ ॥ 108 ॥

गांडा मैं मिठास तास छिलका लीओ न जाइ,
दारम औ दाख बिखै बीज गहि डारीऐ ।
आंब खिरनी छुहारा मांझ गुठली कठोर,
खरबूजा औ कलींदा सजल बिकारीऐं ।
मधु माखी में मलीन समै पाइ सफल ह्वै,
रस बस भए नहीं त्रिसना निवारीऐ ।
श्री गुरु सबद रस अम्रित निधान पान,
गुरसिख साध संग जनम संवारीऐ ॥ 109 ॥

सलिल मै धरनी मैं सलिल जैसे,
कूप अनुरुप कै बिमल जल छाए हैं ।
ताही जल माटी कै बनाई घटिका अनेक,
एकै जल घट घट घटका समाए हैं ।
जाही जाही घटिका में द्रिसटि कै देखीअति,
पेखीअत आपा आन न दिखाए हैं ।
पूरन ब्रह्म गुर एकंकार कै अकार,
ब्रह्म बिबेक एक एक ठहिराए हैं ॥ 110 ॥

चरन सरन गुर पैंड जाइ चल,
सतिगुर कोटि पैंड आगे होइ लेत है ।
एक बार सतिगुर मंत्र सिमरन मात्र,
सिमरन ताहि बारंबार गुर हेत हैं ।
भावनी भगति भाइ कौडी अग्र भाग राखे,
ताँहि गुर सरब निधान दान देत हैं ।
सतिगुर दयानिधि महिमा अगाध बोध,
नमो नमो नमो नमो नेति नेति नेति हैं ।। 111 ।।

प्रेम रस अम्रित निधान पात्र पूरन ह्वै,
उनमन उनमत बिसम बिस्वास है ।
आतम तरंग बहु रंग अंग अंग छबि,
अनिक अनूप रूप ऊप को प्रगास है ।
स्वाद बिसमाद बहु बिबिध सुरत सरब,
राग नाद बाद बहु बासना सुबास है ।
परमद्भुत ब्रहमासन सिंघासन मैं,
सोभा सभ मंडल अखंडल बिलास हैं ।। 112 ।।

ब्यथावंतै जंतै जैसे बैद उपचार करै,
ब्यथा बिरतांत सुन हरै दुख रोग को ।
जैसे माता पिता हितचित कै मिलत सुतै,
खांन पान पोख तोख हरत है सोग को ।
बिरहनी बनिता को जैसे भरतार मिलै,
प्रेम रस कै हरत बिरह बियोग को ।
तैसे ही बिबेकी जन पर उपकार हेत,
मिलत सलिल गति सहज संजोग को ।। 113 ।।

ब्यथावंतै बैद रूप जाचिक दातार गति,
गाहकै ब्यापारी होइ मात पिता पूत कौ ।
नार भरतार बिध मित्र मित्रताई रूप,
सुजन कुटंब सखा भाइ चाइ सूत कौ ।
लोगन मैं लोगाचार बेद मैं बेदाचार,
ग्यान गुर एकंकार औधूत औधूत कौ ।
बिरलो बिबेकी जन परउपकार हेत,
मिलत सलिल गत सरबंग भूत कौ ।। 114 ।।

दरसन ध्यान दिब्य देह कै बिदेह भए,
द्रिग दिब द्रिसटि बिखै भाउ भगति चीन है।
सबद गिम्रान परवान हवै निधान पाए,
परमारथ सबद्दारथ प्रबीन है।
अध्यातम करम कर आतम प्रवेस,
परमातम प्रवेस सरबातम लिउलीन है।
तत्तै मिलै तत्त जोती जोति कै परम जोति,
प्रेम रस बस भए जैसे जल मीन है ॥ 115 ॥

अध्यातम करम प्रमातम पद,
तत्त मिल तत्तहि परम तत्त वासी है।
सबद बिबेक टेक एक ही अनेक मेक,
जंत्र धुनि राग नाद अनभै अभ्यासी है।
दरस धिम्रान उनमान प्रान प्रानपति,
अबिगति गति अति अलख बिलासी है।
अंम्रित कटाच्छ दिब्य देह कै बिदेह भए,
जीवन मुक्त कोऊ बिरलो उदासी है ॥ 116 ॥

सुपन चरित्र चित जागत न देखियत,
तारका मंडल परभात न दिखाईग्रै।
तरुवर छाया लघु दीरघ चपल बल,
तीरथ पुरब जात्रा थिर न रहाइग्रै।
नदी नाव को संजोग लोग बहुरयो न मिलै,
गंधर्व नगर मृग तिसना बिलाईग्रै।
तैसे माया मोह धोह कुटंब सनेह देह,
गुरमुख सबद सुरति लिव लाईयै ॥ 117 ॥

नैहर कुम्रार कन्या लाडली चै मानीग्रति,
ब्याहे ससुरार जाय गुनन कै मानीग्रै।
बनज ब्योहार लग जात है बिदेस प्राणी,
कहिए सपूत लाभ लभत कै आनीग्रै।
जैसे तौ संग्राम समै पर दल में अकेलो जाई,
जीत आवै सोई सूरो सुभट बखानीग्रै।
मानस जनम पाइ चरन सरन गुर,
साध संग मिलै गुरद्वार पहिचानीग्रै ॥ 118 ॥

नैहर-कुटंब तज ब्याहे ससुरार जाइ,
गुनन कै कुल बधू बिरध कहावई ।
पूरन प्रतिब्रता श्रौ गुरुजन सेवा भाइ,
ग्रह मैं गृहेसुर सुजसु प्रगटावई ।
श्रंतकाल जाइ प्रिय संग सहगामनी ह्वै,
लोक परलोक बिखै उच्च पद पावई ।
गुरमुख मारग भै भाइ निरबाह करै,
धन्य गुरुसिख श्रादि श्रंत ठहरावई ।। 119 ।।

जैसे नृिप धाम भाम एक सै अधिक एक,
नायक अनेक राजा सबन लडावई ।
जनमत जांकै सुत वाही कै सुहाग भाग,
सकल रानी में पटरानी सो कहावई ।
असन, बसन, सिहजासन संजोगी सबै,
राज अधिकार तो सपूती ग्रह आवई ।
गुरसिख सबै गुर चरन सरन लिव,
गुरुसिख संधि मिले निज पद पावई ।। 120 ।।

तुस मैं तंदुल बोइ निपजै सरस्त्र गुनो,
देह धार करत हैं परउपकार जी ।
तुस मैं तंदुल निरबिघन न लागै घुन,
राखै रहै चिरंकाल होत न बिकार जी ।
तुस में निकस होइ भगन मलीन रूप,
स्वादि करवाइ रांधे रहै न संसार जी ।
गुरु उपदेस गुरुसिख ग्रह में बैरागी,
ग्रह तज बनखंड होत न उधार जी ।। 121 ।।

हरदी श्रौ चूना मिल अरुन बरन जैसे,
चतुर बरन कै तंबोल रस रूप है ।
दूधं में जामुन मिले दधि कै बखानीअति,
खांड घृित चून मिल बिंजन अनूप है ।
कुसम सुगंधि मिल तिल से फुलेल होत,
सकल सुगंधि मिल अरगजा धूप है ।
दोइ सिख साध संग, पंच परमेसुर है,
दस बीस तीस मिल अबिगति ऊप है ।। 122 ।।

एक ही गोरस मैं अनेक रस को प्रगास,
दह्यो मह्यो माखन औ घ्रित अनुमानीऐ ।
एक ही उखारी से मिठास को निवास गुड,
खांड मिसरी औ कलीकंद पहिचानीऐ ।
एक ही गेहूं से होत नाना बिंजनादि स्वादि,
भूने, भीजे, पीसे औ उसेई बिबिधानीऐ ।
पावक सलिल एक एकहिं गुन अनेक,
पंच कै पंचाम्रित सु साध संग जानीऐ ॥ 123 ॥

खांड घ्रित चून जल पावक इकत्र भए,
पंच मिल प्रगट पंचाम्रित प्रगास है।
म्रिग-मद गौरा चोआ चंदन कुसम दल,
सकल सुगंधि कै अरगजा सुबास है ।
चतुर बरन पान चूना औ सुपारी काथा,
आपा खोइ मिलत अनूप रूप तास है ।
तैसे साध संगति मिलाप को प्रताप ऐसो,
सावधान पूरन ब्रहम को निवास है ॥ 124 ॥

सहज समाधि साध संगति मैं साच खंड,
सतिगुर पूरन ब्रहम को निवास है ।
दरस धिआन सरगुन अकाल मूरति,
पूजा फल फूल चरणाम्रित बिस्वास है।
निरंकार चार परमारथ परमपद,
सबद सुरति अवगाहन अभ्यास है ।
सरब निधान दान दाइक भगत भाइ,
काम निहकाम धाम पूरन प्रगास है ॥ 125 ॥

सहज समाधि साध सुगत सुक्रित भूमि,
चित चितवत फल प्राप्त उधार है ।
बज्जर कपाट खुले हाट साध संगति में,
सबद सुरति लाभ रतन ब्योहार है ।
साध संग ब्रहमस्थान गुरदेव सेव,
अलख अभेव धरमारथ अचार है ।
सफल सुखेत हेत बनत अमित लाभ,
सेवक सहाई बरदाई उपकार है ॥ 126 ॥

गुरमुखि साध चरनाम्रित निधान पान,
काल में अकाल काल ब्याल बिखमारी है।
गुरमुखि साध चरनाम्रित निधान पान,
कूल अकुलीन भए दुबिधा निवारी है।
गुरमुख साध चरनाम्रित निधान पान,
सहज समाधि निज आसन की तारी है।
गुरमुख साधु चरणाम्रित परम पद,
गुरमुख पंथ अबिगति गति न्यारी है ॥ 127 ॥

सहज समाध साध संगत सखा मिलाप,
गगन घटा घमंड जुगति कै जानीऐ।
सहिज समाधि कीरतन गुर सबद कै,
अनहद नाद गरजत उनमानीऐ।
सहज समाध साध संगत जोती सरुप,
दामनी चमतकार उनमन मानीऐं।
सहज समाध लिव निझर अपार धार,
बरखा अम्रित जल सरब निधानीऐं ॥ 128 ॥

जैसे तो गोबंस त्रिण खाय दुहे गोरस दै,
गोरस औटाए दधि माखन प्रगास है।
ऊख मैं पियूख तन खंड खंड कै पिराएं,
रस के औटाए खंड मिसरी मिठास है।
चंदन सुगध सनबंध कै बनासपती,
ढाक औ पलास जैसे चंदन सुबास है।
साध संग मिलत संसारी निरंकारी होत,
गुरमत परउपकार के निवास है ॥ 129 ॥

कोटिन कोटान मिसटान पान सुधा रस,
पुजस न साध मुख मधुर बचन को।
सीतल सुगंधि चंद चंदन कोटान कोटि,
पुजस न साध मति निम्रता सचन को।
कोटिन कोटान कामधेन औ कलपतर,
पुजस न किंचित कटाछ कै रचन को।
सरब निधान फल फल सकल कोटान कोटि,
पुजस न परउपकार के खचन को ॥ 130 ॥

कोटन कोटान रुप रंग ग्रंग ग्रंग छबि,
कोटिन कोटान स्वाद रस बिंजनादि कै ।
कोटिन कोटान कोटि बासना सुबास रस,
कोटिन कोटान कोट राग नाद बाद कै ।
कोटिन कोटान कोट रिधि सिधि निधौ सुधा,
कोटिन कोटान ग्यान ध्यान करमाद कै ।
सकल पदारथ ह्वै कोटिन कोटान गुण,
पुजस न साध उपकार बिसमाद कै ॥ 131 ॥

ग्रजया ग्रधीन तांते परम पवित्र भई,
गरब कैं सिंध देह महा ग्रपवित्र है ।
मौन ब्रत गहै जैसे ऊख में पयूख रस,
बांस बक बानी कै सुगंधिता न सित्र है ।
मूल ह्वै मजीठ रंग संग सो संगाती भए,
फूल ह्वै कसुंभ रंग चंचल चरित्र है ।
तैसे ग्रसाध साध दादर ग्रौ मीन गति,
गुपत प्रगट मोह द्रोह के बचित्र है ॥ 132 ॥

पूरन ब्रह्म ध्यान पूरन ब्रह्म ग्यान,
पूरन भगत सतिगुर उपदेस है ।
जैसे जल ग्रापा खोइ बरन बरन मिलै,
तैसे ही बिबेकी परमात्म प्रवेस है ।
पारस परस जैसे कनिक ग्रनिक धांत,
चंदन बनासपती बासना ग्रवेस है ।
घटि घटि पूरन ब्रह्म जोति ग्रोति पोति,
भावनी भगति भाई ग्रादि को ग्रादेस है ॥ 133 ॥

जैसे करपूर मैं उडन को सुभाउ तांते,
ग्रौर बासना न ताकै ग्रागे ठहिरावई ।
चंदन सुबास कै सुबासना बनासपती,
ताही ते सुगंधिता सकल मैं समाबई ।
जैसे जल मिलत स्रबंग संग रंग राखै,
ग्रगनि जराइ सब रंगन मिटावई ।
जैसे रवि ससि सिब सकति सुभाव गति,
संजोगी बियोगी द्रिसटांत कै दिखावई ॥ 134 ॥

स्री गुरु दरस ध्यान स्री गुरु सबद गुरु सबद ग्यान,
ससत्र सनाह पंच दूत बस आए हैं ।
स्री गुरु चरन रेनु स्री गुरु सरन पेनु,
करम भरम कट अभै पद पाए है ।
स्री गुरु बचन लेख स्री गुर सेवक भेख,
अछल अलेख प्रभु अलख लखाए हैं ।
गुरसिख साधु संग गोसट प्रसंग,
निम्रता निरंतरी कै सहज समाए हैं ।। 135 ।।

जैसे तौ मजीठ बसुधा सैं खाद काढ़ीअत,
अंबर सुरंग भए संग न तजत है ।
जैसे तौ कसुंभ तज मूल फूल आनियत,
जानियत संग छाड ताही ते भजत है ।
अरध उरध मुख सलिल सूची सुभाउ,
तांते सीत तपत मल अमल सजत है ।
गुरमति दुरमति ऊच नीच नीच ऊच,
जीत हार हार जीत लज्जा न लजत है ।। 136 ।।

गुरमुख साध संग सबद सुरति लिव,
पूरन ब्रह्म सरबातम कै जानीअै ।
सहज सुभाइ रिदै भावनी भगति भाइ,
बिहंस मिलन सम दरस धिआनीअै ।
निम्रता निवास दास दासन दासान मति,
मधुर बचन मुख बेनती बखानीअै ।
पूजा प्रान ग्यान आग्याकारी अग्र भाग,
आतम अवेस परमातम निधानीअै ।। 137 ।।

सति रुप सतिनाम सतिगुर ग्यान, ध्यान,
सतिगुर मति सुन सति कर मानी है ।
दरस धिआन सम दरसी ब्रहम धिआनी,
शब्द गिआन गुरु ब्रहम गिआनी है ।
गुरमत निहचल पूरन प्रगास रिदै,
मानै मन मानै उनमन उनमानी है ।
बिसमै बिसम असचरजै असचरज मै,
अदुभुत परमद्भुत गति ठानी है ।। 138 ।।

पूरन परम जोति सति गुर सति रुप,
पूरन गिम्रान सतिगुरु सति नामु है।
पूरन जुगति सति सतिगुरु सति रिदे,
पूरन सु सेव साध संगत बिस्राम है।
पूरन पूजा पदारीबिंद मधुकर मन,
प्रेम रस पूरन ह्वै काम निह्काम है।
पूरन ब्रह्म गुरु पूरन परम निधि,
पूरन प्रगास बिसम सथल धाम है ॥ 139 ॥

दरसन जोति कौ उदोत असचरज मै,
ता मैं तिल छबि परमद्भुत छकि है।
देखबे को द्रिसटि न सुनबे कौ सुरति है,
कहिबे को जिह्वा न ग्यान मैं उकति है।
सोभा कोटि सोभ लोभ लुभित ह्वै लोट पोट,
जग मग जोति कोटि ओट लै छिपत है।
अंग अंग पेख मन मनसा थकत भई,
नेति नेति नमो नमो अति हूं ते अति है ॥ 140 ॥

छबि कै अनेक छबि सोभा कै अनेक सोभा,
जोति कै अनेक जोति नमो नमो नम है।
उसतति उपमा महातम महिमा अनेक,
एक तिल कथा अति अगम अगम है।
बुधि बल बचन बिबेक जौ अनेक मिले,
एक तिल आदि बिसमादि कै बिसम है।
एक तिल कै अनेक भांति निह्क्रांति भई,
अबिगति गति गुर पूरन ब्रह्म है ॥ 141 ॥

दरसन जोति को उदोत असचरज मै,
किंचत कटाखछ कै बिसम कोटि ध्यान है।
मंद मुसकान बान परमद्भुत गति,
मधुर बचन कै थकत कोटि ग्यान है।
एक उपकार के बिथार को न पारावार,
कोटि उपकार सिमरन उनमान है।
दयानिधि, क्रिपानिधि, सुखनिधि, सोभानिधि,
महिमा निधान गंमता न काहू आन है ॥ 142 ॥

कोटिन कोटान आदि बाद परमादि बिखैं,
कोटिन कोटान अंत बिसम अनंत है।
कोटि पारावार पाराबार न अपार पावै,
थाह कोटि थकत अथाह परजंत है।
अबिगति गति अति अगम अगाध बोध,
गंमिता न ग्यान ध्यान सिमरन मंत है।
अलख अभेव अपरंपर देवाधिदेव,
ऐसे गुरदेव सेव गुरसिख संत है।। 143 ।।

झूलना छन्द ।।

आदि धरमादि बिसमाद गुरए नमह
प्रगट पूरन ब्रह्म जोति राखी।
मिल चतर बरन इक बरन ह्वै साधं संग,
सहज धुनि कीरतन सबद साखी।
नाम निहकाम निजधाम गुर सिख स्रवन,
धुनि, गुर सिख सुमति अलख लाखी।
किंचित कटाखछ कर क्रिपा दै जांहि लै,
तांहि अवगाहि प्रिय प्रीति चाखी ।। 144 ।।
सबद की सुरति असफुंरति ह्वै तुरत ही,
जुरत है साध संग मुरत नाही।
प्रेम परतीत की रीति हित चीत कर,
जीत मन जगत मन दुरत नाही।
काम निहकाम निहकरम ह्वै करम कर,
आस निरास ह्वै झुरत नाही।
ग्यान गुर ध्यान उर मान पूरन ब्रह्म,
जगत मह भगत-मति छुरत नाहीं ।। 145 ।।

कबित्त ।।

कोटिन कोटान ग्यान अवगाहिन कै,
कोटिन कोटान ध्यान ध्यान उरधारही।
कोटिन कोटान सिमरन सिमरन कर,
कोटिन कोटान उनमान बारंबार ही।
कोटिन कोटान स्रुति सबद औ द्रिसटि कै,
कोटिन कोटान राग नाद झनकार ही।
कोटिन कोटान प्रेम नेम गुर सबद को,
नेति नेति नमो नमो कै नमसकार ही ।। 146 ।।

सबद सुरति लिव लीन अकुलीन भए,
चतर बरन मिल साध संग जानीअै ।
सबद सुरति लिवलीन जलमीन गति,
गुरज गवन जल पान उनमानीअै ।
सबद सुरति लिवलीन परबीन भए,
पूरन ब्रहम एकै एक पहचानीअै ।
सबद सुरति लिवलीन पग रीन भए,
गुरमुख सबद सुरति उर आनीअै ।। 147 ।।

गुरमुखि ध्यान कै पतिसटा सुखंबर लै,
अनिक पटंबर की सोभा न सुहावई ।
गुरमुख सुखफल ज्ञान मिसटान पान,
नाना बिंजनादि स्वाद लालसा मिटावई ।
परम निधान प्रिय प्रेम परमारथ कै,
सरब निधान की इच्छा न उपजावई ।
पूरन ब्रहम गुरु किंचित क्रिपा कटाख्छ,
मन मनसा थकत अन्त न धावई ।। 148 ।।

धन्य-धन्य गुरुसिख्य सुन गुरुसिख भए,
गुरु सिख्य मन गुरु सिख्य मन माने है ।
गुरु सिख भाइ गुरु सिख भाउ चाउ रिदै,
गुरु सिख जान गुरु सिख जग जाने है ।
गुरु सिख संधि मिलै गुरु सिख पूरन ह्वै,
गुरु सिख पूरन ब्रहम पहिचाने है ।
गुरु सिख प्रेम नेम गुरसिख सिख गुरु,
सोहं होई बीस इक ईस उर आने हैं ।। 149 ।।

सतिगुरु सति सतिगुरु मति सति रिदै,
भिदै न दुतीआ भाउ त्रिगुन अतीत है ।
पूरन ब्रहम गुरु पूरन सरब मई,
एक ही अनेक मेक सकल के मीत है ।
निरवैर निरलेप निराधार निरालंभ,
निरंकार निरविकार निहचल चीत है ।
निरमल निरमोलु निरंजन निराहार,
निरमोह निरभेद अछल अजीत हैं ।। 150 ।।

सतिगुरु सति सतिगुरु के सबद सति,
सति साध संगन है गुरुमुखि जानीऐं ।
दरसन ध्यान सति सबद सुरति सति,
गुरसिख संग सति सति कर मानीऐ ।
दरस ब्रहम ध्यान, सबद ब्रहम ज्ञान,
संगत ब्रहम थान प्रेम पहिचानीऐं ।
सति रूप सति नाम सतिगुरु ग्यान ध्यान,
काम निहकाम उनमन उनमानीऐं ।। 151 ।।

गुरमुख पूरन ब्रहम देखे द्रिसटि कै,
गुरमुखि सबद के पूरन ब्रहम है ।
गुरमुखि पूरन ब्रहम स्रुति स्रवन कै,
मधुर वचन कहि बेनती बिसम है ।
गुरमुखि पूरन ब्रहम रस गंध संधि,
प्रेम रस चंदन सुगंध गमागम है ।
गुरमुखि पूरन ब्रहम गुरु सरब मय,
गुरमुखि पूरन ब्रहम नमोनम है ।। 152 ।।

दरस अदरस दरस असचरज मै,
हेरत हिराने द्रिग द्रिसटि अगम है ।
सबद अगोचर सबद परमदभुत,
अकथ कथा कै स्रुति स्रवन बिसम हैं ।
स्वाद रस रहित अपिअ पीआ प्रेम रस,
रसना थकत नेति नेति नमोनम है ।
निरगुन स्रगुन अबिगति न गहन गति,
सूखम सथूल मूल पूरन ब्रहम है ।। 153 ।।

खुले से बंधन बिखे भलो हो सीचाने जाते,
जीव घात करे न विकार होइ आवई ।
खुले से बंधन बिखै चकई भली है जाते,
राम रेख मेटि निस प्रिय संग पावई ।
खुले से बंधन बिखै भलो है सूआ प्रसिध,
सुन उपदेस राम नाम लिवलावई ।
मोख पदवी से तैसे मानस जनम भलो,
गुरमुखि होइ साध संग प्रभु ध्यावई ।। 154 ।।

जैसे सुआ उड़त फिरत बन बन प्रति,
जैसे ई ब्रिख बैठे तैसे फल चाखई ।
पर बसि होइ जैसे जैसीऐ संगति मिलै,
सुन उपदेस तैसी भाखा लैसु भाखई ।
तैसे चित्त चंचल चपल जल को सुभाउ,
जैसे रंग संग मिलै तैसो रंग राखई ।
अधम असाध जैसे बारनी बिनास काल,
साध संग गंग मिलि सुजन भिलाखई ।। 155 ।।

जैसे जैसे रंग संग मिलत सेतांबर हुइ,
तैसो तैसो रग अंग-अंग लपटाइ है ।
भगवत कथा अरधन को धारनीक,
लिखत क्रितास पत्र बंध मोख दाइ है ।
सीत ग्रीखमादि बरखा त्रिबिध बरख मैं,
निस दिन होइ लघु दीरघ दिखाइ है ।
तसे चित चंचल चपल पौन गौन गति,
संगम सुगंध बिरगंध प्रगटाए है ।। 156 ।।

चतुर पहर दिन जगत चतुर जुग,
निस महा परलै समान दिन प्रति है ।
उत्तम मधिम नीच त्रिगुण संसार गति,
लोग वेद ज्ञान उनमान आसकति है ।
रज तम सति गुन औगुन सिम्रत चित,
त्रिगुन अतीत विरलोइ गुरमति है ।
चतुर बरन सार चौपर को खेलु जगु,
साध संग जुगल ह्वै जीवन मुकति है ।। 157 ।।

जैसे जैसे रंग संग मिलत सलिल मिल,
होइ तैसो तैसो रंग जगत मै जानीऐ ।
चन्दन सुगन्ध मिल पवन सुगन्ध संग,
मल मूत्र सूत्र बिरगन्ध उनमानीऐ ।
जैसे जैसे पाक साक बिंजन मिलत घृत,
तैसो तैसो स्वाद रस रसना कै मानीऐ ।
तैसे ही असाध साध संगत सुभाव गति,
मूरी औ तम्बोल रस खाइ पहचानीऐ ।। 158 ।।

बालक किसोर, जोबिनादि औ जरा बिवस्था,
एक ही जनम होत अनिक प्रकार है ।
जैसे निसि दिन तिथि वार पच्छ मास रुति,
चतुर मास त्रिबिध बरख बिथार है ।
जाग्रत सुपन और सुखोपति अवस्था कै,
तुरीया प्रगास गुर ग्यान उपकार है ।
मानस जनम साध संग मिल साध संत,
भगत बिबेकी जन ब्रहम बीचार है ॥ 159 ॥

जैसे चकई मुदित प्रेख प्रतिबिंब निस,
सिंह प्रतिबिंब देख कूप में परत है ।
जैसे कांच मदिर में मानस आनंद मई,
स्वान पेख आप आप भूस कै मरत है ।
जैसे रवि-सुत जम रूप औ धरमराइ,
धरम अधरम कै भाउ भै करत है ।
तैसे दुरमति गुरमति कै असाध साध,
आपा आप चीनत न चीनत चरित है ॥ 160 ॥

जैसे तो सलिल मिल बरन-बरन बिखै,
जांही जांही रंग मिलै सोई हुइ दिखावई ।
जैसे घ्रित जांही जांही पाक साक संगि मिलै,
तैसो तैसो स्वाद रस रसना चखावई ।
जैसे स्वांगी एक ह्वै अनेक भांति भेख धारै,
जोइ जोई स्वांग काछै सोई तो कहावई ।
तैसे चित्त चंचल चपल सग दोख लेप,
गुरमुखि होइ एक टेक ठहिरावई ॥ 161 ॥

सागर मथत जैसे निकसै अंम्रित बिख,
परउपकार न विकार समसर है ।
बिख अचवत होत रतन बिनास काल,
अचए अंम्रित मूए जीवत अमर है ।
जैसे तारो तारी एक लोसट मै प्रगट ह्वै,
बंध मोख पदवी संसार विसथार है ।
तैसे ही असाध साध सन औ मजीठ गति,
गुरमति दुरमति टेव सै न टर है ॥ 162 ॥

बरखा संजोग मुकताहल ओरा प्रगास,
परउपकारी औ विकारी ही कहावई ।
ओरा बरखत जैसे धान पान को बिनास,
मुकता अनूप रूप सभा सोभ पावई ।
ओरा तो विकार धार देखत बिलाइ जाइ,
परउपकारी मुकता ज्यों ठहिरावई ।
तैसे ही असाध साध जगत सुभाव गति,
गुरमति दुरमति दुरै न दुरावई ॥ 163 ॥

लज्जा कुल अंकुस औ गुरु जन सील डील,
कुला बधू ब्रति कै पतिव्रता कहावई ।
दुसट सभा संजोग अधम असाध संग,
बहु बिभिचार धार गनिका बुलावई ।
कुला बधू सुत को बखानीअत गोत्राचार,
गनिका सुअन पिता नाम को बतावई ।
दुरमति लाग जैसे काग बन फिरै,
गुरमति हंस एक टेक जस पावई ॥ 164 ॥

मानस जनम धार संगत सुभाव गति,
'गुरते' गुरमति दुरमति बिबिध बिधानी है ।
साध संग पदवी भगति औ बिबेकी जन,
जीवन मुकति, साधू ब्रहम गिआनी है ।
अधम असाध संग चोर जार औ जूआरी,
ठग बटवारा मतिवारा अभिमानी है ।
आपने आपने रंग संग सुख मानै बिस,
गुरुमति गति गुरुमुखि पहिचानी है ॥ 165 ॥

जैसे तो असट धातु डारियत नाउ बिखै,
पारि परै तांहि तऊ वार पार सोई है ।
सोई धात अगनि मै होत है अगनि रुप,
तऊ जोई सोई पै सु घाट ठाट होई है ।
सोई धातु पारस परस पुन कंचन हवै,
मोल कै अमोलानूप रूप अविलोई है ।
परम पारस गुरुपरम पारस होत,
संगति होइ साधु संग सत संग पाई है ॥ 166 ॥

जैसे घर लागै आग भाग निकसत खान,
प्रीतम परोसी धोइ जरत बुझावई ।
गोधन हरत जैसे करत पुकार गोप,
गाऊं मै गुहार लाग तुरत छुडावई ।
बूडत अथाह जैसे प्रबल प्रवाह बिखै,
पेखत प्रैऔरा वार पार लै लगावई ।
तैसे अंतकाल जमजाल काल व्याल ग्रसे,
गुर सिख साध संग संकट मिटावई ॥ 167 ॥

निहकाम निहक्रोध निरलोभ निरमोह,
निहमेव निहटेव निरदोख बासी है ।
निरलेप निरबान निरमल निरवैर,
निरविघनाइ निरालंब अबिनासी है ।
निराहार निराधार निरंकार निरविकार,
निहचल निहभ्रात निरभै निरासी है ।
निहक्रम निहभ्रम निहस्रम निहस्वाद,
निरविवाद निरंजन सुन्न मै सन्यासी हैं ॥ 168 ॥

गुरमुखि सबद सुरति लिव साध संग,
परमद्भुत प्रेम पूरन प्रगासे हैं ।
प्रेम रंग मैं अनेक रंग ज्यों तरंग गंग,
प्रेम रस मै अनेक रस ह्वै बिलासे हैं ।
प्रेम गंध संध मैं सुगंधि सनबंध कोटि,
प्रेम सुरति अनिक अनाहद उलासे हैं ।
प्रेम आसपरस कोमलता सीतलता कै,
अनिक कथा विनोद बिसम विस्वासे हैं ॥ 169 ॥

प्रेम रंग समसरि पुजस न कोऊ रंग,
प्रेम गंध पुजिस न अनरस समान कै ।
प्रेम गंध पुजिस न कान कोउऐ सुगंध,
प्रेम प्रभुतो पूजसि प्रभुता न आन कै ।
प्रेम तोल तुलि न पुजसि तोल तुलाधार,
मोल प्रेम पुजसि न सरब निधान कै ।
एक बोल प्रेम कै पुजसि नहीं बोल कोऊ,
ग्यान उनमान अस्थकत कोटान कै ॥ 170 ॥

पूरन ब्रह्म गुर चरन कमल रज,
आनंद सहज सुख बिसम कोटानि है।
कोटन कोटान सोभ लोभ कै लुभित होइ,
कोटन कोटानि छबि छबि कै लुभान है।
कोमलता कोट लोट पोट ह्वै कोमलता के,
सीतलता कोट ओट चाहित हिरान है।
अम्रित कोटानि अनहद गद गद होत,
मन मधुकर तिह संपट समान है ॥ 171 ॥

सोवत पै सुपन चरित चरित्र देख्यो चाहै,
सहिज समाधि बिखै उनमनी जोति है।
सुरापान स्वाद मतवारा प्रति प्रसन्न ज्यों,
निझर अपार धार अनभै उदोत है।
बालक ये नाद बाद सबद विधान चाहै,
अनहद धुनै रुन झुन सुरति स्रोत है।
अकथ कथा विनोद सोई जाने जांसो बीतै,
चंदन सुगंध ज्यौ तरोवर न गोत है ॥ 172 ॥

प्रेम रस को प्रताप सोई जानै जामैं बीते,
मदन मदोन मतिवारा जानीऐ।
घूरम ह्वै घाइल सो घूमत अरन द्रिग,
मित्र सत्रता निजज्ज लजाहू लजानीऐ।
रसना रसीली कथा अकथ कै मोन ब्रत,
अनरस रहित न उतर बखानीऐ।
सुरति संकोच समसरि असतुति निन्दा,
पग डगमग जत कत बिसमानीऐ ॥ 173 ॥

तनक ही जामन कै दूध दधि होत जैसे,
तनक ही कांजी परै दूध फाट जाति है।
तनक ही बीज बोइ बिरख बिथार होइ,
तनक ही चिनग परै भसम ह्वै समात है।
तनक ही खाइ बिख होता है बिनास काल,
तनक ही अंम्रित कै अमर ह्वै गात है।
संगत असाध साध गनिका बिआहता ज्यों,
तनक ही मैं उपकार औ बिकार घात है ॥ 174 ॥

साध संग द्रिसटि दरस कै ब्रह्म ध्यान,
सोई तौ असाध संग द्रिसटि विकार है ।
साध संग सबद सुरति कै ब्रह्म ग्यान,
सोई तौ असाध संग बाद अहंकार है ।
साध संग असन बचन कै महा प्रसादि,
सोई तो असाध संग बिखम अहार है ।
दुरमति जनम मरन ह्वै असाध संग,
गुरसति साधं संग मुकति दुआर है ॥ 175 ॥

गुरमति चरम द्रिसटि दिब्य ह्वै,
दुरमति लोचन अछत अंध कंध है ।
गुरमति सुरति कै बजर कपाट खुलै,
दुरमति कठन कपाट सनबंध है ।
गुरमति प्रेम रस अंम्रित निधान पान,
दुरमति मुख दुर बचन दुरगन्ध है ।
गुरमति सहज सुभाइ न हरख सोग,
दुरमति विग्रह विरोध क्रोध संध है ॥ 176 ॥

दुरमति गुरमति संगति असाध साध,
काम चेसटा संजोग जत सतवंत है ।
क्रोध के विरोधं बिखै, सहजि संतोख मोख,
लोभ लहिरंतर धरम धीर जंत है ।
माया मोह द्रोह कै अरथ प्रमारथ सैं,
अहंमेव टेव दया द्रवीभूत संत है ।
दुक्रित सुकित चित् मित्र सत्रता सुभाव,
परउपकार औ विकार मूल मंत है ॥ 177 ॥

सतिगुर सिख रिदै प्रथम क्रिपा कै बसै,
तां पाछै करत आग्या मया कै मनावई ।
आग्या मान ग्यान गुरु परम निधान दान,
गुरगुख सुख फल निज पद पावई ।
नाम निहकाम धास सहज समाधि लिव,
अगम अगाध कथा कहित न आवई ।
जैसो जैसो भाउ कर पूजत पदारबिंद,
सकल संसार कै मनोरथ पुजावई ॥ 178 ॥

जैसे प्रिया भेटत अधान निरमान होत,
बांछत बिधान खान पान अग्रभाग है।
जनमत सुत खान पान को संजम करै,
सुत हित रस कस सकल तिआग है।
तैसे गुर चरन सरन कामना पुजाइ,
नाम निहकाम धाम अनत न लाग है।
निस अंधकार भवसागर संसार बिखे,
पंच तसकर जीत सिख ही सुजाग है ॥ 179 ॥

सतिगुरु आग्या प्रतिपालक बालक सिख,
चरन कमल रज महिमा अपार है।
सिव सनकादिक ब्रहमादिक न गंमता है,
निगम सेखादि नेति नेति कै उचार है।
चतर पदारथ त्रिकाल त्रिभुवन चाहै,
जोगि भोग सुरसरि सरधा संसार है।
पूजन के पूज अर पावन करै,
अकथ कथा बीचार बिमल बिथार है ॥ 180 ॥

गुरमुख सुख फल चाखत भई उलटि,
तन सनातन मन उनमन माने हैं।
दुरमति उलट भई है गुरमति रिदै,
दुरजन सुरजन कर पहचाने है।
संसारी सै उलटि निरंकारी भए,
बग बंस हंस भए सतिगुरु ग्याने हैं।
कारन अधीन दीन कारन करन भए,
हरन भरन भेद अलख लखाने है ॥ 181 ॥

गुरमुख सुख फल चाखत उलटि भई,
जोनि कै अजोन भए कुल अकुलीन है।
जंतन से संत औ विनासी अविनासी भए,
अधम असाध भए साध परबीन है।
लालची ललूजन ते पावन कै पूज कीने,
अंजन जगत मैं निरंजनई दीन है।
काटि माया फासी गुरु ग्रिह मैं उदासी कीने,
अनभै अभ्यासी प्रिय प्रेम रस भीन है ॥ 182 ॥

सतिगुरु दरस धिम्रान ग्रसचरज मै,
दरसनी होत खट दरस ग्रतीत है।
सतिगुर चरन सरन निहकाम धाम,
सेवक न ग्रान देव सेव की न प्रीत है।
सतिगुर सबद सुरति लिव मूल मंत्र,
ग्रान तंत्र मंत्र की न सिखन प्रतीत हैं।
सतिगुरु कृपा साध संगति पंगत सुख,
हंस बंसमानसर ग्रनत न चीत है ॥ 183 ॥

घोंसला मों ग्रंडा तजि उडत ग्राकासचारी,
संध्या समै ग्रंडा हेत चेत फिर ग्रावई।
तिरीग्रा तिग्राग सुत जात बन खंड बिखै,
सुत की सुरति ग्रिह ग्राइ सुख पावई।
जैसे जल कुंडि करि छाडिग्रत जलचरी,
जब चाहे गहि लेत मनि भावई।
तैसे चित चंचल भ्रमत है चतुर कुंट,
सतिगुर बोहिथ बिहंग ठहिरावई ॥ 184 ॥

चतुर बरन मैं न पाईये बरन तैसो,
खट दरसन मैं न दरसन जोति है।
सिमरत पुरान बेद शासतन समान खान,
राग नाद बाद मैं न सबद उदोत है।
नाना बिंजनादि स्वाद ग्रंतर न प्रेम रस,
सकल सुगंधि में न गंध संधि होत है।
उसन सीतलता सपरस ग्रपरस न,
गुरमुख सुख फल तुलि ग्रोत पोत है ॥ 185 ॥

लिखन पढ़न तौ लौ जानै निसंतर जौ लौ,
कहित सुनत है बिदेस के संदेस कै।
देखत ग्रौर देखीग्रत इत उत दोइ होइ,
भेदत परसपर बिरह ग्रवेस कै।
खाइ खाइ खोजी होइ खोजत चतर कुंट,
म्रिग मद जुगत न जानत प्रवेस कै।
गुरसिख संध मिले ग्रंतरजामी,
स्वामी सेव सेवक निरंतर ग्रदेस कै ॥ 186 ॥

दीपक पतंग संग प्रीति इक अंगी होइ,
चंद्रमा चकोर धन चात्रिक न होत है।
चकई औ सूर, जल मीन, ज्यों कमल अलि,
कासट अगनि, म्रिग नाद को उदोत है।
पित सुत हित अरु भामिनी भतार गति,
माया औ संसार द्वार मिटत न छोत है।
गुरसिख संगत मिलाप को प्रताप साचो,
लोक परलोक सुखदाई ओत पोत है ॥ 187 ॥

लोगन मैं लोगाचार अनिक प्रकार प्यार,
मिथन ब्योहार दुखदाई पहिचानीऐ।
वेद मरजाद मैं कहत है कथा अनेक,
सुनीऐ न तैसी प्रीत मन मैं न मानीऐ।
ग्यान उनमान मैं न जगत भगत बिखै,
राग नाद बाद आदि अंत है न जानीऐ।
गुरसिख संगत मिलाप को प्रताप जैसो,
तैसो न त्रिलोक बिखै और ठौर आनीऐ ॥ 188 ॥

पूरन ब्रहम गुरु पूरन क्रिपा जो करै,
हरे होमै रोग रिदै निम्रता निवास है।
सबद सुरति लिवलीन साध संग मिल,
भावनी भगति भाइ दुबिधा बिनास है।
प्रेम रस अम्रित निधान पान पूरन ह्वै,
बिसम बिस्वास बिखै अनभै अभ्यास है।
सहिज सुभाइ चाइ चिंता मैं अतीत चीत,
सतिगुर सतिगुर सति गुरुदास है ॥ 189 ॥

गुरमुखि सबद सुरति लिव साध संग,
त्रिगुन अतीत चीत आसा मै निरास है।
नाम निहकाम धाम सहिज सुभाइ रिदै,
बरतै बरतमान ग्यान को प्रगास है।
सूखम सथूल एक एक औ अनेक मेक,
ब्रहम बिबेक टेक ब्रहम बिस्वास है।
चरन शरन लिव आपा खोइ होइ रेन,
सतिगुर सतिगुर सति गुरुदास है ॥ 190 ॥

होमै अभिमान कै अग्यानता अवग्या गुर,
निंदा गुरदासन केनाम गुरदास है ।
महुरा कहावै मीठा गई सो कहावै आई,
रुठी को कहित तूठी होत उपहास है ।
बांझ कहावै सपूती दुहागनि सुहागनि,
कुरीति सुरीति काट्यो नकटा को नास हैं ।
बांवरो कहावैं भोरो आंधरै कहैं सुजाखो,
चंदन समीप जैसे बास मैं न बास है ॥ 191 ॥

गुर सिख एक मेक रोम न पुजस कोटि,
होम जग भोग नई वेद पूजाचार है ।
जोग ज्ञान ध्यान अध्यातम रिध सिध निधो,
जप तप संजामदि अनिक प्रकार है ।
सिम्रित पुरान बेद शासत्र औ संगीत,
सुरसुरि देव सबल माया बिसथार है ।
कोटन कोटानि सिख सगत असंख जाकै,
स्री गुर चरन नेति नेति नमसकार है ॥ 192 ॥

चरन कमल रज गुर सिख माथै लागी,
वांछित सकल गुर सिख पग रेन है ।
कोटिन कोटान कोटि कमला कलपतरु,
पारस अम्रित चिंतामणि कामधेन है ।
सुर, नर, नाथ, मुनि त्रिभवन और त्रिकाल,
लोग बेद ग्यान उनमान जेन केन है ।
कोटिन कोटान सिख संगत असंख जाके,
नमो नमो गुरसिख सुख फल देन है ॥ 193 ॥

गुरुसिख संगति मिलाप को प्रताप अति,
भावनी भगति भाइ चाइकै चईलै है ।
द्रिसटि दरस लिव अति असचरज मै,
बचन तंबोल संग रंग ह्वै रंगीले है ।
सबद सुरति लिव लीन जल मीन गति,
प्रेम रस अम्रित कै रसिक रसीले है ।
सोभा निधि सोभ कोट ओट लोभ के लुभित,
कोटि छबि छाह छिपै कै छबीले है ॥ 194 ॥

गुरसिख एकमेक रोम की अकथ कथा,
गुरसिख साध संग महिमा को पावई।
एक ओअंकार के बिथार को न पारावार,
सबद सुरति साध संगति समावई।
पूरन ब्रहम गुर साध संग मै निवास,
दासन दासान मति अपा न जतावई।
सतिगुरु गुर, गुरुसिख, साध संगति है,
ओत पोत बांकी जोति वाही बनिआवई ॥ 195 ॥

पवनहि पवन मिलत नहीं पेखीअत,
सलिलं सलिल मिलत नाहि पहिचानीऔ।
जोती मिले जोति होत भिन्न भिन्न कैसे कर,
भसमहि भसम समानी कैसे जानीऔ।
कैसे पंच तत मेल खैल होत पिंड प्रान,
बिछुरत पिंड प्रान कैसे उसमानीऔं।
अबिगति गति अति बिसम असचरज मै,
ग्यान ध्यान अगमिति कैसे उन आनियै ॥ 196 ।

चार कुंट सात दीप मै न नवखंड बिखै,
दहदिसं देखियै न बन ग्रिह जानीऔ।
लोग वेद ग्यान उनमान कै न देख्यौ सुनियो,
स्वरग पैयाल म्रित मण्डल न मानीऔं।
भूत औ भविखत न वरतमान चारों जुग,
चतुर बरन खट दरस न ध्यानीऔ।
गुर सिख संगति मिलाप को प्रताप जैसो,
तैसो और ठौर सुनीऔ न पहिचानीऔ ॥ 197 ॥

ऊख मै पयूख-रस रसना रहित होइ,
चंदन सुवास तास नासका न होत है।
नाद वाद सुरति बिहून बिसमादि गति,
बिबिध बरन बिन द्रिसटि सुजोति है।
पारस परस न सरपस ऊसन सीत,
कर चरन हीन धर औषधी उदोत है।
जाहि पंच दोख निरदोख मोख पावै कैसे,
गुरमुख सहज संतोख ह्वै अछोत है ॥ 198 ॥

निहफल जिहवा हैसबद सुम्रादि हीन,
निहफल सुरति न अनहदि नाद है।
निहफल द्रिसटि न आपा-आर देखीअत,
निहफल स्वास नही बासु परमादि है।
निहफल कर गुर पारस परस बिन,
गुरमुख मारग बिहून पग बाद हैं।
गुरमुख अंग अग पंग सरबंग लिव,
द्रिसटि सुरति साध संगति प्रसादि है ॥ 199 ॥

पसुआ मनुष देहि अंतरु इहै,
सबद सुरति को बिबेक अबिवेक है।
पसु हरिआउ कहयो सुन्यो अनसुन्यो करै,
मान जनम उपदेस रिदै टेक है।
पसुआ सबद हीन जिहवा न बोल सकै,
मानस जनम बोलै बचन अनेक है।
सबद सुरति सुनि समझि बोलै बिबेकी,
नातर अचेत पसु प्रेत हूं मैं एक है ॥ 200 ॥

सबद सुरति हीन पसुआ पवित्र देह,
खड़ खाइ अम्रित प्रवाहि को सुभाउ है।
गोबर गोमूत्र सूत्र परम पवित्र भए,
मान देही निषिध अम्रित अप्याउ है।
बचन बिबेक टेक साधन कै साध भए,
अधंम असाध खल बचन दुराउ है।
रसना अम्रित रसि रसिक रसाइनि हवै,
मानस बिखै धर बिखम बिख ताउ है ॥ 201 ॥

पसू खड़ि खात खल सबदि सुरति हीन,
मौन को महातम पै अम्रित प्रवाह जी।
नाना मिसटान खान पान को मानुस मुख,
नसन रसीली होइ सोई भली ताहि जी।
बचन बिबेक टेक मानस जनम फल,
वचन बिहून पसू परमिति आहि जी।
मानुस जनमु गति बचन बिबेक हीन,
बिखधर बिखम चकित चित चाहि जी ॥ 202 ॥

दरस ध्यान बिहा व्यापै द्रिगन होई,
स्रवन बिरह व्यापै मधुर बचन कै ।
संगम समागम बिरहों व्यापै जिहवा कैं,
पारस परस अंकमाल की रचन कैं ।
सिहजा गवन बिहा व्यापै चरन होई,
प्रेम रस बिरह सबंग हवै सचन कै ।
रोम रोम बिरहा बिथा कै बिहवल भई,
ससा ज्यों बहीर पीर प्रबल तचन कै ।। 203 ।।

किंचित कटाछ क्रिपा बदन अनूप रूप,
अति अस्चरज मय नाइका कहाई है ।
लोचन की पुतरी मै तनक तारका स्याम,
ताकौ प्रतिबिंब तिल बनिता बनाई हैं ।
कोटिन कोटानि छबि तिल मै छपत छाह,
कोटिन कोटानि शोभ लोभ ललचाई है ।
कोटि ब्रहमांड के नाइक की नाइका भई,
तिलक तिलक सरब नाइका मिटाई है ।। 204 ।।

सुपन चरित्र चित्र बानक बने बचित्र,
पावन पवित्र मित्र आज मोरे आंए हैं ।
परम दयाल लाल लोचन बिसाल मुख,
बचन रसाल मधु मधुर पीआए हैं ।
सोभत सेजासन बिलासन दै अंकमाल,
प्रेम रस बिसम हवै सहज समाए हैं ।
चात्रिक सबद सुन अखीआ उघर गई,
भई जल मीन गति बिरह जगाए हैं ।। 205 ।।

देखबे को द्रिसटि न दरस द्रिखाइबे कौ,
कैसे प्रिय दरसन देखीअै द्रिखाईअै ।
कहिबे को सुरति है न स्रवन सुनबे कौ,
कैसे गुन निध गुन सुनीअै सुनाईअै ।
मन मै न गुरमति गुरमति मै न मन,
निहचल हवै न उनमन लिवलाईयै ।
अंग अंग भंग, रंग-रूप-कुल-हीन, दीन,
कैसे बहु नाइक की नाइका कहाईयै ।। 206 ।।

बिरह बियोग रोग दुखत ह्वै बिरहनी,
कहित संदेस पथिकन पै उसास ते ।
देखहु त्रिगद जौनि प्रेम कै परेबा, गुर,
पर कर, नारि देख टूटत अकास से ।
तुम तो चतर दस विद्या के निधान प्रिया,
त्रिया न छावहु हाप बिरहरिय त्रास ते ।
चरन विमुख दुख तारिक चमतकार,
हेरत हिराहि रवि दरस प्रगास ते ॥ 207 ॥

जोई प्रिय भावै तांहि देख औ दिखावै आप,
द्रिसटि दरस मिल सोभा दै सुहावई ।
जोई प्रिय भावै मुख बचन सुनावै तांहि,
सबद सुरति गुर ग्यान उपजावई ।
जोई प्रिय भावै दस दिस प्रगटावै तांहि,
सोई बहु नाइक की नाइका कहावई ।
जोई प्रिय भावै सिहजासन मिलावै तांहि,
प्रेम रस बस करि अपिउ पीआवई ॥ 208 ॥

जोई प्रिय भावै तांहि सुंदरता कै सुहावे,
सोई सुंदरी कहावै छबि कै छबीली है ।
जोई प्रिय भावै तांहि बानक बधू बनावै,
सोई बनिता कहावै रंग मैं रंगीली है ।
जोई प्रिय भावै ताकी सभै कामना पुजावै,
सोई कामिनी कहावै सील कै सुसीली है ।
जोई प्रिय भावै तांहि प्रेम रस लैं पीआवै,
सोई प्रेमनी कहावै रसिक रसीली है ॥ 209 ॥

बिरह बियोग रोग सेत रूप ह्वै कृतास,
टूक टूक भए पाती लिखीऐ विदेस ते ।
बिरह अगनि से सवानी मास क्रिसत्र ह्वै,
बिरहनी भेख लेख बिखम संदेस ते ।
बिरह बियोग रोग लेखनि की छाती फटी,
रुदन करत लिखै आतम अवेस ते ।
बिरहों उसासन प्रकासन दुखित गति,
बिरहनी कैसे जीए बिरह प्रवेस ते ॥ 210 ॥

पूरब संजोग मिल सुजन सगाई होत,
सिमरत सुनि सुनि स्रवन संदेस कै ।
बिधि से बिवाहे मिल द्रिसटि दरस लिव,
विद्यमान ध्यान रस रूप रंग भेस कै ।
रैन सैन सभै स्रुति सबद बिबेक टेक
आतम गिआन परमातम प्रवेस कै ।
ग्यान ध्यान सिमरन उल्लंघ इकत्र होइ,
प्रेम रस बस होत बिसम अवेस कै ॥ 211 ॥

एक से अधिक एक नाइका अनेक जांकि,
दीन कै दयाल हवै क्रिपाल क्रिपाधारी है ।
सजनी रजनी—सगि प्रेम रस औसर मैं,
प्रबले अधीन गति बेनती उचारी है ।
जोई जोई आग्या होइ सोई सोई मान जान,
हाथ जोरै अग्र भाग होइ आग्याकारी है ।
भावनी भगति भाइ चाइ कै चईलो भंजो,
सफल जनम धन्न आज मेरी बारी है ।। 212 ॥

प्रीतम की पुतरी मैं तनिक तारिका स्याम,
तांको प्रतिबिंब तिल तिलक त्रिलोक को ।
बनित बदन पर प्रगट बनाइ राख्यौ,
कामदेव कोटि लोट पोट अविलोक को ।
कोटिन कोटान रूप की अनूप रूप छबि,
सकल सिंगार को सिंगार स्रब थोक को ।
किंचत कटाछ क्रिपा तिल की अतुल सोभा,
सरसती कोट मान भंग ध्यान कोक को ॥ 213 ॥

श्री गुरु दरस ध्यान खट-दरसन देखे,
सकल दरस समदरस दिखाइ है ।
श्री गुरु सबद पंच सबद गिआन गंम,
सरब सबद अनहद समझाइ है ।
मंत्र उपदेस पवेस कै अवेस रिदै,
आदि कौ आदेस के ब्रहम ब्रहमाइ है ।
ज्ञान ध्यान सिमरन प्रेम रस रसिक हवै,
एक औ अनेक के बिबेक प्रगटाइ है ॥ 214 ॥

सति बिन संजमु न पति बिना पूजा होइ,
सचु बिन सोच न जनेऊ जत हीन है।
बिनु गुर दीखिआ न ग्यान बिन द्रस ध्यान,
भाउ बिन भगति न कथनी भय मीन।
सांति न संतोख बिन सुख न सहज बिन,
सबद सुरति बिन प्रेम न प्रवीन है।
ब्रह्म बिबेक बिनु हिरदै न एक टेक,
बिनु साध संगति न रंग लिवलीन है॥ 215॥

चरन कमल मकरंद रस लुभित ह्वै,
चरन कमल तांहि जग मधुकर है।
श्री गुरु सबद धुनि सुनि गद मद होइ,
अम्रित बचन तांहि जगत् उधर है।
किंचित कटाछ क्रिपा गुर दया निधान,
सरब निधान दान दोख दुख हर है।
श्री गुरु दासन दास दासन दासान दास,
तास न इंद्रादि ब्रह्मादि समसर है॥ 216॥

जब ते परम गुरु चरन सरनि आए,
चरन सरनि लिव सकल संसार है।
चरन कमल मकरंद चरणाम्रित कै,
चाहित चरन रेन सकल अकार है।
चरन कमल सुख संपट सहज धरि,
निहचल मति परमारथ बीचार है।
चरन कमल गुर महिमा अगाध बोध,
नेति नेति नमो नमो कै नमस्कार है॥ 217॥

चरन कमल गुर जबते रिदै बसाए,
तबते सथिर चित्त अनत न धावई।
चरन कमल मकरंद चरणाम्रित कै,
प्रापति अमरपद सहज समावई।
चरन कमल गुरु जब्र ते धियान धारे,
आन ग्यान ध्यान सरबंग बिसरावई।
चरन कमल गुर मधुप कमल गति,
मन मनसा थकत निज ग्रिह आवई॥ 218॥

बारी बहु नाइक को नाइका पिआरी केरी,
घेरी आन प्रबल ह्वै निद्रा नैन छाइ कै।
प्रेमिनो पतिव्रता चईली प्रिय आगम की,
निद्रा को निरादन कै सोई न भय भाई कै।
सखी हुती सोत भई गई सुखदायक पै,
जहां के तहां लै राखै संगम सुलाइ कै।
सुपन चरित्र मे न मित्रहि मिलन दीनी,
जस रूप जामनी न निबहै बिहाइ कै ॥ 219 ॥

रूप हीन, कुल हीन, गुन हीन, ग्यान हीन,
सोभा हीन, भाग हीन, तप हीन बावरी।
द्रिसटि दरस हीन, सबद सुरति हीन,
बुधि बल हीन सूधे हसत न पावरी।
प्रीत हीन, रीति हीन, भाइ, भै प्रतीत हीन,
चित्त हीन, बित्त हीन सहज सुभावरी।
अंग अंग हीन दीनाधीन पराचीन लग,
चरन सरनि कैसे प्रापति है रावरी ॥ 220 ॥

जननि सुतहि बिख देत हेत कौन राखै,
घर मूसे पाहरूआ कहो राखीऐ।
करीआ जौ बोरै नाव कहो कैसे पावै पार,
आगुआ ऊबाट पारै, कापै दीन भाखीऐ।
खेत जो खाइ बार, कौन धाइ राखनहार,
राज करे अन्याउ पूछे कौन साखीऐ।
रोगीऐ जो बैद मारै, मित्र जो कमावै द्रोह,
गुर न मुकति करै कापै अभिलाखीऐ ॥ 221 ॥

मन मधुकर गति भ्रमत चतर कुंट,
चरन कमल सुख संपट समाईए।
सीतल सुगंध अति कोमल अनूप रूप,
मधु मकरंद रस अनत न धाईयै।
सहज समाधि उनमन जगमग जोति,
अनहद धुनि रुणझुनि लिव लाईए।
गुरमुख बीस इकईस सोहं सोई जानै।
आप अपरंपर अमर पद पाईए ॥ 222 ॥

मन म्रिग, म्रिगमद अछत अंतरगति,
भूल्यो भ्रम खोजत फिरत बनमाही जी ।
दादर सरोज गति एकै सरवरु बिखै,
अंतर दिशंतर हवै समझत नाही जी ।
जैसे बिखिआधर तजे न बिखबिखम को,
अहिनि बावन-बिरख लपटाही जी ।
जैसे नरपति सुपनंतर भेखारी होइ,
गुरमुख जगत मैं भरम मिटाही जी ॥ 223 ॥

बाइ हवै बघूला बाइ मंडल फिरै तो कहा,
बासना की आगि जागि जुगति न जानीऐ ।
कूप जल गरो बांधे निकसे न हवै समुद्र,
चली हवै उडै न खगपति उनमानीऐ ।
मूसा बिल खोदि न जुगीसर गुफा कहावै,
सरप हवै चिरंजीव बिख न बिलानीऐ ।
गुरमुख त्रिगुण अतीत चीत हवै अतीत,
होमै खोइ होइ रेन कामधेन मानीऐ ॥ 224 ॥

सबद सुरति लिव गुरसिख सन्धि मिले,
आतम अवेस परमातम प्रवीन है ।
तत्तै मिल तत्त स्वादि बूंद मुकताहल हवे,
पारस कै पारस परसपर कीन है ।
जोति मिलि जोति जैसे दीप कै दिपत दीप,
हीरै हीरा बेधीअति आपै आपा चीन है ।
चन्दन बनासपती बासना सुबास गति,
चतर बरन जन कुल अकुलीन है ॥ 225 ॥

गुरमति सति रिदै सति रूप देखे द्रिग,
सतिनाम जिहवा कै प्रेम रस पाए है ।
सबद बिबेक सति स्रवन सुरति नाद,
नासका सुगंध सति आघ्रन अघाए हैं ।
संत चरनाश्रित हसत अविलंब सति,
पारस परस होइ पारस दिखाए हैं ।
सति रूप सतिनाम सतिगुर ग्यान ध्यान,
गुरसिख संधि मिले अलख लखाए हैं ॥ 226 ॥

आतम त्रिविधीजत्र कत्र सैं इकत्र भए,
गुरमत सति निहचल मन माने है ।
जग जग—जीवन में जग-जीवन है,
पूरन ब्रहम ग्यान ध्यान उर आने है ।
सूखम स्थूल मूल एक ही अनेक मेक,
गोरस गोबंस गति प्रेम पहिचाने है ।
कारन मैं कारन करन चित्र मैं चितेरो,
जंत धुनि जंत्री जन कै जनक जाने है ।। 227 ।।

नाइक है एक अरु नाइका असट तांकै,
एक एक नाइका के पांच पंच पूत है ।
एक पूत ग्रिह चारि चारि नाती भए,
एकै एकै नाती दोइ पतनी प्रसूति हैं ।
ताह ते अनेक पुन एकैएकै पांचि पांचि,
तांते चार चार सुत संतति संभूत हैं ।
तांते आठ आठ सुता, सुता सुता आठ सुत,
ऐसो परिवार कैसे होइ एक सूत है ।। 228 ।।

एक मन आठ खंड खंड खंड पाँच टूक,
टूक टूक चार फारि फारि दोइ फार है ।
ताहू ते पईसे औ पईसो एक पांच टांक,
टांक टांक मासे चार, अनिक प्रकार है ।
मासा एक आठ रत्ती, रत्ती आठ चावर की,
हाट हाट कनु कनु तोल तुलाधार है ।
पुर पुर पूर रहे सकल संसार बिखै,
बस आवै कैसे जांको एतो विसतार है ।। 229 ।।

खगपति परबल पराक्रमी परमहंस,
चातर चतर मुख चपला चपल है ।
भुज बली अशट भुजा ताके है चालीसकर,
एक सौ सु साठ पाउ चाल चला चल है ।
जाग्रत सुपन अहिनिसि दहिदिस धावे,
त्रिभुवन प्रति होइ आवै एक पल है ।
पिंजरी मैं अच्छत उडत पहुंचै न कोऊ,
पुर पुर पर गिर तर जल थल है ।। 230 ।।

जैसे पंछी उडत फिरत है अकासचारी,
जारि डारि पिंजरी मै राखीयति आन कै।
जैसे गजराज गहिबर बन मैं मदन,
बस हवै, महावत के अंकसहि मान कै।
जैसे बिखियाधर बिखम बिल मै पाताल,
गहे सापहेरा ताहि मत्रण की कान कै।
तैसे त्रिभुवन प्रति भ्रमंत चंचल चित,
निहचल होत मति सतिगुर ग्यान कै ॥ 231 ॥

रचना चरित चित्र बिसम बचित्र पुनः
एक मैं अनेक भांति अनिक प्रकार है।
लोचन मैं द्रिसटि, स्रवन मैं सुरति राखी,
नासका सुबास रस रसना उचार है।
अंतर ही अंतर निरंतरीन स्रोतन मैं,
काहू की न कोऊ जानै बिखम बिचार है।
अगम चरित्र चित्र जानिऐ चितेरो कैसो,
नेति नेति नेति नमो नमो नमसकार है ॥ 232 ॥

माया छाया पंच दूत भूत उनमाद ठट,
घट घट घटिका मै सागर अनेक है।
औध पल घटिका जुगादि परजंत आसा,
लहिर तरंग मैं न तृसना की टेक है।
मन मनसा प्रसंग धावत चतुर कुंट,
किनक मैं खंड ब्रहमंड जावदेक है।
आधि कै बिआधि कै उपाधि कै असाध मन,
साधवे को चरन सरन गुर एक है ॥ 233 ॥

जैसे मन लागत है लेखक की लेखै बिखै,
हरि यस लिखत न तैसो ठहिरावई।
जैसो मन बनज बिउहार के बिथार बिखै,
सबद सुरति अवगाहन न भावई।
जैसो मन कनिक और कामनी सनेह बिखै,
साध संग तैसो नेह पल न लगावई।
माया बंध धंध बिखै आवध बिहाइ जाइ,
गुर उपदेस हीन पाछै पछुतावई ॥ 234 ॥

जैसो मन धावै पर तन धन दूखन लौ,
स्री गुर सरन साध संग लौ न ग्रावई ।
जैसो मन लागै पराधीन हीन दीनता मैं,
साध संग सतिगुरु सेवा न लगावई ।
जैसे मन किरति-बिरति मैं मगन होइ,
साध संग कीरतन मैं नहि ठहिरावई ।
कूकर जियों चउच काढि चाकी चाटिबे को जाइ,
जांके मीठी लागी देखे ताही पाछै धावई ॥ 235 ॥

सरवर में न जानी दादर कमल गति,
म्रिग म्रिगमद गति अंतर न जानी है ।
मन महिमा न जानी ग्रहि बिख बिखन कै,
सागर मैं संख निधि हीन बकबानी है ।
चंदन समीप जैसे बोस निरगंध कंध,
उलूग्रै ग्रलख दिन दिनकर धयानी है ।
तैसे बांझ बधू मम स्री गुर पुरख भेट,
निहफल सोंबल जिउ होमैं अभिमानी है ॥ 236 ॥

बरखा चतुर मास भिदै न पखान सिला,
निपजै न धान पान ग्रनिक उपाव कै ।
उदित बसंत परफुलत बनासपती,
मौले न करीर ग्रादि बंस के सुझाव कै ।
सिहजा संजोग भोग निहफल बांझ बधू,
होइ न ग्रधान दुख दुबिधा दुराव कै ।
तैसे ममकाग साध संगत मराल सभा,
रह्यो निराहार मुकताहल ग्रपिग्राब कै ॥ 237 ॥

कपट सनेह जैसे ढेकुली नहावै सीस,
ताके बसि होइ जलु बंधनु मैं ग्रावई ।
डारि दोत खेत ह्वै प्रफुलत सफल तांते,
ग्राप निहफल पाछै बोझ उकतावई ।
ग्ररध उरध होइ ग्रनुक्रम कै ही जब,
परउपकार ग्रबिकार न मिटावई ।
तैसे ही ग्रसाध साध संगत सुभाव गति,
गुरमति दुरमति सुख दुख पावई ॥ 238 ॥

जैसे तउ कुचील अपवित्रता अतीत माखी,
राखी न रहित जाइ बैठे इछाचारी है।
पुन: जो अहार सनबंध परवेस करै,
जरै न अजर उकलेद खेद भारी है।
बधक बिधान ज्यों उद्यान में टाटी दिखाइ,
करै जीव घात अपराध अधिकारी है।
हिरदै बिलाउ अर नैन बग धयानी प्रानी,
कपट सनेही देही अंत हवै दुखारी है ॥ 239 ॥

गऊ मुख बाघ जैसे बसै म्रिग-माल बिखै,
कंगना पहिर ज्यों बलाई खग मोहई।
जैसे बग धयान धार करत आहार मीन,
गनिका सिंगार साजि बिभचार जोहई।
पंच बटमारो भेख धारी जयों संघाती होइ,
अंत फांसी डारि मारै द्रोह कर द्रोहई।
कपट सनेह कै मिलत साध संगत मैं,
चंदन सुगंध बांस गठीलो न बोहई ॥ 240 ॥

आद ही अधान बिखै होइ निरमान प्राणी,
मास दस गनत ही गनत बिहात है।
जनमत सुत सब कुटंब आनंद मई,
बाल-बुधि गनत बितीत निस प्रात है।
पढ़त बिवाही अते जोबन मैं भोग बिखै,
बनज बिउहार के बिथार लपटात है।
बढत बिआज काज गनत अवध बीती,
गुर उपदेस बिन जमपुर जात है ॥ 241 ॥

जैसे चकई चकवा बधिक इकत्र कीने,
पिंजरी मैं बसै निस दुख सुख माने है।
कहत परसपर कोटि सुरज़न वारों,
उट दुरजन पुर जांहि गहि आने है।
सिमरन मात्र कोटि आपदा संपदा कोटि,
संपदा आपदा कोटि प्रभ बिसराने हैं।
सति रूप सति नाम सति गुर ग्यान धयान,
सतिगुर मति सति सत कर जाने है ॥ 242 ॥

पुनः कत पंच तत्त मेल खेल होइ कैसे,
भ्रमत अनेक जोनि कुटंब संजोग है।
पुनः कत मानस जनम निरमोल होइ,
द्रिसटि सबद स्रुति रस कस भोग है।
पुनः कत साध संग चरन सरन गुर,
ग्यान धयान सिम्रन प्रेम सु प्रयोग है।
सफल जनम गुरमुख सुखुफल चाख,
जीवन मुकति होइ लोग में अलोग है ॥ 243 ॥

रचन चरित्र चित्र बिसम बचित्र घुन,
चित्रहि चितै चितै चितेरा उर आनिऐ।
बचन बिबेक टेक एक ही अनेक मेक,
सुनि धुनि जंत्र जंतधारी उनमानीऐ।
असन बसन धन सरब निधान दान,
करना निधान सुखदाई पहिचानीऐ।
कथा बकता स्रोता दाता भुगता सरबग्य,
पूरन ब्रहम गुर साध संग जानीऐ ॥ 244 ॥

लोचन स्रवन मुख नासका हसत पग,
चिहन अनेक मन मेक जैसे जानिऐ।
अंग अंग पुसट तुसटमान होत जैसे,
एक मुख सवाद रस अरपति आनिऐ।
मूल एक साखा पर साख जल जिउं अनेक,
ब्रहम बिबेक जावदेक उर आनिऐ।
गुरमुख दरपन देखीअति आपा आप,
आतम अवेस परमातम गिआनिऐ ॥ 245 ॥

जत सत सिंघासन सहज संतोख मंत्री,
धरम धीरज धुजा अविचल राज है।
सिव नगरी निवास दया दुलहनी,
भाग तो भंडारी भाउ भोजन सकाज है।
अरथ बिचार परमारथ कै राजनीति,
छत्रिपति छमा छबि छाया छबि छाज है।
आनद समूह सुख सांति परजा प्रसन्न,
जग मग जोति अनहदि धुनि बाज है ॥ 246 ॥

पांचो मुद्रा, चक्र-खट भेद चक्रवै कहाए,
उलंघि त्रिबेनी त्रिकुटी त्रिकाल जानै हैं।
नवघर जीति जिन आसन सिंघासन मैं,
नगर-अगम पुर जाइ ठहिराने हैं।
आन सर तयाग मानसर निहचल हंस,
परम निधान बिसमहि बिसमाने है।
उनमन मगन गगन अनहद धुनि,
बाजत नीसान ग्यान धयान बिसराने है ॥ 247 ॥

अविघटि उतरि सरोवर मजन करै,
जपत अजॅपा जाप अनभै अभयासी है।
निझर अपार धार बरखा अकास बास,
जगमग जोति अतहद् अविनासी है।
आतम अवेस परमातम प्रवेस कै,
अधयातम ग्यान धयान रिधि सिधि निध दासी है।
जीवन मुकति जग जीवन जुगति जानी,
सलल कमल गति माया मै उदासी है ॥ 248 ॥

चरन कमल सरन गुर कंचन भए मनूर,
कंचन पारस भए पारस परसि कै।
बाइस भए हैं हंस, हंस ते परमहंस,
चरन कमल चरनाम्रित सु रस कै।
सेंवल सकल फल सकल सुगंध बांस,
सूकरी से कामधेनु करुना बरस कै,
स्री गुर चरन रजु महिमा अगाध बोध,
लोग बेद ग्यान कोटि बिसम नमस कै ॥ 249 ॥

कोटिन कोटान असचरज असचरज मै,
कोटिन कोटानि बिसमादि बिसमाद है।
अद्भुत परमद्भुत हवै कोटिन कोटि,
गद-गद होत कोटि अनहद् नाद है।
कोटिन कोटानि उनमनी गनी जात नहि,
कोटिन कोटानि कोटि सुन्न मंडलादि है।
गुरमुख सबद सुरति लिव साध संग,
अंत कै अनंत प्रभु आदि परमादि है ॥ 250 ॥

गुरमुख सबद सुरति लिव साध संग,
उलटि पवन मन मीन की चपल है ।
सोहं सो अजपा जाप चीनीअत आपा आप,
उनमनी जोति को उदोत ह्वै प्रबल है ।
अनहदि नादि बिसमादि रुनि झुनि सुनि,
निझर झरन बरखा अम्रित जल है ।
अनभै अभयास को प्रगाम असचरज मै,
बिसम बिस्वास बास ब्रहमसथल है ॥ 251 ॥

द्रिसटि दरस समदरस धिआन धार,
दुबिधा निवार एक टेक गहि लीजिऐ ।
सबद सुरति लिव असतुति निन्दा छाडि,
अकथ कथा बीचार मौन ब्रत कीजीऐ ।
जग जीवन मै जीवन, जग जगजीवन कै,
जानिऐ जीवन मूल जुग जुग जीजीऐ ।
एक ही अनेक औ अनेक एक सरब मैं,
ब्रहम बिबेक टेक प्रेम रस पीजीऐ ॥ 252 ॥

अबिगति गति कत आवत अंतरगति,
अकथ कथा सु कहि कैसे कै सुनाइऐ ।
अलख अपार किधौं पाईअति पार कैसे,
दरस अदरस को कैसे कै दिखाइऐ ।
अगम अगोचर अगहु गहीऐ धौ कैसे,
निरालंब को न अवलंब ठहिराइऐ ।
गुरमुख संधि मिलै सोई जाने जामै बीतै,
बिसम बिदेह जल बूंद ह्वै समइऐ ॥ 253 ॥

गुरमुख सबद सुरति साध संग मिल,
पूरन ब्रहम प्रेम भगत बिबेक है ।
रूप कै अनूप रूप अति असचरज मैं,
द्रिसटि दरस लिव टरत न टेक है ।
राग नाद बाद बिसमाद कीरतन समै,
सबद सुरति गिआन गोसट अनेक है ।
भावनी भै भाइ चाइ चाह चरनाम्रित की,
आस प्रिय सदीव अंग अंग जावदेक है ॥ 254 ॥

होम जग नईवेद ग्रादि कै पूजा ग्रनेक,
जप तप संजम ग्रनेक पुन्न दान कै ।
जल थल गिर तर तीरथ भवन भूग्र,
हिमाचल धारा ग्रग्र ग्ररपन प्रान कै ।
राग नाद बाद ए संगीत बेदपाठ बहु,
सहिज समाध साफ कोटि जोग धनान कै ।
चरन सरन गुर सिख साध संग पर,
वार डारों निग्रह हठ जतन कोटान कै ॥ 255 ॥

मधुर बचन समसरि न पुजस मधु,
करक सबद सर बिख न बिखम है ।
मधुर बचन सीतलता मिसटान पान,
करक सबद सतपतकट कम है ।
मधुर बचन कै तृपत ग्रौ संतोख सांति,
करक सबद ग्रसंतोख चोख स्रम है ।
मधुर बचन लगि ग्रगम सुगम होइ,
करक सबद लगि सुगम ग्रगम है ॥ 256 ॥

गुरमुख सबद सुरति साध संग मिल,
भान ग्यान जोति के उदोत प्रगटायो है ।
नाभ सरवर बिखै ब्रहम कमल दल,
परफुलित होइ बिमल जल छायो है ।
मधु मकरंद रस प्रेम पर पूरन कै,
मनु मधुकर सुख संपट समायो है ।
ग्रकथ कथा बिनोद मोद ग्रौ ग्रमोद लिव,
उनमन् हवै मनोद ग्रनत न धायो है ॥ 257 ॥

जैसे काचो पारो महां बिखम न खायो जाइ,
मारे निहकलंक हवै कलंक न मिटावई ।
तैसे मन सबद बीचारि मार हउमै मेटि,
परउपकारी हवै बिकार न घटावई ।
साध संग ग्रधम ग्रसाध हवै मिलत जब,
चूना जयों तंबोल रस रंग प्रगटावई ।
तैसे ही चंचल चित भ्रम चतुर कुंट,
चरन कमल सुख-संपट समावई ॥ 258 ॥

गुरमुख मारग ह्वै धावत बरज राखे,
सहज बिस्राम धाम निहचल बास है ।
चरन सरन रज रूप कै अनूप ऊप,
दरस दरसि समदरसि प्रगास है ।
सबद सुरति लिव बजर कपाट खूले,
अनहद नाद बिसमाद को बिस्वास है ।
अम्रित बाणी अलेख लेख कै अलेख भये,
परदछना कै सुख दासन के दास है ॥ 259 ॥

गुर सिख साध रूप रंग अंग अंग छबि,
देह कै बिदेह औ संसारी निरंकारी है ।
दरस दरस समिदरस ब्रहम धयान,
सबद सुरति गुर ब्रहम बीचारी है ।
गुर उपदेस परवेस लेख कै अलेख,
चरन सरन कै बीकारी उपकारी है ।
परदछना कै ब्रहमादिक परक्रमादि,
पूरन ब्रहम अग्र भाग आग्याकारी है ॥ 260 ॥

गुरमुख मारग ह्वै भ्रमन को भ्रम खोयो,
चरन सरन गुर एक टेक धारी है ।
दरस दरस समदरस धिआन धारि,
सबद सुरति कै संसारी निरंकारी है ।
सतिगुरु सेवा कर सुरि नर सेवक ह्वै,
आग्या मान सब जग आग्याकारी है ।
पूजा प्रान प्रानपति सगल निधान दान,
पारस परस गति परउपकारी है ॥ 261 ॥

पूरन ब्रहम गुर महिमा कहै सु थोरी,
कथनी बदनी बादि नेति नेति नेति है ।
पूरन ब्रहम गुर पूरन सरब मई,
निंदा करिऔ सु कांकी नमो नमो हेति है ।
ताही ते बिबरजत असतुति निंदा दोऊ,
अकथ कथा बीचार मौनब्रत लेत है ।
बाल बुधि सुधि करि देह कै बिदेह भए,
जीवन मुकति गति बिसम सुचेत है ॥ 262 ॥

गुरसिख संगत मिलाप को प्रताप अति,
प्रेम कै परसपर बिसम सथान है ।
द्रिसटि दरस कै दरस के द्रिसटि हरी,
हेरत हिरात सुध रहत न ध्यान है ।
सबद कै सुरति सुरति कै सबद हरे,
कहित सुनत गति रहत न ग्यान है ।
असन बसन तन मन बिसिमरन ह्वै,
देह कै बिदेह उनमत्त मधु प्रान है ॥ 263 ॥

जैसे लग मात्र हीन पढत और को और,
पिता पूत पूत पिता समझरि जानिअै ।
सुरति बिहून जैसे बांवरे बखानीअति,
और कहे और कछु हिरदै मैं आनिअै ।
जैसे गुँग सभा मध कहि न सकत बात,
बोलत हंसाइ होइ बचन बिधानीअै ।
गुरमुख मारग मै मनमुख थकत ह्वै,
लगन सगन माने कैसे मन मानीअै ॥ 264 ॥

कोटिन कोटानि छबि रूप रंग सोभा निधि,
कोटिन कोटानि कोट जगमग जोति कै ।
कोटिन कोटानि राज भाग प्रभुता प्रताप,
कोटिन कोटान सुख आनंद उदोति कै ।
कोटिन कोटानि राग नाद बाद ग्यान गुन,
कोटिन कोटान जोग भोग ओत पोत कै ।
कोटिन कोटानि ति महिमा अगाध बोध,
नमो नमो द्रिसटि दरस सबद स्रोत कै ॥ 265 ॥

अहिनिस भ्रमत कमल कुमदनी को ससि,
रवि मिल बिछरत सोग हरख बयापही ।
रवि ससि अलंघ सरन सतिगुर गही,
चरन कमल सुख संपट मिलाप हो ।
सहिज समाधि निज आसन सुबासन कै,
मधु मकरंद रस लुभित अजाप ही ।
त्रिगुन अतीत ह्वै बिस्राम निहकाम ध.म,
उनमन मगन अनादि अलापही ॥ 266 ॥

रबि ससि दरस कमल कुमदनी हित,
भ्रमर भ्रमर मन संजोगी बियोगी है।
त्रिगुन अतीत गुर चरन कमल रस,
मधु मकरंद रोग रहत अरोगी है।
निहचल मकरंद सुख संपट सहिज धुनि,
सबद अनाहदि कै लोग मैं अलोगी है।
गुरमुख सुखफल महिमा अगाध बोध,
जोग भोग अलख निरंजन प्रजोगी है ॥ 267 ॥

जैसे दरपन बिखै बदन बिलोगीअति,
जैसे सरगुन साखीभूत गुर ध्यान है।
जैसे जंत्र धुनि बिखै बाजत जंत्री को मनु,
तैसे घट घट गुर सबद गियान है।
मन बच कर्म जत्र कत्र से इकत्र भए,
पूरन प्रकास प्रेम परम निधान है।
उः भन मगन गगन अनहद धुनि,
सहिज समाधि निरालंब निरबान है ॥ 268 ॥

कोटिन कोटान धयान द्रिसटि दरस मिल,
अति असचरज मै हेरत हिराए हैं।
कोटिन कोटान ग्यान सबद सुरति मिल,
महिमा महातम न अलख लखाए हैं।
तिल की अतुल सोभा तुल न तुलाधार,
पार कै अपार न अनंत अंत पाए हैं।
कोटिन कोटानि चंद्रभानु जोति को उदोत,
होत बलिहार बारंबार न अघाए हैं ॥ 269 ॥

कोट ब्रहमंड जांके एक रोम अग्र भाग,
परन प्रगास तास कहा धौ समावई।
जांकै एक तिल को महातम अगाध बोध,
पूरन प्रगास जोति कैसे कहि आवई।
जांके ओअंकार के बिथार की अपार गति,
सबद बिबेक एक जीह कैसे गावई।
पूरन ब्रहम गुर महिमा अकथ कथा,
नेति नेति नेति नमो नमो कर आवई ॥ 270 ॥

चरन कमल मकरंद रस लुभित ह्वै,
मन मधुकर सुख संपट समाने हैं ।
परम सुगंधि अति कोमल सीतलता कै,
बिमल सथल निहचल न डुलाने हैं ।
सहिज समाधि अति अगम अगाध लिव,
अनहद रुनझुन धुन उर गाने हैं ।
पूरन परम जोति परम निधान दान,
आन ग्यान ध्यान सिमरन बिसराने हैं ॥ 271 ॥

रज तम सत काम क्रोध लोभ मोह हंकार,
हार गुर ग्यान बान क्रांति निहक्रांति है ।
काम निहकाम निहकरम करम गति,
आसा कै निरास भए भ्रांति निहभ्रांति है ।
स्वाद निहस्वाद अर बाद निहबाद भए,
असंप्रेह देह गेह पांति है ।
गुरमुख प्रेम रस बिसम बिदेह सिख,
माया में उदास बास एकांकी इकांति है ॥ 272 ॥

प्रिथम ही तिल बोए धूर मिल बूट बाधै,
एक सै अनेक होत प्रगट संसार में ।
कोऊ लै चबाई कोऊ खाल काढ़े रेवरी कै,
कोऊ करै तिलबा मिलाइ गुर बार मैं ।
कोऊ तो उखली डारि कूट तिलकुट करै,
कोऊ कोलू पीर दीप दिपत अंधयार मैं ।
जांके एक तिल को बीचार न कहित आवै,
अबिगति गति कत आवत बीचार मैं ॥ 273 ॥

रचना चरित्र चित्र बिसम बिचित्रपुन,
एक चीटी को चरित्र कहत न आवई ।
प्रिथम ही चीटी के मिलाप को प्रताप देखो,
सहस अनेक एक बिल में समावई ।
अग्रभागी पाछै एकै मारग चलत जात,
पावत मिठास बास तही मिल धावई ।
भृंगी मिल ततकाल भृंगी रूप ह्वै दिखावै,
चीटी चित्र अलख चितेरै कत पावई ॥ 274 ॥

रचना चरित्र चित्र बिसम बचित्रपन,
घट घट एक ही अनेक ह्वै दिखाए हैं ।
उतते लिखत इत पढत अंतरगति,
इतहू ते लिख प्रतउत्तर पठाए हैं ।
उत ते सबद राग नाद को प्रसन्न कर,
इत सुनि समझि कै उत समझाए है ।
रतन परीखिया पेखिपरिमिति कै सुनावै,
गुरमुख संधि मिले अलख लखाए है ॥ 275 ॥

पूरन ब्रहम गुर पूरन क्रिपा कै दीनो,
साच उपदेश रिदै निहचल मति है ।
सबद सुरति लिव लीन जल मीन भए,
पूरन सरबमई पै वृत जुगति है ।
साचु रिदै साचु देखै सुनै बोलै गन्ध रस,
पूरन परसपर भावनी भगति है ।
पूरन ब्रहम द्रुम साखा पत्र फूल फल,
एक ही अनेक मेक सतिगुर सति है ॥ 276 ॥

पूरन ब्रहम गुर पूरन परम जोति,
ओत पोत सूत्र गति एक ही अनेक है ।
लोचन स्रवन स्रोत एक ही दरस सबद,
वार पार कुल गति सरिता बिबेक है ।
चन्दन बनासपती कनिक अनिक धातु,
पारस परस जानीअत आवदेक है ।
ग्यान गुरु अंजन निरंजन अंजन बिखै,
दुबिधा निवार गुरुमति एक टेक है ॥ 277 ॥

दरस धिआन लिव द्रिसटि अचल भई,
सबद बिबेक स्रुति स्रवन अचल है ।
सिमरन मात्र सुध जिहवा अचल भई,
गुरुमत अचल उनमन असथल है ।
नासका सुबास कर कोमल सीतलता कै,
पूजा प्रनाम परस चरन कमल है ।
गुरुमुख पंथ चर अचर ह्वै अंग अंग,
पंग सरबंग बूंद सागर सलल है ॥ 278 ॥

दरसन सोभा द्रिग द्रिसटि गिश्रान गम्म,
द्रिसटि धिश्रान प्रभु दरस श्रतीत है।
सबद सुरति परै सुरति सबद परे,
जास बास श्रलख सुबासना सरीत है,
रस रसना रहत रसना रहत रस,
कर श्रसपरस परसन कराजीत है।
चरन गवन गम्मि गवन चरन गम्मि,
श्रास पयास बिसम बिसास प्रिय प्रीत है ।। 279 ।।

गुरुमुख सबद सुरति होमै मारि मरै,
जीवन मुकत जगजीवन कै जानीश्रै ।
श्रंतर निरंतरि श्रंतर पट घट गए,
श्रंतरजामी श्रतरागति उनमानीश्रै ।
ब्रहम मई है माया माया मई है ब्रहम,
ब्रहम बिबेक टेक एकै पहिचानीश्रै ।
पिण्ड ब्रहमण्ड ब्रहमण्ड पिण्ड श्राति पोति,
जोति मिल जोति गोति ब्रहम गिश्रानिश्रै ।। 280 ।।

चरन सरन गुरु धावत बरज राखै,
निहचल चित सुख सहज निवास है ।
जीवन की श्रासा श्ररु मरन की चिन्ता मिटी,
जीवन मुकति गुरुमति को प्रगास है ।
श्रापा खोइ होनहार होइ सोई भलो मानै,
सेवा सरबातम कै दासन को दास है ।
स्री गुरु दरस सबद ब्रहम ग्यान ध्यान,
पूरन सरब मई ब्रहम बिसवास है ।। 281 ।।

गुरमुख सुखफल काम निहकाम कीने,
गुरमुख उदम निरुदम उकति है ।
गुरमुख मारग है दुविधा भरम खोइ,
चरन सरन गहे निहचल मति है ।
दरसन परसत श्रासा मनसा थकत,
सबद सुरति ग्यान प्रान प्रानपति है ।
रचना चरित्र चित्र बिसम बचित्र पन,
चित्र में चितेरा को बसेरा सति सति है ।। 282 ।।

स्री गुरु सबद सुन स्रवन कपाट खुले,
नादै मिलि नाद अनहद् लिवलाई है।
गावत सबद रस रसना रसना इक कै,
निझर अपार धार भाठी कै चुआई है।
हिरदै निवास गुरु सबद निधान ग्यान,
धावत बरज उनमन सुध पाई है।
सबद अवेस परमारथ प्रवेस धार,
दिब देह दिब जोति प्रगट दिखाई है ॥ 283 ॥

गुरु सिख संगत मिलाप को प्रताप अति,
प्रेम के परसपर पूरन प्रगास है।
दरस अनूप रूप रंग अंग अंग छबि,
हेरत हिरौने द्रिग बिसम बिसवास है।
सबद निधान अनहद रुन झुन धुनि,
सुनत सुरति मति हरन अभयास है।
द्रिसटि दरस अत सबद सुरति मिल,
परमद्भुत गति पूरन बिलास है ॥ 284 ॥

गुरमुखि संगत मिलाप को प्रताप अति,
पूरन प्रगास प्रेम नेम के परसपर है।
चरन कमल रज बासना सुबास रस,
सीतलता कोमल पूजा कोट न समसर है।
रूप कै अनूप रूप अति असचरज मै,
नाद बिसमाद राग नागनी न पटंतर है।
निझर अपार धार अम्रित निधान पान,
परमद्भुत गति आन नाही समसर है ॥ 285 ॥

· वन गवन जल सीतल अमर जैसे,
गनि उरध मुख तपत मलीन है।
बरन बरन मिल सलिल बरन सोई,
· याम अगनि सरब बरन छबि छीन है।
· ल प्रति पालक प्रफुलत बनासपती,
· · नि परदगध करत सुख हीन है।
तैसे ही असाध साध संगम सुभावगति,
गुरमति दुरमति सुख दुख हीन है ॥ 286 ॥

काम क्रोध लोभ मोह अहम्मेव कै असाध,
साध सत धरम दयारथ सन्तोख कै ।
गुरमति साध संग भावनी भगति भाइ,
दुरमति कै असाध संग दुख दोख कै ।
जनम मरन गुरु चरन सरन बिन,
मोख पद चरन कमल चित् चोख कै ।
गयान अंस हंस गति गुरमुखि बंस बिखै,
दुक्रित सुक्रित खीर नीर सोख पोख कै ।। 287 ।।

झगरो मिटत रोस मारे से रसाइन है
पोट डारे लागत न डण्डु जग जानीअै ।
हौमै अभिमान असथान ऊंचे नाहिं जल,
निमत नवन थल जल पहिचानीअै ।
अंग सरबंग तरह रहोत है चरन,
तांते चरनाभ्रित चरन रेन मानीअैं ।
तैसे हरि भगत जगत मैं निमरी भूत,
जग पग लग मसतक परवानिए ।। 288 ।।

पूजीअै न सीस ईस ऊचो देही मै कमावै,
पूजीअै न लोचन द्रिसटि द्रिसटांत कै ।
पूजीअै न स्रवन सुरति सनबन्ध कर,
पूजीअै न नासका सुबास स्वास क्रांत कै ।
पूजीअै न मुख स्वाद सजुगति कै,
पूजीअै न हसत सकल अंग पांत कै ।
द्रिसटि सबद सुति गन्ध रस रहत ह्वै,
पूजीअै पदारबिन्द नवन महांत कै ।। 289 ।।

नवन गवन जल निरमल सीतल है,
नवन बसुंधरा सरब रस रास है ।
उरध तपसया कै स्रीखण्ड बास बहै बन,
नवन समुद्र होत रतन प्रगास है ।
नवन गवन पग पूजीअत जगत मैं,
चाहे चरनाभ्रित चरन रज तास है ।
तैसे हरि भगत जगत में निमरी भूत,
काम निहकाम धाम बिसम बिसवास है ।। 290 ।।

सबद सुरति लिव लीन जल मीन गति,
सुखमना संगम ह्वै उलट पावन कै ।
बिसम बिस्वास बिखै अनभै अभयास रस,
प्रेम मधु अपिउ पीवै गुहज गवन कै ।
सबद कै अनहद सुरति कै उनमनी,
प्रेम कै निझर धार सहज रवन कै ।
त्रिकुटी उल्लंघि सुख सागर सजोग भोग,
दसम सथल निहकेवल भरन कै ॥ 291 ॥

जैसे जल जलज औ जल दुध सील मीन,
चकई कमल दिनकर प्रति प्रीत है ।
दीपक पतंग अलि कमल चकोर ससि,
म्रिग नाद बाद घन चात्रिक सुचीत है ।
नारि औ भतार सुत मात जल त्रिखावंत,
खुधयारथि भोजन दारिद्र धन मीत है ।
माया मोह द्रोह दुखदाई न सहाई होत,
गुरु सिख सन्धि मिलै त्रिगुन अतीत है ॥ 292 ॥

चरन कमल मकरंद रस लुभित ह्वै,
अंग अंग बिसम स्रबंग मैं समाने है ।
द्रिसटि दरस लिव दीपक पतंग संग,
सबद सुरत म्रिगनाद है हैराने है ।
काम निहकाम क्रोधाक्रोध निरलोभ लोभ,
मोह निरमोह अहमेव हूं लजाने है ।
बिसमै बिसम असचरज असचरज मै,
अद्भुत परमद्भुत असथाने है ॥ 293 ॥

दरसन जोति को उदोत सुख सागर मैं,
कोटको छबि तिल को प्रगास है ।
किंचत क्रिपा कोटिक कमला कलपतर,
मधुर बचन मधु कोटिक बिलास है ।
मन्द मुसकानि बानि खानि है कोटानि ससि,
सोभा कोट लोट पोट कुमदनी तास है ।
मन मधुकर मकरन्द रस लुभित ह्वै,
सहज समाध लिव बिसम बिसवास है ॥ 294 ॥

चरन सरन रज मज्जन मलीन मन,
दरपन गति गुरमति निहचल है।
ग्यान गुरु अंजन दे चपल खंजन द्रिग,
अकुल निरजन धयान जल थल है।
भंजन भै भ्रम अरि गंजन करम काल,
पांच परपंच बलबच निरदल है।
सेवा करंजन स्वबातम निरंजन भए,
माया में उदास किलमलि निरमल है ॥ 295 ॥

चन्द्रमा अछत रबि राहु न सकत असि,
द्रिसटि अगोचर ह्वै सूरज ग्रहण है।
पछम उदोत होत चन्द्रमै नमसकार,
पूरब संजोग ससि केतु खेत हनि है।
काशट में अगनि मगन चिरंकाल रहै,
अगनि मैं काशट परत ही दहन है।
तैसे शिव शकति असाध साध संगम कै,
दुरमति गुरमति दुसह सहन है ॥ 296 ॥

साध की सुजनताई पाहन की रेख प्रीत,
बेर जल रेख ह्वै बिसेख साध संग में।
दुरजनता असाध प्रीत जल रेख अरु,
बेर तो पखान रेख सेख अंग अंग में।
कासट अगनि गति प्रीति बिपरीत,
सुरसुरी जल बारनी सरुप जल गंग में।
दुरमति गुरमति अजया सरप गति,
उपकारी औ बिकारी ढंग ही कुढंग है ॥ 297 ॥

दुरमति गुरमति संगत असाध साध,
काशट अगनि गति टेव न टरत है।
अजया सरप जल गंग बारनी बिधान
सन औ मजीठ खल खंडत लरत है।
कंटक पुहप सैल घटिका सनाह ससत्,
हंस काग बग बयाध म्रिग होइ निबरत है।
लोसट कनिक सीप संख मधु कालकूट,
सुख दुख दाइक संसार बिचरत है ॥ 29, ॥

दादर-सरोज, बांस-बावन, मराल-बग,
पारस-पखान बिख-अम्रित संजोग है।
म्रिग म्रिगमद अहि मनि मधु-माखी माखी,
बांझ वधू नाह नेह निहफल भोग है।
दिनकर जोति उल्लू बरखै समै जवांसो,
असन बसन जैसे ब्रिथावन्त रोग है।
तैसे गुरमति बीज जमत न कालर मैं,
अंकुल उदोत होत माहिन बियोग है ॥ 299 ॥

संगम संजोग प्रेम नेम को पतंग जानै,
बिरह वियोग सोग मीन जल जानई।
इक टक दीपक धियान प्रान परहरै,
सलिल वियोग मीन जीवन न मानई।
चरन कमल मिल बिछुरे मधप मन,
कपट सनेह ध्रिग जनम अग्यानई।
निहफल जीवन मरन गुरु बिमुख ह्वै,
प्रेम अरु बिरह न दोऊ उर आनई ॥ 300 ॥

द्रिसटि दरस लिव देखे औ दिखावै सोई,
सरब दरस एक दरस कै जानीऐ।
सबद सुरति लिव कहत सुनत सोई,
सरब सबद एक सबद कै मानीऐ।
कारन करन करतम सरबगि सोई,
करम करतूत करतार पहिचानीऐ।
सतिगुरु गिआन धयान एक ही अनेकमेक,
ब्रहम बिबेक टेक एकै उर आनीऐ ॥ 301 ॥

किंचत कटाछ माया मोहे ब्रहमण्ड खण्ड,
साध संग रंग में बिमोहित मगन है।
जांके ओअंकार कै अकार हैं नाना प्रकार,
कीरतन समै साध संग सों लगन हैं।
सिव सनकादि ब्रहमादि आग्याकारी,
अग्र भाग साध संग गुनतु अगन है।
अगम अपार साध महिमा अपार बिखै,
अति लिवलीन जलमीन अभगन है ॥ 302 ॥

निज घर मेरो साध संगति नारद मुनि,
दरशन साधसंग मेरो निज रूप है ।
साध संग मेरो माता पिता औ कुटम्ब सखा,
साध संग मेरो सुत स्रेशट अनूप है ।
साधु संग सरब निधान प्रान जीवन में,
साध संग निज पद सेवा दीप धूप है ।
साध संग रंग रस भोग सुख सहजमै,
साध संग सोभा अति उपमा औ ऊप है ॥ 303 ॥

अगम अपार देव अलख अभेव अति,
अनिक जतन कर निग्रह न पाईऐ ।
पाईऐ न जंग-भोग पाईऐ न राज जोग,
नाद बाद बेद कै अगहु गहाईऐ ।
तीरथ परब देव देवि सेव कै न पाईऐ,
करम धरम ब्रत नेम लिव लाईऐ ।
निहफल अनिक प्रकार कै अचार सबै,
सावधान साध संग ह्वै सबद सु गाईऐ ॥ 304 ॥

सुपन चरित्र चित्र जोई वेखै सोई जानै,
दूसरो न देखै पावै कह कैसे जानीऐ ।
नाल बिखै बात कीए सुनिअत कान दीए,
बकत औ स्रोता बिन का पै उनमानीऐ ।
पघला कै मूल बिखै जैसे जल पान कीजै,
लीजीऐ जतन कर पीए मन मानीऐ ।
गुर सिख संध मिले गुहज कथा बिनोद,
ग्यान ध्यान प्रेम रस बिसम बिधानीऐ ॥ 305 ॥

नवन गवन जल सीतल अमल जैसे,
अगनि उरध मुख तपत मलीन है ।
सफल ह्वै आंब झुके रहित है चिरंकाल,
निवै न अरिण्ड तातै आरबला छीन है ।
चन्दर सुबास जैसे बासीए बनासपती,
बांस तो बड़ाई बूडयों संग लिवलीन है ।
तैसो ही असाध साध अहंबुधि निम्रता कै,
मन औ मजीठ गति पाप पुण्य कीन है ॥ 306 ॥

सकल बनासपती बिखे द्रुम दीरघ हवै,
निहफल भये बूड़े बहुत बड़ाई कै।
चन्दन सुबासना कैर सैंबल सुबास होत,
बाँस निरगंध बहु गांठन ढिठाइ कै।
सैंबल के फल तूल खग म्रिग छायो ताके,
बांस तौ बरन दोखी जारत बुराई कै।
तैसों ही असाध साध होत साध संगत के,
त्रिशटे न गुरु गोप द्रोह गुरु भाई कै ॥ 307 ॥

ब्रिरख बली मिलाप सफल सघन छाया,
बांस तो बरन दोखी मिलैं जरै जारि है।
सफल हवै तरुहरि झुकत सकल तर,
बांस तो बड़ाई बूडियो आपन समार है।
सकल बनासपती सुध रिदै मौन गहे,
बांस तों रीतो गठीलो बाजे धार मार है।
चन्दन समीप ही अछत निरगन्ध रहे,
गुरुसिख दोखी बजर प्रानी न उधार है ॥ 308 ॥

गुरु सिख संगत मिलाप को प्रताप ऐसो,
प्रेम कै परसपर पग लपटावही।
द्रिसटि दरस अरु सबद सुरति मिलि,
पूरन ब्रहम ग्यान ध्यान लिव लावही।
मिसटान एक पान लागत महा प्रसादि,
एक गुरपुरब कै सिखन बुलावही।
शिव सनकादि बांछै तिन के अचिशट कौ,
साधना की दूखना कवन फल पावही ॥ 309 ॥

जैसे बोझ भरी नाव आंगरी हवै बाहर है,
पार परै पूर सबै कुसल बिहात है।
जैसे एकाहारी एक घरी पाकसाल बैठ,
भोजन कै बिंजनादि स्वादि कै अघात है।
जैसे राजद्वार जाइ करत जुहार जन,
एक घरी पाछै देस भोगता हवै खात है।
आठ ही पहर साठ घरी में जो एक घरी,
साध समागम करै निज घर जात है ॥ 310 ॥

कारतक जैसे दीपमालका रजनी समै,
दीप जोत को उदोत होत ही बिलात है।
बरखा समै जैसे ता बुंद्बुदा को प्रगास,
तास नाम पलक में नाहि ठहिरात है।
ग्रीखम समै जैसे तौ म्रिग त्रिसना चरित्र,
झाई सी दिखाई देत उपजि समात है।
तैसे मोह माया छाया बिरख चपल छल,
छलै छैल स्री गुरु चरन लपटात है ॥ 311 ॥

जैसे तौ बसन अंग संग मिल हवै मलीन,
सलिल साबुन मिल निरमल होत है।
जैसे तो सरोवर सिबाल कै आछादयौं जल,
झोल पीए निरमल देखीऐ अछोत है।
जैसे निस अन्धकार तारका चमत्कार,
होत उजीआरो दिनकर के उदोत है।
तैसे माया मोह भ्रम होत है मलीन मति,
सतिगुर ग्यान ध्यान जगमग जोति है ॥ 312 ॥

अन्तर अछत ही दिसन्तर गवन करै,
पाछै परे पहुंचै न पाइक जो धावई।
पहुंचै न रथ पहुंचै न गजराज बाज,
पहुंचै न खग म्रिग फांधत उडावई।
पहुंचै न पवन गवन त्रिभवन प्रति,
अरध उरध अन्तरि हवै न पावई।
पंच दूत भूत लग अधम असाध मनु,
गहे गुरु ग्यान साधसंग बस आवई ॥ 313 ॥

आंधरे को सबद सुरति कर कर टेक,
बहरे चरन कर द्रिसटि सबद है।
गूंगे टेक चर कर द्रिसटि सबद स्रुति लिव,
लूले टेक द्रिसटि सबद स्रुति पद है।
पांगरे को टेक द्रिसटि सबद सुरति कर टेक,
एक एक अंग हीन दीनता अछद है।
अन्ध गुंग सुन्न पंगु लुंज दुख पुंज मम,
अन्तर के अन्तरजामी परबीन सद है ॥ 314 ॥

अंधेरे को सबद सुरति कर चर टेक,
अन्ध गुंग सबद सुरति कर चर है।
अन्ध गुंग सुन्न कर चर अवलम्ब टेक,
अन्ध गुंग सुन्न पंग टेक एक कर है।
अन्ध गुंग सुन्न पंगु लुन्ज दुख पुंज मम,
सरबंग हीन दीन दुखत अधर है।
अंतकारी अंतरजामी जानै अंतरगति,
कैसे निरबाहु करै सरै नरहर है ॥ 315 ॥

चकई चकोर म्रिग मीन भ्रिंग औ पतंग,
प्रीत इक अंगी बहु रंगी दुखदाई है।
एक एक टेक सै टरत न मरत सबै,
आदि अन्त की सु चाल चली जग आई है।
गुरु सिख संगत मिलाप को प्रताप ऐसे,
लोग परलोक सुखदायक सहाई है।
गुरमति सुनि दुरमति न मिटत जांकी,
अहि मिल चन्दन ज्यों बिख न मिटाई है ॥ 316 ॥

मीन को न सुरति है जल को न सबद ग्यान,
दुबिधा मिटाइ न सकत जल मीन की।
सर सरता अथाह प्रबल प्रवाह बसै,
ग्रसै लोह राखि न सकत मति हीन की।
जल बिन तरफ तजत प्रिय पशन मीन,
जानत न पीर नीर दीनताई दीन की।
दुखदाई प्रीत की प्रतीत मीन कुल दृढ़,
गुरु सिख बंस ध्रिग प्रीत प्रधीन की ॥ 317 ॥

दीपक पै आवत पतंग प्रीत रीत लग,
दीपकर महा बिपरीत मिले जार है।
अलि चल आवत कमल पै सनेह कर,
कमल सम्पट बाधि प्रान परिहार है।
मन बच कर्म जल मीन लिव लीन गति,
बिछुरत राख न सकत गहि डार है।
दुखदाई प्रीत की प्रतीत कै मरै न टरै,
गुरुसिख सुखदाई प्रीत किऊ बिसार है ॥ 318 ॥

दीपक पतंग दिब द्रिसटि दरस हीन,
स्री गुरु दरस ध्यान त्रिभुवन गम्मिता,
बासना कमल अलि भ्रमत न राख सकै,
चरन शरन गुरु अनत न गम्मिता ।
मीन जल प्रेम नेम अन्त न सहाई होत,
गुरु सिख सागर है इत–उत सम्मिता ।
एक एक टेक सैं टरत न मरत सबै,
स्री गुरु सबंगी संगी महातम अम्रिता ॥ 319 ॥

दीपक पतंग मिल जरत न राख सकै,
जरै मरै आगे न परमपद पाइ है ।
मधुप कमल मिल भ्रमत न राख सकै,
सम्पट मैं मूए मैं न सहज समाइ है ।
जल मिल मीन की न दुबिधा मिटाइ सकी,
बिछुर मरत हरि लोक न पठाइ है ।
इत उत संगम सहाई सुखदाई गुरु,
ग्यान ध्यान प्रेम रस अम्रित पियाइ है ॥ 320 ॥

दीपक पतंग अलि कमल सलिल मीन,
चकई चकोर म्रिग रबि ससि नादि है ।
प्रीत इक अंगी बहुरंगी नहि संगी कोऊ,
सबै दुखादाई न सहाई अन्त आदि है ।
जीबन न साध संग मूए न परमगति,
ग्यान ध्यान प्रेम रस प्रीतम प्रसादि है ।
मानस जनम पाइ स्री गुरु दया निधान,
चरन सरन सुखफल बिसमादि है ॥ 321 ॥

गुरुमुख पन्थ गुरु धयान सावधान रहै,
लहे निज–घरु अरु सहज निवास जी ।
सबद बिबेक एक टेक निहचल मति,
मधुर बचन गुरु धयान को प्रगास जी ।
चरन कमल चरनाम्रित निधान पोन,
प्रेम रस बस भए बिसम बिस्वास जी ।
ग्यान धयान प्रेम नेम पूरन प्रतीत चीत,
बन ग्रिह समसरि माया मैं उदास जी ॥ 322 ॥

मारबे को त्रास देख चोर न तजत चोरी,
बटवारा बटवारी संग ह्वै तकत है।
बेसवा रतु बिथा भये मन में न संका मानै,
जुआरी न सरबसु हारे में थकत है।
असली न अमल तजत जिऊं धिकार कीए,
दोख दु:ख लोग वेद सुनत छकत है।
अधम असाध संग छाडत न अंगीकार,
अधम असाध संग छाडि क्यों सकत है ।। 323 ।।

दमक दै दोख मख अपजस लै असाध,
लोक परलोक मुख सयामता लगावई।
चोर जार औ जुआर मदपानी दुक्रित सैं,
कलह कलेस भेस दुबिधा कौ धावई।
मति पति मान हानि कानि मैं कनोडी सभा,
नाक कान खण्ड डण्ड होत न लजावई।
सरब निधान दान दाइक संगति साध,
गुरु सिख साधू जन क्यों न चल आवई ।। 324 ।।

जैसे तो अकसमात बादर उदोत होत,
गगन घटा घमण्ड करत बिथार जी।
ताही ते सबद धुनि धन अति गरजत अति,
चंचल चरित्र दामनी चमतकार जी।
बरखा अम्रित जल मुकत कपूर तांते,
औखदी उपारजना अनिक प्रकार जी।
दिब देह साध जनम मरन रहत जग,
प्रगट करबे को उपउपकार जी ।। 325 ।।

सफल बिरख फल देत जयों पखांन मारे,
सिर करवत सहि गहि पार पार है।
सागर मैं काढि मुख फोरिअत सीप को जयों,
देत मुकताहल अवगिआ न बीचार है।
जैसे खनवारा खानि खनत हनत घन,
मानक हीरा अमोल पर उपकार है।
ऊख में पिऊख जयों प्रगास होतपवै कोलू,
अवगुन किए गुन साधन के द्वार है ।। 326 ।।

साध संग दरशन को है नित्तनेम जांको,
सोई दरसनी समदरस धिम्रानी है ।
सबद बिबेक ऐक टेक जांके मन बसै,
मान गुरु ग्यान सोई ब्रहम गिम्रानी है ।
द्रिसटि दरस म्ररु सबद सुरति मिलि,
प्रेमी प्रिय प्रेम उनमंन उनमानी है ।
सहज समाधि साध संग इकै रंग जोई,
सोई गुरुमुख निरमल निरबानी है ॥ 327 ॥

दरस धिम्रान धिम्रानी सबद गिम्रान ग्यानी,
चरन शरन दृढ माया में उदासी है ।
होमै तयाग तयागी बिसमाद कै बैरागी भये,
त्रिगुण म्रतीत चीत म्रनभै म्रभयासी है ।
दुबिधा म्रपरस को साध इन्द्री निग्रह कै,
म्रातम पूजा बिबेक सुन्न में सनयासी है ।
सहज सुभाइ कर जोवन मुकति भये,
सेवा सरबातम कै ब्रहम बिस्वासी है ॥ 328 ॥

जैसे जल म्रन्तर जुगन्तर बसै पखान,
भिदै न रिदै कठोर बूड़े बजर भार कै ।
म्रठसठ तीरथ भजन करै तोंबरी तो,
मिटत न करावई धोइ वार पार कै ।
म्रहिनिस म्रहि लपटानो रहै चन्दन को,
तजत न बिखु तऊ होमैं म्रहंकार कै ।
कपट सनेह देह निहफल भै जगत मैं,
सन्तान को म्रहि दोखी दुविधा विकार के ॥ 329 ॥

जैसे निरमल दरपन में न चित्र कछु,
सकल चरित्र चित्र देखत दखावई ।
जैसे निरमल जल वरन म्रतीत रीत,
सकल वरन मिल बरन बनावई ।
जैसे तौ बसुंदरा सुम्रादि बासना रहत,
म्रौशदी म्रनेक रस गन्ध उपजावई ।
तैसे गुरुदेव सेव म्रलख म्रभैवगति,
जैसो जैसो भाउ तैसी कामना पुजावई ॥ 330 ॥

सुख दुख हानि म्रित पूरब लिखत लेख,
जंत्र कै न बस कछू जंत्री जगदीस है ।
भोगति विवसिमेव करम किरत गति,
जसि करि सिलेप कारन को ईस है ।
करता प्रधान किधौ करम किधौ है जीउ,
घाटि बाढ़ि कौन कौन मत बिस्वाबीस है ।
असतुति निन्दा कहां ब्यापत हरख सोग,
होनहार कहो कहा गारि औ असीस है ॥ 331 ॥

मानसर पर जौ बैठाइअै ले जाइ बग,
मुकता अमोल तज मीन बीन खात है ।
असथन पान करबे को लौ लगाईअै जोंक,
पीअत न पै लै लोहू अचये अघात है ।
परम सुगन्ध पर माखी न रहत राखी,
महा दुरगन्ध पर वेग चल जात है ।
जैसे गज मज्जन कै डारत है छारु सिर,
सन्तन कै दोखी सन्त संग न सुहात है ॥ 322 ॥

गुरमति सति ऐक टेक दुतिया नासति,
सिव न सकति गति अगभै अभयासी है ।
त्रिगुण अतीत जीत हार न हरख सोग,
संजोग वियोग मेटि सहज निवासी है ।
चतर बरन इक बरन हवै साध संग,
पंच प्रपंच तयाग बिसम बिसवासी है ।
खट दरसन परै पार हवै सपत सर,
नवद्वार उलंघ दसमई उदासी है ॥ 333 ॥

नदी नाव को संजोग सुजन कुटम्ब लोग,
झोयेंगे जो दिउ सोई मिलै आगै जाइ कै ।
असन बसन धन संगि न चलत चले,
अरप दीजै धरमसाला पहुंचाइ कै ।
आठों जाम साठों घड़ी निहफल माया मोह,
सफल पलक साध संगति समाइ कै ।
मल मूत्र धारी बिकारी निरंकारी होत,
सबद सुरति साध संग लिव लाइ कै ॥ 334 ॥

होमै अभिमान असथान तजि बंझ बन,
चरन कमल गुरु सम्पट समाइ हैं।
अति ही अनूप रूप हेरत हिराने द्रिग,
अनहद गुंजित सखन हूं सिराइ हैं।
रसना बिसम अति मधु मकरन्द रस,
नासका चकत ही सुबास महिकाइ हैं।
कोमलता सीतलता पंग सरबंग भये,
मन मधुकर पुन अनत न धाइ है ॥ 835 ॥

बासना को बासु दूत संगति बिनास काल,
चरन कमल गुर ऐक टेक पाई है।
भै जल भियानक लहिर न बिआप सकै,
निज घर सम्पट कै दुबिधा मिटाई है।
आन गयान धयान सिमरन बिसिमरन कै,
प्रेम रस बस आसा मनसा ना पाई है।
दुतिया नासति ऐक टेक निहचल मति,
सहज समाधि उनमानि लिवलाई है ॥ 336 ॥

चरन कमल रज मसतक लेपन कै,
भरम करम लेख सयामता मिटाई है।
चरन कमल चरनाम्रित मलीन मन,
कर निरमल दूत दुबिधा गवाई है।
चरन कमल सुख सम्पट सहज घर,
निहचल मति ऐक टेक ठहिरावई है।
चरन कमल गुर महिमा अगाध बोध,
सर्व निधान औ सकल फलदाई ॥ 337 ॥

चरन कमल रज मज्जन कै दिब देहि,
महा मल मूल धारी निरंकारी कीनो है।
चरन कमल चरनाम्रित निधान पान,
त्रिगुण अतीत चीत आपा आप चीने है।
चरन कमल निज आसन सिघासन कै,
त्रिभुवन औ त्रिकाल गम्मिता प्रबीने है।
चरन कमल रस गन्ध रूप शीतलता,
दुतिया नासति ऐक टेक लिवलीने है ॥ 338 ॥

चरन कमल रज मज्जन प्रताप अति,
पुरब तीरथ कोटि चरन शरन है।
चरन कमल रज मज्जन प्रताप अति,
देवी देव सेवक ह्वै पूजत चरन है।
चरन कमल रज मज्जन प्रताप अति,
कारन अधीन कीन कारन करन है।
चरन कमल रज मज्जन प्रताप अति,
पतित पुनीत भये तारन तरन है ॥ 339 ॥

मानसर हंस साध संगति परम हंस,
धरम धुजा धरमसाला सलि आवई।
उत मुकताहल अहार दुतीआ नासति,
इत गुरु सबद सुरति लिव लावई।
उत खीर नीर निरवारों कै बखानीअत,
इत गुरुमति दुरमति समुझावई।
उत बग हंस बंस दुविधा न मेटि सकै,
इत काग पाग सम रूप कै मिलावई ॥ 340 ॥

गुरुसिख संगत मिलाप को परताप छिन,
सिव सनकादि ब्रहमादिक न पावई।
सिम्रति पुरान बेद शासतर औ नाद बाद,
राग रागिनी हू नेति नेति कर गावई।
देवी देव सरब निधान औ सकल फल,
सत्ररंग समूह सुख धयान धर धयावई।
पूरन ब्रहम सतिगुर सावधान जान,
गुर सिख सबद सुरति लिव लावई ॥ 341 ॥

रचना चरित्र चित्र बिसम विचित्रपन,
काहूं सों न कोऊ कीनो एक ही अनेक है।
निपट कपट घटि घटि नट वट नट,
गुपत प्रगट अट पट जावदेक है।
द्रिसटि सी द्रिसटि न दरसन सों दरसु,
बचन सों बचन न सुरति समेक है।
रूप रेख लेख भेख नाद बाद नाना विध,
अगम अगाध बोध ब्रहम बिबेक है ॥ 342 ॥

सतिरुप सतिगुर पूरन ब्रहम धयान,
सतिनामु सतिगुरु तौ पार ब्रहम है।
सतिगुर सबद अनाहद ब्रहम गिआन,
गुरुमुख पन्थ सति गम्मिता अगम है।
गुरु सिख साध संग ब्रहमसथान सति,
कीरतन समै होइ सावधान सम है।
गुरुमुख भावनी भगति भाउ चाउ सति,
सहज सुभाउ गुरुमुखि नमो नम है ।। 343 ।।

निराकार निराधार निराहार निरविकार,
अजोनी अकाल अपरम्पर अभेव है।
निरमोह निरवैर निरलेप निरदोख,
निरभै निरंजन अत पर अतेव है।
अगिबति अगम अगोचर अगाध बोध,
अचुत अलख अति अछल अछेव है।
बिसमै बिसम असचरजै असचरज मै,
अद्भुत परमद्भुत गुरुदेव है ।। 344 ।।

कारतक मास रुति सरद पूरनमासी,
आठ जाम साठ घरी आज तेरी बारी है।
औसर अभीच बहु नाइक की नाइका हैवै,
रूप गुण जोबन सिंगार अधिकारी है।
चातर चतुर पाठ सेवक सहेली साठ,
संपता सामग्री सुख सहज सुचारी है।
सुन्दर मंदिर सुभ लगन संजोग भोग,
जीवन जनम धन प्रीतम पिआरी है ।। 345 ।।

दिनकर किरन सुहात सुखदाई अंग,
रचत सिंगार आभरण सखी आइ कै।
प्रथम उबट्टना कै सीस मैं मलौनी मेल,
मजन उसन जल निरमल भाइ कै।
कुसम अवेस केश बासत फुलेल मेलि,
अंग अरगजा लेप होत उपजाइ कै।
चीर चारु दरपन मधि आपा आपु चीन,
बैठि परजक पर धावरी न धाइ कै ।। 346 ।।

ककही दै माँग उरझाए सुरझाए केस,
कुंकम चंदन को तिलक दै लिलार मै ।
अंजन खंजन द्रिग बेसरि करनफूल,
बारी सीसफूल दै तमोल मुखद्वार मैं ।
कण्ठसी कपोत मरकत श्रो मुकताहल,
बरन बरन फूल शोभा उर हार मैं ।
चचरीरी कंकन मुद्रिका महदी बनी,
अंगीश्रा अनूप छब-पीठ कटि धार मैं ॥ 347 ॥

सोभित सरद निसि जगमग जोति ससि,
प्रथम सहेली कहै प्रेम रसं चाखीऐ ।
पूरन क्रिपा कै तेरे आइ है क्रिपा निधान,
मिलीऐ निरन्तर हवै अन्तर न राखीऐ ।
चरन कमल मकरन्द रस लुभित हवै,
मन मधुकर सुख सम्पट अभिलाखीऐ ।
जोइ है लजाइ पाइऐ न पुनः पद्म दै,
पलक अमोल प्रिय संग मुख साखीऐ ॥ 348 ॥

कंचन असध जैसे भ्रमत कुठारी बिखै,
सुध भऐ भ्रमत न पावत प्रगास है ।
जैसे कर कंकन अनेक स्रव प्रगट धुनि,
एकै ऐक टेक पुनः धुनि को बिनास है ।
खुधया के बालक बिललात अकुलात अति,
असथन पान कर सहज निवास है ।
तैसे माया भ्रमत चतुर कुण्ट धावै,
गुरु उपदेस निहचल ग्रिह पद बास है ॥ 349 ॥

जैसे दीप दिपत भवन उजियारो होत,
सकल समग्री ग्रिह प्रगट दिखात है ।
ओत प्रोत जोत होत कारज बांछत सिध,
आनन्द बिनोद सुख सहज बिहात है ।
लालच लुभाइ रस लुभित नाना पतंग,
बुझत ही अन्धकार भए अकुलात है ॥
तैसे विदमान जानीऐ न महिमा महत,
अंतरीछ भए पोछे लोग पछतात है ॥ 350 ॥

जै दीप दिपत महातमै न जानै कोऊ,
बुझत ही अन्धकार भटकत रात है ।
जैसे द्रुम आंगन अछत महिमा न जानै,
कटत ही छाहि बैठिबे को बिललात है ।
जैसे राजनीत बिखै चैन ह्वै चतर कुण्ट,
छतर ढाला चाल भए जत्र कत्र जात है ।
तैसे गुरसिख साध संगम जुगत जग,
अंतरीछ भए पाछै लोग पछतात है ॥ 351 ॥

जानै जो अनूप रूप द्रिगन कै देखीअत,
लोचन अछत अन्धकारे नाहि पेखई ।
जानै जौ सबद रस रसना बखानीअति,
जिवहा अछत कत गुंग न सरेखई ।
जोफै जानै राग नाद सुनीअत स्रवन कै,
सरवन सहत किउ बहरो बिसेखई ।
नैन जिहवा सरवन को न कछुऐ बसाइ,
सबद सुरत सो अलेख लेख लेखई ॥ 352 ॥

जननि जतन कर जुगवैं जठर राखै,
तांते पिण्ड पूरन ह्वै सुत जनमत है ।
बहुरो अखाद्यि खाद्यि संजम सहत रहै,
ताही ते पै पीअत अरोगपन पत है ।
मल मूत्र धारके बिचार न बिचारै चित,
करै प्रतिपाल बाल तऊ तन गत है ।
तैसे अरभक रूप सिख है संसार मधि,
स्री गुर दियाल की दया कै सनगत है ॥ 353 ॥

जैसे तो जननि खान पान कौ संजम करैं,
तांते सुत रहै निरबिघन अरोग जी ।
जैसे राजनीत रीति चक्रवै चितम्न रूप,
तांते निहचिन्त निरभै बसत है लोग जी ।
जैसे करीया समुद्र बोहथ सावधान,
तांते पार पहुंचत पथक असोग जी ।
तैसे गुर पूरन ब्रहम ग्यान ध्यान लिव,
तांते निरदोख सिख निज पद जोग जी ॥ 354 ॥

जननि सुतिह जौ धिक्कार मार प्यार करै,
प्यार झरकार देख शकत न ग्रान को ।
जननी को प्यार ग्रौ धिक्कार उपकार हेत,
ग्रान को धिकार है विकार प्रान को ।
जैसे जल ग्रगनि मैं परै डूब मरै, जरै
तैसे क्रिपा कोप ग्रान बनिता ग्रग्यान को ।
तैसे गुर सिखन को जुगवत जतन है,
दुविधा न बयापै प्रेम परम निधान का ।। 355 ।।

जैसे कर गहत सरप सुत पेखि माता,
कहै न पुकार फुसलाइ उर मण्ड है ।
जैसे वैद रोगी प्रति कहै न बिथार ब्रिथा,
संजम कै ग्रौखधि खवाइ रोग डण्ड है ।
जैसे भूल चूक चटीग्रा की न बीचारै पांधा,
कहि कहि सिखया मूरखति मति खण्ड है ।
तैसे पेख ग्रौगुन कहै न सतिगुर काहूं,
पूरन बिबेक समझावत प्रचण्ड है ।। 356 ।।

जैसे मिसटान पान पेखि तोखि बालकहिं,
ग्रसथन पान बान जननि मिटावई ।
मिसरी मिलाइ जैसे ग्रौखधि खवाइ वैद,
मीठो कर खात रोगी रोगहि घटावई ।
जैसे जल सीचि धानहि क्रिसान पाले,
भये परपक काट घर मैं लि ग्रावई ।
तैसे गुर कामना पुजाइ निहकाम कर,
निज पद नामु धामु विखै पहुंचावई ।। 357 ।।

ग्यान ध्यान प्रान सुत राखत जननि प्रति,
ग्रौगुन गुन पेखि माता चित मैं न चेत है ।
जैसे भरतार भार नारि उरहारि माने,
तांते लालु लालणा को मानु मन सेत है ।
जैसे चाटीया सभीत संकुचित पांधा पेखि,
तांते भूल चूक पांधा छाडत नहेत है ।
मन बच कर्म गुर चरन सरन सिख,
तांते सतिगुर जमदूतहिं न देत है ।। 358 ।।

कोटिन कोटानि काम-कटक ह्वै कामारथी,
कोटिन कोटानि क्रोध क्रोधी कन्त आहि जी ।
कोटिन कोटान लोभ लोभी ह्वै लालच करे,
कोटिन कोटान मोह मोहि अवगाहि जी ।
कोटिन कोटानि अहंकार अहंकारी होइ,
रुप-रिपु सर्प सुख बल-छल चाहि जी ।
सतिगुर सिखन के रोमहि न चांप सके,
जामै गुर ग्यान ध्यान शसत्र सनाहि जी ।। 359 ।।

जैसे तौ सुमेर ऊच अचल अगम अति,
पावक पवन जल बयाप न सकत है ।
पावक प्रगास तास बानी चौगुनी चढत,
पैन गौन धूर दूर होइ चमकत है ।
संगम सललि मल धोई निरमल करै,
हरै दुख, देख सुनि सुहस बकत है ।
तैसे गुरु सिख जोगी त्रिगुण अतीत चीत,
स्री गुरु सबद रस अम्रित छकत है ।

जैसे सुकदेव के जनम समै जांको जांको,
जनम भयो, ते सकल सिध जानीश्रै ।
स्वांति बूंद जोई जोई परत समुद्र बिखे,
सीप कै संजोग मुकताहल बखानीअै ।
बावन सुगन्ध सनबन्ध पौन गौन करे,
लागे जाही जाही द्रुम चन्दन समानीअै ।
गुर सिख संग जो जो जागत अम्रित जोग,
सबद प्रसादि मोख पद पखानिअै ।। 361 ।।

तीरथ यात्रा समै न एक सै आवत सबै,
काहू साधू पाछै पाप सबन के जात है ।
जैसे क्रिप सैना समिसर न सकेल होत,
एक एक पोदै कई कोट परै खात है ।
जैसे तौ समुन्दर जल बिमल बोहिथ बसे,
एक एक पै अनेक पार पहुंचात है ।
तैसे गुर सिख साखा अनिक संसार द्वार,
सन्मुख ओट गहे कोट बिश्रासात है ।। 362 ।

भांजन कै जैसे कोऊ दीपक दुराई राखै,
मंदर मै ग्रछत ही दूसरो न जानई ।
जोपै रखवइया पुन: प्रगट प्रगास करै,
हरै तम तिमर उदोत दोति ठानई ।
सकल सामग्री ग्रिह पेखीग्रै परतंछ रूप,
दीपक दिपया ततखिन पहिचानई ।
तैसे ग्रवघट घट गुपत जोती सरुप,
गुर उपदेस उनमानी उनमानई ॥ 363 ॥

जैसे ब्रिथावन्त जन्त ग्रौखधि हिताइ रिदै,
ब्रिथा बल बिमुख हवै सहज निवास है ।
जैसे ग्रान धात मैं तनक ही कलंक डारे,
ग्रनिक बरन मेट कनिक प्रगास है ।
जैसे कोट भार कर कासट इकत्रता मैं,
रंचक ही ग्रांच देत भसम उदास है ।
गुर उपदेशं उर ग्रन्तर प्रवेस भये,
जनम मरन दुख दोखन बिनास है ॥ 364 ॥

जैसे ग्रनी बान की रहत टूट देही बिखै,
चुम्बक दिखाइ ततकाल निकसत है ।
जैसे जोंक तोबरी लगाईग्रत रोगी तन,
एँच लेत रुधिर ब्रिथा स्रम खसत है ।
जैसे जुवतिन प्रति मरदन करे दाई,
गरभ सथबन हवै पीड़ा न गरसत है ।
जैसे पांचों दूत भूत बिभ्रम हवै भाग जात,
सतिगुर मन्त जन्त रसना रसत है ॥ 365 ॥

जैसे तौ सफल बन बिखै बिरथा बिबिध,
जाको फल मीठ खग तांपै चल जात है ।
जैसे पर्वत बिखै देखीग्रै पाखान बहु,
जामै हीरा खोज ताहि खोजी ललचात है ।
जैसे तौ जलधि मधि बसत ग्रनन्त जन्त,
मुकता ग्रमोल जामै हंस खोज खात है ।
तैसे गुरचरन शरन हैं ग्रसंख सिख,
जामैं गुर ग्यान ताहि लोक लपटात है ॥ 366 ॥

जैसे ससि जोति होत पूरन प्रगास तास,
चितवत चक्रत चकोर धयान धारही ।
जैसे अन्धकार बिखै दीपत दिपत देख,
अनिक पतंग ओत पोत हवै गुजारहीं ।
जैसे मिसटान पान जान काज भांजत मैं,
राखत ही चीटी कोटि लुभित अपारही ।
परम निधान गुर ग्यान परवान जामै,
सकल संसार तास चरन जुहार ही ।। 367 ।।

जेते फूले तेते फल नाहि लागै द्रुम,
लागत तिक परपक न सकल है ।
जेते सुत जनमत जीअत रहै न तेते,
जीअत है जेते तेते कुल न कमल है ।
दल मिल जात जेते सुभट न होइ तेते,
जेतक सुभट जूझ मरत न थल है ।
आरसी जुगति गुर सिख सब ही कहावै,
पावक परगास भये बिरले अचल है ।। 368 ।।

जैसे अहि अगनि को बालक बिलोक धावै,
गहि गहि राखै माता सूत बिललात है ।
बिथावन्त जन्त जैसे चाहत अखादि खादि,
जतन कै बैद जुगवत न सुहात है ।
जैसे पन्था पन्थ बिबेक नाहि बुझैत अन्ध,
कर गहे अटपटी चाल चलयो जात है ।
तैसे कामना करत कनिक औ कामनी की,
राखै निरलेप गुर सिख अकुलात है ।। 369 ।।

जैसे माता पिता है अनिक उपजात सुत,
पूंजी दै दै बनज बयोहारनि लावई ।
किरत बिरत कर कोऊ मूल खोवै रोवै,
कोऊ लाभ लभत कै चौगुनो बढ़ावई ।
जैसो जैसो जोई कुला धरम है करम करै,
तैसो तैसो जस अपजस परगटावई ।
तैसे सतिगुर समदरसी पुहप गति,
सिख सखा बिबध बिरख फल पावई ।। 370 ।।

जैसे नरपति बहु बनिता बिवाह् करै,
जाके जनमत सुत वाही ग्रिह राज है ।
जैसे उदधि मधि चहूं ओर तै बोहथ चलै,
जोई पार पहुंचे पूरन सरब काज है ।
जैसे खान खनत अनन्त खनवारा खोजी,
हीरा हाथ चढ़ै जाकै ताकै बाज बाज है ।
तैसे गुरसिख नवतन औ पुरातन हैं,
जिन पर कटाछ क्रिपा कै छबि छाज है ॥ 371 ॥

बूंद बूंद बरख प्रनाले बहि चालै जल,
बहुर उमग बहि बीथी बीथी आइ कै ।
तांते नोरा नोरा भर चलत चतर कुंट,
सरिता सरित प्रति मिलत है जाइ कै ।
सरिता सकल जल परबल परवाह् चल,
सगम समुन्दर होत समत समाइ कै ।
जैसे औ समाई जांमै महिमा बडाई तैसी,
ओछो औ गम्भीर धार बुझीऐ बुलाइ कै ॥ 372 ॥

जैसे हीरा हाथ मैं सो तनक दिखाई देत,
मोल किये तै दमकन भरत भण्डार जी ।
जैसे बर बांदै हुण्डी लागत न भार कछहु,
आगे जाइ पाईयत लछमी अपार जी ।
जैसे बट बीज अति सूखम सरुप होत,
बोइ सै बिबध बिरख बिथार जी ।
तैसे गुर बचन सचन गुर सिखन मैं,
जानीऐ महातम गए ही हरद्वार जी ॥ 373 ॥

जैसे मध पीअत न जानीऐ मरम तांको,
पाछै मतिवारो होइ छकै छक जात है ।
जैसे नारि भेटत भतार को न जाने भेद,
उदत अधान आन चिह्न दिखात है ।
कर पर मानुक न लागत है भारी तोल,
मोल संखया दामन को हेरत हिरात है ।
तैसे गुर अम्रित बचन सुन माने सिख,
जाने महिमा जो सुख सागर समात है ॥ 374 ॥

जैसे मच्छ कच्छ बंग हंस मुकता पषान,
अग्रित बिखै परगास उदध से जानीअै ।
जैसे तारो तारी ओ आरसी सनाह शसत्र.
एक सै अनेक लोह रचना बखानीअै ।
भांजन बिबिध जैसे होत एक मिरतका से,
खीर नीर बिंजनाद ओखद समानीअै ।
तैसे दरसन बरनास्रम धरम,
सकल ग्रिहसत की साखा उनमानीअै ॥ 375 ॥

जैसे सर सरिता सकल मैं समुन्दर बड़ो,
मेर सुमेर बडो जगत बखान है ।
तिरुबर बिखै जैसे चन्दन बिरख बडो,
धात मैं कनक अति उत्तम कै मान है ।
पच्छन मैं हंस म्रिगराजन में सारदूल,
रागन में सिरी राग पारस पाखान है ।
ग्यानन में गयान अर धयानन में धयान गुर,
सकल धरम में ग्रिहस्थ प्रधान है ॥ 376 ॥

तीरथ मंजन करबे को है गुनाउ इहु,
निरमल तन त्रिखा तपति निवारीअै ।
दरपन दीप कर गहि कै गुनाउ इहु,
पेखत चिहन मग सुरत संभारीअै ।
भेटत भतार नारु को गुनाउ इहु,
स्वाति बूंद सूपी गति लै गरभ प्रतिपारीअै ।
तैसे गुर चरन सरन को गुनाउ इहु,
गुर उपदेस कर हार उर धारीअै ॥ 377 ॥

जैसे माता पिता न विचारत विचार सुत,
पोखत सु प्रेम बिहसत विहसाइ कै ।
जैसे ब्रिथावन्त जन्त बेद को ब्रितान्त कहै,
पारख परीखा उपचारित रसाइ कै ।
चटीया अनेक जैसे एक चटसार बिखै,
बिद्यावंत करे पांधा प्रीत से पढ़ाइ कै ।
तैसे गुर सिखन के औगुन अग्यान मेट,
ब्रहम बिबेक से सहज समझाइ कै ॥ 378 ॥

जैसे तो करत सुत अनिक इआनपन,
औगुन जननि नाहि तऊ उर धारयो है ।
जैसे तौ सरन सूर पूरन प्रतिगिआ राखु,
अनिक अवग्या कीए मार न बिडारयो है ।
जैसे तौ सरिता जल कास्ट के न बोरत है,
करे चित लाज आपनो ई प्रतिपारयो है ।
तैसे ही परम गुर पारस पर गति,
सिखन के करम कछु न बिचारयो है ।। 379 ।।

जोई कलाधरम करम कै सुचार चार,
सोई परवार बिखै स्रेशट बखानीऐ ।
बनज बयोहार साचो शाह सनमुख जीई,
सोई तौ बनौटा निहकपट कै मानिऐ ।
स्वामि काम सावधान मानन नरेस आन,
सोई स्वामि कारजी प्रसिध पहिचानीऐ ।
गुर उपदेस परवेस रिद अन्तर है,
सबद सुरति सोई सिख जग जानीऐ ।। 380 ।।

जल कै धरन अर धरन कै जैसे जलु,
प्रीत के परसपर संगम समार है ।
जैसे जल सींच कै तमाल प्रतिपालीअति,
बोरत न कासट को ज्वाला मैं न जार है ।
लोसट कै जडु गढ़ बोहिथ बनाईअति,
लोसट को सागर अपार पार पार है ।
प्रभु कै जानीजै जन जन कै जानीजै प्रभु,
तांते जन के न गुन औगुन बिचार है ।। 381 ।।

बयाह समै जैसे दुई उर गाईअति गीत,
एकै हवै लभत एकै हानि कान जानीऐ ।
दुहूं दल बिखै जैसे बाजत नीसान तान,
काहूं को जय काहूं को पराजै पहिचानीऐ ।
जैसे दुहूं कूल सरिता मैं भरि नाउ चलै,
कोऊ मंझिधार कोऊ पारि परिवानीऐ ।
धरम अधरम करम के असाध साध,
ऊच नीच पदवी प्रसिध उनमानीऐ ।। 382 ।।

पाहन की रेख आदि अन्त निरबाहु करै,
टरै न सनेह साध बिग्रह असाध को ।
जैसे जल मैं लकीर धीर न धरत तत्त,
अधम की प्रीत औ विरुध जुध साध को ।
थोहर उखारी उपकारी औ विकारी जन,
सहज सुभाव साध अधम उपाध को ।
गुंजफल मानक संसार तुलाधार बिखै,
तोल के समानि मोल अलप अगाध कौ ।। 383 ।।

जैसे कुलावधु अंग खोडस सिंगार रचे,
गनिका रचित तेई सकल सिंगार जी ।
कुलाबधु सेजा समै रमत भतार एक,
वेसवा तौ अनेकन सैं करै विभचार जी ।
कुलावधु संगम सुजसं निरदोख मोख,
वेसवा परसत अपजस ह्वै विकार जी ।
तैसे गुर सिखन को परम पवित्र माया,
सोई दुःख दायक ह्वै दहत संसार जी ।। 3८4 ।।

सोई लोहा बिसव बिखै बिबिध बन्धन रुप,
सोई तौ कंचन जोति पारस प्रसंग है ।
सोई तौ सिंगार अति सोभति पतिब्रता कौ,
सोई आनरन गनिका रचत अंग है ।
सोई स्वांति बूंद मिल सागर मुकतफल,
सोई स्वाति बूंद बिख भेटत भुखंग है ।
तैसे माया कितर बिरत है विकार जग,
परउकार गुर सिखन सरबंग है ।। 385 ।।

काग जौ मराल सभा जाइ बैठे मानसर,
दुचित उदास बास आस दुरगंध की ।
स्वान ज्यों बैठाईऐ सुभग परयंक पर,
त्याग जाइ चाकी चाटै हीन मत अन्ध की ।
गरदभ अंग अरगजा जौ पै लेपन कीजै,
लेटत भसम संग ह्वै कुटेंव कन्ध की ।
तैसे ही असाध साध संगत न प्रीति चीत,
मनसा उपाधि अपराध सनबन्ध की ।। 386 ।।

निराधार को अधार आसरो निरासन को,
नाथ है अनाथन को, दीन को दयाल है ।
असरन सरन औ निरधन को है धन,
टेक अन्धरन की औ कृपन कृपाल है ।
अकृतघन के दातार, पतित पावन-प्रभु,
नकर निवारण, प्रतिग्या प्रतिपाल है ।
अवगुन हरन करन करतज्ञस्वामि,
संगी सरबंग रस रस रसालु है ।। 387 ।।

कोइला सीतल कर करत है स्याम गहि,
परस तपत पर दगध करत है ।
कूकर के चाटत कलेवर को लागै छोत,
पाटत शरीर पीर धीर न धरत है ।
फूटत ज्यों गागर परत ही पाखान पर,
पाहन हरत पुन गागर हरत है ।
तैसे ही असाध संगि प्रीति हूं विरोध बुरो,
लोक परलोक दुख दोख न टरत है ।। 388 ।।

छत्र के बदले जैसे छतना की छांहि बैठे,
हीरा अमोलक बदले फटक को पाईये ।
जैसे मणि कंचन के बदले काच गुंजाफल,
कांबरी पटम्बर के बदले उढ़ाइऐ ।
सुधा मिष्ठान पान के बदले करीफल,
केसर कपूर ज्यौं कचूर लै लगाईऐ ।
भेटत असाध सुख सुकृत सूखम होत,
सागर अथाह जैसे बेली में समाईये ।। 389 ।।

कंचन कलस जैसे बांको भये सूधों होइ,
माटी को कलस फूंटी जुरै न जतन से ।
बसन मलीन धोइ निरमल होत जैसे,
ऊजरी होत कारी काबरी पतन से ।
लकटी अगनि जैसे सेकत ही सूधी होइ,
स्वान पूंछ पटन्तरो प्रगट मतन से ।
तैसे गुरु सिक्खन सुभाउ जल मैन गति,
साकत सुभाउ लाख पाहन गतन से ।। 390 ।।

कोऊ बेचै गढ़-गढ़ शस्त्र धनुष बाण,
कोऊ बेचै गढ़-गढ़ बिबिध सनाहि जी ।
कोऊ बेचै गोरस दुग्ध दधि धृत नित,
कोऊ बेचै बारनी बिखम समचाहि जी ।
तैसे ही बिकारी उपकारी है असाध साध,
ब्रिखिया अम्रित बने देखे अवगाह जी ।
आत्मा अचेत पंछी धावत चतर कूण्ट,
जैसो बैठे तैसो चाखै फल ताह जी ॥ 391 ॥

जैसे एक जननी के होत हैं अनेक सुत,
सब ही में अधिक प्यारो सुत गोद को ।
स्याने सुत बणज बयोहार के बिचार विषय,
गोद में अचेत हेत सम्पै न सहोद को ।
पलना सुलाइ माइ गृह काज लागे जाइ,
सुण सुत रुदन पय प्यावै मन मोद को ।
आपा खोइ जोई गुरु चरण शरण गहे,
रहे निरदोख मोख अनद विनोद को ॥ 392 ॥

करत न इच्छा कछु मित्र शत्रुता न जानै,
बाल बुध सुध नाहि बालक अचेत कौ ।
असन बसन लिए माता पीछै लागी डोलै,
बोलै मुख अम्रित बचन सुत हेत को ।
बालकै असीस देनहारी अति पयारी लागै,
गादि दैनहारी बलहारी डारी सेत को ।
तैसे गुर सिख समदरसी आनन्दमयी,
जैसो जग मानै तैसो लागै फल खेत को ॥ 393 ॥

जैसे दरपन दिव्य सूर सनमुख राखै,
पावक प्रगास होत किरण चरित्र कै ।
जैसे मेघ बरसत ही बसुन्धरा बिराजै,
विविध बनास्पती सफल सुमित्र कै ।
भेटत भतार नारि सोभत सिंगार चार,
पूरन आनन्द सुत उदित विचित्र कै ।
सतगुर दरस परस बिगसत सिख,
प्राप्त निधान गिआन पावन पवित्र कै ॥ 394 ॥

कोऊ बेचै गढ़-गढ़ शस्त्र धनुष बाण,
कोऊ बेचै गढ़-गढ़ बिबिध सनाहि जी ।
कोऊ बेचै गोरस दुग्ध दधि धृत नित,
कोऊ बेचै बारनी बिखम समचाहि जी ।
तैसे ही बिकारी उपकारी है असाध साध,
बिखिया अस्रित बने देखे अवगाह जी ।
आत्मा अचेत पंछी धावत चतर कूण्ट,
जैसो बैठे तैसो चाखै फल ताह जी ॥ 391 ॥

जैसे एक जननी के होत हैं अनेक सुत,
सब ही में अधिक प्यारो सुत गोद को ।
स्याने सुत बणज बयोहार के बिचार विषय,
गोद में अचेत हेत सम्पै न सहोद को ।
पलना सुलाइ माइ गृह काज लागे जाइ,
सुण सुत रुदन पय प्यावै मन मोद को ।
आपा खोइ जोई गुरु चरण शरण गहे,
रहे निरदोख मोख अनद विनोद को ॥ 392 ॥

करत न इच्छा कछु मित्र शत्रुता न जानै,
बाल बुध सुध नाहि बालक अचेत कौ ।
असन बसन लिए माता पीछै लागी डोलै,
बोलै मुख अस्रित बचन सुत हेत को ।
बालकै असीस देनहारी अति पयारी लागै,
गादि दैनहारी बलहारी डारी सेत को ।
तैसे गुर सिख समदरसी आनन्दमयी,
जैसो जग मानै तैसो लागै फल खेत को ॥ 393 ॥

जैसे दरपन दिव्य सूर सनमुख राखै,
पावक प्रगास होत किरण चरित्र कै ।
जैसे मेघ बरसत ही बसुन्धरा बिराजै,
विविध बनास्पती सफल सुमित्र कै ।
भेटत भतार नारि सोभत सिंगार चार,
पूरन आनन्द सुत उदित विचित्र कै ।
सतगुर दरस परस बिगसत सिख,
प्राप्त निधान गिआन पावन पवित्र कै ॥ 394 ॥

जैसे कुलाबधु बुधिवन्त ससुरार बिखै,
सावधान चेतन रहे आचार चार कै।
सुसर देवर जेठ सकल की सेवा करै,
खान पान ग्यान जान पति परवार कै।
मधुर बचन गुर जन सै लवन लजा,
सेजा समै रस प्रेम पूरन भतार कै।
तैसे गुर सिख सर्बतम पूजा प्रबीन,
ब्रह्म ध्यान गुर मूरति अपार कै ।। 395 ।।

तीरथ, पुरब, देव जात्रा जात है जगत,
पुरब तीरथ सुर कोटिन कोटान के।
मुक्ति बैकुण्ठ जोग जुगत बिबिध फल,
बांछत है साध रज कीट ग्यान ध्यान कै।
अगम अगाध साध सगत असंख्य सिख,
श्री गुर बचन मिलै राम रस आन के।
सहज समाधि अपरम्पर पुरख लिव,
पूरन ब्रह्म सतगुर सावधान के ।। 396 ।।

दृगण कौ जिह्वा-श्रवण जौ मिलै है देव,
जैसो देखै तैसो कहि सुन गुण गावही।
श्रवण जिहवा और लोचन मिलै दयाल,
जैसो सुणौ तैसो देख कहि समुझावही।
जिहवा लोचन और श्रवण मिलै जो देव,
जैसो कहि तैसो सुन देख औ दिखावही।
नैन जीअ श्रवन और श्रवन लोचन जीह,
जिहवा न श्रवन लोचन ललचावही ।। 397 ।।

आपनो सुअन्न जैसो लागत पियारो जीय,
जानिऐ वैसो ही प्यारो सकल संसार को।
अपनो दरबु जैसे राखिऐ जतन कर,
तैसे ही समझि सब काहू के व्योहार को।
असतुति निन्दा सुनि व्यापत हर्ष शोक,
वैसो ही लगत जग अनिक प्रकार को।
जैसो कुल धरम करम जैसो काको,
उत्तम कै मान जोन ब्रह्म बिथार को ।। 393 ।।

जैसो नैन बैन पंख सुन्दर सरबंग मोर,
ताके पग ओर देख दोष न बिचारिग्रै ।
सन्दल सुगन्धि अति कोमल कमल जैसे,
कण्टक बिलोक न औगुन उर धारिग्रै ।।
जैसे ह्वै अमृत—फल मिष्ट गुणादि स्वाद,
बीज करुवाई कै बुराई न समानिग्रै ।
तैसे गुरु ज्ञान जान सबं हूं से मांग लीजै,
बन्दना सकल भूत निन्दा न तुकारिग्रै ।। 399 ।।

सवैया छन्द

पारस परस दरस कत सजनी
कत वै नैन बैन मन मोहन ।
कत वै दसन हसन सोभा निधि,
कत वै गवन भवन बन सोहन ।
कत वै राग रग-सुख सागर,
कत वै दइया माइया दुख जोहन ।
कत वै जोग भोग रस लीला,
कत वै सन्त सभा छवि गोहन ।। 400 ।।
कब लागै मस्तक चरनन रज,
दरस दइया दृगन कब देखौं ।
अम्रित बचन सुनाऊ कब श्रवणन,
कब रसना बेनती बिसेखौं ।
जब कर करौऊ डंडऊत वन्दना,
पगनु परिक्रमादि पुन रेखौं ।
प्रेम भगत प्रतच्छ प्राणपति,
ग्यान ध्यान जीवनपद लेखौं ।। 401 ।।

कवित्त

बिरखै बियार लागै जैसे हहराति पाति,
पच्छी न धीरज कर ठौर ठहिरात है ।
सरुबर धाम लागै बारज बिलख मुख,
प्राण अन्त हन्त जल जन्त अकुलात है ।
शार्दुल देखें मृगमाल—दल, चित बन,
बास में न, त्रास कर आस्रम सुहात है ।
तैसे गुरु आंग स्वांग भए भै चकित सिख,
दुखत उदास बास अति बिललात है ।। 402 ।।

उला बरखन, करवण दामिनी, बियार,
सागर लहर बन जरत अगन है ।
राजी बिराजी, भूकंपका, अन्तर व्यथा वल,
बन्दसाला सासना, संकट मैं मगन है ।
अपदा अधीन दीन दूखना दारिद्र छिद्र,
अमति उदास, ऋण दासन नगन है ।
तैसे ही स्रिसट के अद्रष्ट जौ थे आइ लागै,
जग मैं भगतन के रोम न भगन है ।। 403 ।।

जैसे चीटी क्रम-क्रम कै ब्रिरख, पर चढ़े,
पच्छी उड जाइ बैसे निकट ही फल कै ।
जैसे गाडी चली जात लीकन में धीरज से,
घोरौ दौर जाय बांय दाहिने सबल कै ।
जैसे कोस भरि चल सकिग्रै न पाइन कै,
आत्मा चतर कुण्ट धाय आवै पल कै ।
तैसे बेदभेद ज्ञान उनमान पच्छ,
गंम गुर चरन सरन असथल कै ।। 404 ।।

जैसे बनराइ परफलत निमित्त फल,
लागत ही फल पत्र पुहप बिलात है ।
जैसे क्रिया रचित सिंगार भरतार हेतु,
भेटत भतार उर हार न सुहात है ।
बालक अचेत जैसे करत लीला अनेक,
सुचित चितन भये सबै बिसरात है ।
तैसे खट करम धरम श्रम ग्यान काज,
ग्यान भाना उदै उड करम उडात है ।। 405 ।।

जैसे हंस बोलत ही डाकनि करेजो हरे,
बालक ताही लौ धावै जानै गोदि लेत है ।
रोवत सुतै की जैसे औषधि पियावै माता,
बालक जानत मोह कालकूट देत है ।
हरण भरण गति सतिगुरु जानीग्रै न,
बालक जुगत मति जगत अचेत है ।
अकल कला अलख अति ही अगाधं बोध,
आप ही जानत आप नेति नेति नेति है ।। 406 ।।

दैंत सुत भगत प्रगट प्रह्लाद भए,
देव सुत जग में सनीचर बखानिग्रै ।
मध पुर बासी कंस ग्रधंमग्रसुर भये,
लंका बासी सेवक बिभीखन पहिचानिग्रै ।
सागर गम्भीर बिखै बिखिया प्रगास भई,
ग्रहि मस्तक मणि उदात उनमानिग्रैं ।
बरण स्थान लघु दीरघ जतन करै,
ग्रकथ कथा बिनोद बिसम न जानिग्रैं ।। 407 ।।

चिन्तामन चितवत चिन्ता चित ते चुराई,
ग्रजोनी ग्राधे जोनि संकट कटाए हैं ।
जपत ग्रकाल काल कण्टक कलेस नासे,
निरभै भजन भ्रम भै दल भजाए है ।
सिमरत सी नाथ निरवैर वैर भाऊ त्यागयो,
भागयो भेद खेद निरभेद गुण गाए है ।
ग्रकूल ग्रंचल गहि कुल न बिचारे कोऊ,
ग्रटल सरन ग्रावागवन मिटाए है ।। 408 ।।

बाछै न स्वर्ग बास मानै न नरक त्रास,
ग्राशा न करत चितू होनहार होइ है ।
सम्पत न हर्ष विपत में न शोक ताहि,
सुख दुख सममरि बिहंस न रोइ है ।
जनम जीवन मृत मुक्त न भेद खेद,
गम्यता त्रिकाल बाल बुधि ग्रविलोई है ।
ग्यान गुरु ग्रंजन कै चीनत निरंजन,
बिरलो संसार प्रेमं भक्ति महि कोइ है ।। 409 ।।

जैसे तौ मिठाई राखिग्रै छपाइ जतन कै,
चीटी चल जाइ चीन ताहि लपटात है ।
दीपक जगाइ जसे राखिग्रै दुराई गृह,
प्रगट पतंग ता में सहज समात है ।
जैसे तौ विमल जल कमल एकान्त बसैं,
मधुकर मधु ग्रवचन तहि जात है ।
तैसे गुरुमुख जिह घट प्रगटत प्रेम,
सकल संसार तिह द्वार बिललात हैं ।। 410 ।।

बाजत नीसान सुनियत चहूं ओर जैसे,
उदत प्रधान भानु दुरै न दुराए से ।
दीपक से दावा भये सकल संसार भानै,
घटिका सै सिन्धु जैसे छिपै न छिपाए से।
चक्रवै जैसे न छानो रहित सिंहासन पै,
देस में दुहाइ फेरै मिटे न मिटाए से ।
तैसे गुरमुख प्रिया प्रेम को प्रगास जास,
गुप्त न रहै मौनब्रत उपजाए से ॥ 411 ॥

जोपै देखि दीपक पतंग पच्छम ताकै,
जीवन जनम कूल लांछन लगावई ।
जोपै नाद बाद सुन म्रिग आन ग्यान राचै,
प्रान सुख हवै सबद बेधी न कहावई ।
जोपै जल से निकस रहै सरजीत मीन,
सहे दुख दूषण बिरहु बिलखावई ।
सेवा गुरु ज्ञान ध्यान तजे भजै दुबिधा कौ,
संगत में गुरमुख पदवी न पावही ॥ 412 ॥

जैसे एक चीटी पाछै कोटि चीटी चली जात,
ऐक टक पग डगमग सावधान है ।
जैसे कूंज पांत भली भांत शांति सहज मैं,
उडत आकाश चारी आगै अगवान है ।
जैसे म्रिगमाल चाल चलत टलत नाहिं,
जत्र तत्र अग्रभागी रमत तत्त ग्यान है ।
चीटी खग मृग सनमुख पाछै लागै जाहि,
प्राणी गुरु पथ छाड चलत अग्यान है ॥ 413 ॥

जैसे प्रिय संगम सुगम नाइका बखानैं,
सुनि सुनि सजनी सगल बिगसात है ।
सिमर सिमर प्रिय प्रेम रस बिसम हवै,
शोभा देत मौन गहे मन मुस्कात है ।
पूर्ण आधान प्रसूत समै रुदन सैं,
गुरु जन मुदत होय ताहि लपटात है ।
तैसे गुरुमुख प्रेम भगत प्रगासु जास,
बोलत बैराग मौन सबहूं सुहात है ॥ 414 ॥

जैसे काछी फल हेत बिबिधि बिरख रोपै,
निहफल रहै बिरखै न काहू काज है ।
संतति नमित नृप अनिक विवाह करै,
संतति बिहुन बनिता न गृह छाज है ।
विद्या दान जान जैसे पांधा चटसार जोरै,
विद्या हीन दीन खल नाम उपराज है ।
सतगुरु सिख साखा संग्रहै सु ज्ञान निमित्त,
बिनु गुर ज्ञान ध्रिग जनम कौ लाज है ॥ 415 ॥

सुरसरी, सुरसती, जमना, गोदावरी,
गया, पराग, सेत, कुरुखेत मानसर है ।
कांशी कांती द्वारावती माया मथुरा अजुधिआ,
गोमती आवन्तका किदार हिमधर है ।
नर्बदा बिबिध बन देवस्थल कवलास,
नील मन्दाचल समै गिरिबर है ।
तीरथ अरथ सत धर्म दया सन्तोख,
स्री गुर चरन रज तुल न सगर है ॥ 416 ॥

जैसे कुंआर कन्या मिल खैलत अनेक सखी,
सगल को एकै दिन होत न विवाह जी ।
जैसे बीर खेत विखै जात है सुभट जेते,
सबै न मरत तेते शस्त्र सनाहि जी ।
बावन समीप जैसे बिबिध बनासपती,
एकै बेर चन्दन करत हैं न ताहि जी ।
तसे गुर चरन शरन जात है जगत,
जीवन मुक्त पद चाहत है जाहि जी ॥ 417 ॥

जैसे ग्वार गाईन चरावत जतन बन,
खेत न परत सब चरत अघाइ कै ।
जैसे राधा धर्म सरुप राजनीति बिखै,
तांकै देस प्रजा बसत सुख पाइ कै ।
जैसे होत खेवट चेतन सावधान जामें,
लागे निरविघन बोहिथ पार जाय कै ।
तैसे गुरु उनमन मगन ब्रहम जोति,
जीवन मुक्त करै सिख समुझाय कै ॥ 418 ॥

जैसे घाउ घाइल को जतन कै नीको होत,
पीर मिट जाइ लीक मिटत न पेखीग्रै ।
जैसे फाटो ग्रम्बरो सीयाइ पुन: ग्रोढियत,
नागो तौ न होय तऊ थेगरी परेखीग्रै ।
जैसे कूटो बासन संवार देत है ठठेरो,
गिरत न पानी पै गठीलो भेख भेखीग्रै ।
तैसे गुरु चरन विमुख दुख देख पुन:
सरन गहे पुनीत पै कलंक लेखीग्रै ।। 419 ।।
देख देख द्रिगन दरस महिमा न जानी,
सुन सुन सबद महातम न जान्यो है ।
गाय गाय गम्यता गुण गुण निधान,
हसि हसि प्रेम को प्रताप न पछान्यो है ।
रोयरोय बिरह वियोग का न सोग जान्यो,
मन गहि गहि मन मुग्ध न मानयो है ।
लेग-बेद ज्ञान उतमानि कै न जान सक्यो,
जीवन जनम धि्रग बिमुख बिहानियो है ।। 4`0 ।।
कोटिन कोटान मनि को चमत्कार चारौं,
ससियर सूर कोट कोटिन प्रगास जी ।
कोटिन कोटान भाग पूर्ण प्रताप छबि,
जग-मग जोति को है सुजस निवास जी ।
सिव सनकादि ब्रह्मादिक मनोरथ कै,
तीरथ कोटानि कोट बाछत है तास जी ।
दरसन सोभा को महातस ग्रगाध बोध,
श्री गुरु चरन रज मात्र लागै जास जी ।। 421 ।।

सवैया

खग मृग मीन पतंग चराचर,
जोनि ग्रनेक विखै भ्रम ग्राइयो ।
सुन सुन पाइ रसातल भूतल,
देव पुरी प्रति लौ बहु धाइयो ।
जोग हूं भोग दुखादि सुखादिक,
धर्म ग्रधर्म सु कर्म कम।इयो ।
हार परयो सरणागति ग्राय,
गुरुमुख देख गुरु सुख पाइयो ।। 422 ।।

कवित्त

चाहि चाहि चन्द्रमुख चाकै चकोर चख,
अम्रित किरण अचत न अधाने है।
सुन सुन अनहद शब्द श्रवण म्रिग,
आनन्द उदोत अरि शान्ति न समाने है।
रसिक रसाल जसु जंपत बासर निस,
चात्रिक जुगति जिह्वा न तृपताने है।
देखत सुनत अरु गावत पावत सुख,
प्रेम रस बस मन मगन हिराने है ॥ 423 ॥

सलिल निवास जैसे मीन की न घटै रुचि,
दीपक प्रगास घटै प्रीत न पतंग की।
कुसम सुबास जैसो तृप्ति न मधुप को,
उडत आकास आस घटै न विहंग की।
घटा घनघोर मोर चात्रिक रिदै उल्लास,
नाद बाद सुनि रति घटै न कुरंग की।
तैसे प्रिअ प्रेम रस रसिक रसाल सन्त,
घटत न त्रिसना प्रबल अंग अंग की ॥ 424 ॥

सलिल सुभाउ देखो बोरत न कासट को,
लाज गहे कहै अपनो ही प्रतिपारयो है।
जुगवत कासट रिदन्तर बसंतर को,
बैसन्तर अन्तर लै कासट प्रजारयो है।
अगर को जल बोर काढ़ै बाढ़ै मोल तांको,
पावक दगध कै अधिक अवटारयो हैं।
तऊ तांको रुधिर चोइ चोंआ है सलिल मिल,
अगनि को गुण मानै बिरद बिचारयो है ॥ 425 ॥

सलिल सुभाव जैसे नवन गवन गुण,
सचित उपवन बिरवा लगाइ कै।
जल मिल बिरखहि करत उरध तप,
साखा नये सफल ह्वै झुक रहै आइ कै।
पाहन हनत फलदायी, काटे होइ नौका,
लोसट कै छेदै भेद बन्धन बन्धाइ कै।
प्रबल प्रवाह सुत सत्रु गहि पार परै,
सतगुरु सिख दोखी तारै समझाइ कै ॥ 426 ॥

गुर उपदस प्रवास कार भये भवन,
भावनी भगति भाइ चाइ कै चईलै हैं।
संगम संजोग भोग सहज समाध साध,
प्रेम रस अम्रित कै रसक रसीले हैं।
ब्रहमा बिबेक टेक एक औ अनेक लिव,
बिमल बैराग फबि छबि कै छबीले हैं।
परमद्भुत गति अति अश्चर्जमय,
बिसम बिदेह उनमीले हैं ॥ 427 ॥

जौ लौ कर कामना कामारथी कर्म कीने,
पूरन मनोरथ भयो न काहू काम को।
जो लौ कर आसा आसवन्त ह्वै आसरो गह्यो,
बह्यो फिरियो ठौर-ठौर पायो न बिस्राम को।
जौ लौ कर ममतो सममत मूड बोझ लीनो,
दीनो दण्ड खण्ड खण्ड खेद ठाम ठाम को।
गुरु उपदेस निहकाम औ निरास भए
नम्रता सहज सुख निज पद नाम को ॥ 428 ॥

सतगुरु चरन कमल मकरन्द रज,
लुभित ह्वै मन मधुकर लपटाने है।
अम्रित निधान पान अहिनिस रसक ह्वै,
अति उनमति आन ग्यान बिसरोने है।
सहज सनेह गेह बिसम बिदेह रूप,
स्वांति बूंद गति सीप सम्पट समाने हैं।
चरन सरन सुख सागर कटाछ कर,
मुकता महांत ह्वै अनूप रूप ठाने हैं ॥ 429 ॥

रोम रोम कोट मुख मुख रसना अनन्त,
अनक मनन्तर लौ कहत न आवई।
कोट ब्रहमण्ड भार डार तुलाधार बिखै,
तोलिऐ जौ बार बार तोल न समावई।
चतर पदारथ औ सागर समूह सुख,
बिबिध बैकुण्ठ मोल महिमा ना पावई।
समझ न परै करै गौन कौन भौन,
मन, पूरन ब्रहम गुरु सबद सुनावई ॥ 430 ॥

लोचन पतंग दीप दरस देखन गए,
जोती जोति मिल पुन: ऊर न आने है।
नाद बाद सुनिबे को सरवन हरन गए,
सुन धुन थकत भये न बहिराने है।
चरन कमल मकरन्द रस रसिक ह्वै,
मन-मधुकर सुख सम्पट समाने हैं।
रूप गुण प्रेम रस पूर्ण परम पद,
आन ग्यान ध्यान रस भरम भुलाने हैं ॥ 431 ॥

प्रथम ही आन ध्यान हानि कै पतंग बिधि,
पाछे कै अनूप रूप दीपक दिखाए हैं।
प्रथम ही आन ग्यान सुरति बिसरज कै,
अनहद नाद मृग जुगति सुनाए हैं।
प्रथम ही बचन रचन हरि गुंग साज,
पाछै कै अम्रित रस अपिओ पिआऐ है।
पेख सुन अचवत ही भए बिसम अति,
परमद्भुत अश्चर्य समाए हैं ॥ 432 ॥

जात सिहजासन को कामनी जामनी समै,
गुरु जन सुजन की बात सुहात है।
हिमकर उदत मुदत है चकोर गति,
एक टक ध्यान कै समारत न गात है।
जैसे मधुकर मकरन्द रस लुभित ह्वै,
बिसम कमल दल सम्पट समात है।
तैसे गुरु चरन शरन चल जाति सिख,
दरस परस प्रेम रस मुस्कात है ॥ 433 ॥

आवत है जांकै भीख मांगन भिखारी दीन,
देखत अधीनता निरासो न बिडार है।
बैठक है जांके द्वार आसा को विडार स्वान,
अन्त करूणा कै तोर टूक ताहि डार है।
पाइन की पनही रहत परिहरी परी,
ताहूं काहूं काज उठ चलत ममार है।
छाडि अहंकार छार होइ गुरु मार्ग में,
कबहूं दया के आन दयाल पग धार है ॥ 434 ॥

द्रोपती कौपीन मात्र दई जौ मुनीशर की,
तांते सभा मध्य बह्यो बसन प्रवाह जी।
तन्दुल तनक जगदीश को सुदामौ दये,
तांते पाए चतर पदार्थ अथाह जो।
दुखित गाजन्द अरबिन्द गहे भेद राखै,
तांके काजै चक्रपानि आन ग्रसे ग्राह जी।
कहा कोऊ करै कछू होत न काहूं के किये,
जांकी प्रभु मान लेस मबै सुख ताहि जी ॥ 435 ॥

सरवन सेवा मात पिता की बिसेख कीनी,
तांते गाईअति जस जगत में ताहू को।
जन प्रहलादि आदि अन्त लौ अवस्था कीनी,
तात घात कर प्रभू राख्यो प्रण वाहू को।
द्वादस बरस शुक जननी दुखत करी,
सिद्ध भए तत क्षण जनम है जाहू को।
अकथ कथा बिसम जानिग्रै न जाइ कछु,
पहुचे न ग्यान उनमान आन काहूं को ॥ 436 ॥

खांड खांड कहै जिहवा न स्वाद मीठो आवै,
अगनि अगनि कहै सीत न बिनास है।
वैद वैद कहै रोग मिटत न काहूं को है,
द्रव्य द्रव्य कहै कोऊ द्रवहि न बिलास है।
चन्दन चन्द कह होत न सुबास बास,
चन्द चन्द कहै उजयारो न प्रगास है।
तैसे ग्यान गोषट कहत न रहत पावै,
करनी प्रधान भान उदति अकास है ॥ 437 ॥

हसत हसत पूछै हस हस के हसाइ,
रोवत रोवत पूछै रोय औ रुवाइ कै।
बैठे बैठे पूछै बैठि बैठि कै निकट जाय,
चलत चलत पूछै दहदिस धाइ कै।
लोग पूछै लोगाचार बेद पूछै बेद बिधि,
जोगी भोगी जोग भोग जुगति जगाइ कै।
जनम मरन भ्रम काहू न मिटाइ सकयो,
निहचल भए गुरु चरन समाइ कै ॥ 438 ॥

पूछत पथिक तिह मारग न धारै पग,
प्रीतम दे कैसे देस कैसे बातन से जाईग्रै ।
पूछत है वैद खात ग्रौषधि न संजम सै,
कैसे मिटै रोग सुख सहज समाईग्रै ।
पूछत है सोहागनि करम है दोहागनि के,
रिदै विभचार कत सिहजा बुलाइग्रै ।
गाऐ सुने ग्रांखें मीचै पाईग्रै न परम पद,
गुरु उपदेस गहि जौ लौ न कमाइग्रै ।। 439 ।।

खोजी खोज देख चल्यो जाइ पहुंचे ठिकाने,
ग्रालस विलम्ब कीए खोज मिट जाता है ।
सेजा समै रमै भर्त्तार वर नारि सोई,
करै जो ग्रवग्या नाहि मानै उदै प्रात है ।
बरखत मेघ जल चात्रिक तृप्त पीए,
मोन गहे बरख बतीते बिललात है ।
सिख सोई सुन गुरु सबद रहत रहै,
कपट सनेह कीए पाछै पछतात है ।। 440 ।।

जैसे बछुरा बिछुर परै ग्रान गाइ थन,
दुग्ध न पान करै मारत है लात की ।
जैसे मानसर तयाग हंस ग्रान सर जात,
खात न मुक्त फल भुक्त जो गात की ।
जैसे राजद्वार तजि ग्रान द्वार जात जन,
होत मान भंग महिमा न काहू बात की ।
तैसे गुरु सिख ग्रान देव की शरण जात,
रहयो न परत राखि सकत न पात की ।। 441 ।।

जैसे घनघोर मोर चात्रिक सनेह गत,
बरखत मेह ग्रसनेह कै दिखावई ।
जैसे तो कमल जल ग्रन्तर दिसन्तर हवैं,
मधुकर दिनकर हेतु उपजावई ।
दादर निरादर हवै जीवत पवन भख,
जल तज मरत न प्रेमहि तो लजावई ।
कपट सनेही तैसे ग्रान देव सेवक है,
गुरु सिख मीन जल हेत ठहरावई ।। 442 ।।

पुरख निपुंसक न जानै बनिता बिलास,
बांझ कह जानै सुख सतत सनेह को।
गनिका सन्तान को बखान कहा गोत्राचार,
नाहि उपचार कछ कुषटी की देह को।
आंधरे न जानै रूप रंग न दसन छबि,
जानत न बहरे प्रसन्न असप्रेह को।
आन देव सेवक न जानै गुरु देव सेव,
जैसे तो जवासो नहीं चाहत है मेंह को ॥ 443 ॥

जैसे भूल बछरा परत आन गाइ थन,
बहुरयो मिलत मात बात न समार है।
जैसे आन सर भ्रम आवै मानसर हंस,
मुकता अमोल दोख न बिचार है।
जैसे नृप सेवक जो आन द्वार हार आवै,
चौगुणों बढावै न अवग्या उर धार है।
सतगुरु असरन सरन दयाल देव,
सिखन को भूलबो न रिदै में निहार है ॥ 444 ॥

बांझ बधु पुरख निपुंसंक सन्तत हवै,
सलिल बिलोए कत्त माखन प्रगास है।
फनि गहि दुग्ध पियाए न मिटत बिखु,
मूरी खाय मुख से न प्रगटे सुबास है।
मानस पर बैठे बाइस उदास बासर,
अरगजा लेप खर भसम निवास है।
आन देव सेवक न जानै गुरदेव सेव,
कठन कुटेव न मिटत देव दास है ॥ 445 ॥

जैसे तो घटा घमण्ड गगन बिलोकीअत,
गरजि गरजि बिनु बरखा बिलात है।
जैसे तो हिमाचल कठोर अति सीतल है,
सकीऐ न खाइ खाइ त्रिखा न मिटात है।
जैसे उस परत करत है सजल देही,
राखै चिरकाल माहि ठौर ठहिरात है।
तैसे आन देव सेब त्रिबिध चपल,
फल सतिगुरु अम्रित प्रवाहि नित प्रात्त है ॥ 446 ॥

बैसनो अनन्न ब्रहमन सालग्राम सेवा,
गीता भगवत स्रोता एकाकी कहावई ।
तीरथ धरम देव यात्रा को पण्डत पूछ,
करत गवन सो महूरत सुधावई ।
बाहर निकस गरधम स्वान लगन कै,
संका उपराजत बहुर घर आवई ।
पतिव्रत गहि रहि सकत न ऐका टेक,
दुबिधा अच्छत न परम पद पावई ।। 447 ।।

गुर सिख संगत मिलाप को प्रताप अैसो,
पतिब्रत एक टेक दुबिधा निवारी है ।
पूछत न जोतक और वेद तिथ वार कछ,
ग्रिह और निछत्र की न शंका उरधारी है ।
जानत न लगन सगन आन देव मेव,
सबद सुरति लिव नेहु निरंकारी है ।
सिख सन्त बालक स्त्री गुरु प्रतिपालक ह्वे,
जीवन मुकति गति ब्रहम बीचारी है ।। 448 ।।

नारि भरतार के सनेह पतिव्रता होइ,
गुर सिख एक टेक पतिव्रत लीन है ।
राग नाद बाद और सम्बाद पतिव्रता होइ,
बिन गुरु सबद न कान सिख दीन है ।
रुप रंग अंग सरवंग हेरै पतिव्रता,
आन देव सेवक न दरसन कीन है ।
सजन कुटुम्ब ग्रिह गौण करै पतिव्रता,
आन देव थान जैसे जल बिन मीन है ।। 449 ।।

अैसी नाइका से कुंआर पात्र सुपात्र भली,
आस प्यासी माता पिता एकै नाह देत है ।
ऐसी नाइका सै दीनता कै दुहागनि भली,
पतित पावन प्रिया पाइ लाइ लेत है ।
अैसी नाइका भलो बिरहा बियोग सोग,
लगन सगन सोधे सरधा सहेत है ।
अैसी नाइका सै मात गरभ मैं गली भली,
कपट सनेह दुबिधा ज्यों राहु केत है ।।450।।

जैसे जल कूप निकसत है जतन कीए,
सीचीग्रति खेत एकै पहुंचत न ग्रान की ।
पथक पपीहा प्यासे ग्रास लग ढिग बैठ,
बिनु गुण भाजन त्रिपत कत प्रान की ।
तैसे ही सकल देव सेव सै टरत नाहि,
सेवा कीए देत फल कामना समान की ।
पूर्ण ब्रहम गुर बरखा ग्रम्रित हित,
बरख हरख देत सरब निधान की ॥ 451 ॥

जैसे उल्लू दिन समय काहूग्रै न देखयो भावै,
तैसे साध संगत मैं ग्रान देव सेव कै ।
जैसे काग विद्यामान बोलत न काहू भावै,
ग्रान देव सेवक जो बोले ग्रहम्मेव कै ।
कटत चटत स्वान प्रीति विपरीत जैसे,
ग्रान देव सेवक सुहाइ न कुटेव के ।
जैसे कै मराल माल सोभित न बग ठगा,
काढ़ीग्रै पकर कर ग्रान देव सेव कै ॥ 452 ॥

जैसे उल्लू ग्रादित उदोत जोति का न जानै,
ग्रान देव सेवक न सूझै साध संग मैं ।
मरकट मनि मोनिक महिमा न जानै,
ग्रान देव सेवक न सबद प्रसंग मैं ।
जैसे तो फणिन्द्र पान पै महातमैं न जानै,
ग्रान देव सेवक महा प्रसादि ग्रंग मैं ।
बिनु हंस वंम बग ठग न सकत टिक,
ग्रगम ग्रगाध सुख सार तरंग में ॥ 453 ॥

जैसे तौ नगर एक होत है ग्रनेक हाट,
गाहक ग्रसंखय ग्रावै बेचनु ग्ररु लैन कौ ।
जापै कछु बेंचै ग्ररु बनजु न मंगै पावै,
ग्रान पै बिसाहे जाइ देखे सुख नैन को ।
जा की हाटी सकल सामग्री पावै ग्रौ बिकावै,
बेचत बिसाहत चाहत चित चैन को ।
ग्रान देव सेव जाइ सतिगुर पूरे शाहि,
सरब निधान जों कै लेन ग्ररु दान को ॥ 454 ॥

बणजु बयोहार बिखै रतन पारख होइ,
रतन जनम की परीखया नाहि पाई है।
लेखै चित्र गुपत सै लेखक लिखारी भये,
जनम मरन की असंखा न मिटाई है।
बीर विदया महाबली भए हैं धनुषधारी,
हंगता को मार न सहज लिव लाई है।
पूरण ब्रहम गुर देव सेव कली काल,
माया मैं उदासी गुरु सिखन जताई है ॥ 455 ॥

जैसे आन बिरख सफल होत समै पाई,
सरबदा फलते सदा फल सु सुवाद है।
जैसे कूप जल निकसत है जतन कीए,
गंगा जल मुक्ति प्रवाह प्रसादि है।
म्रितका अगनि तूल तेल मिल दीप दिपै,
जग मग जोति ससिअर बिसमादि है।
तैसे आन देव सेव कीए फल दैत जेत,
सतिगुर दरस न सामना जमादि है ॥ 456 ॥

पंच परपंच कै भए है महा भारथ सै,
पंच मार काहूअै न दुबिधा निवारी है।
ग्रिह तज नवनाथ सिद्ध जोगीसर न,
त्रिगुण अतीत निज-आसन मैं तारी है।
बेद पाठ पढ़ि पढ़ि पंडित प्रबोधै जगु,
सकै न समोध मन त्रिखना न मारी है।
पूरन ब्रहम देव सेव साध संग,
सबद सुरति लिव ब्रहम बीचारी है ॥ 457 ॥

पूर्ण ब्रहम सम देख समदरसी हवै,
अकथ कथा बिचारि हारि मानि धारी है।
होनहार होइ तांते आसा ते निरास भए,
कारण करण प्रभ जान होमै मारी है।
सूखम सथूल उअंकार कै अकार होई,
ब्रहम बबेक बुध भए ब्रहमचारी है।
बट बीज को बिथार ब्रहम कै माया छाया
गुरमुख एक टेक दुबिधा निवारी हैं ॥ 458 ॥

जैसे तौ सकल द्रुम आपनी आपनी भांति,
चन्दन चन्दन करैं सरब तमाल कौ।
तांबा ही सैं होत जैसे कंचन कलंक डारै,
पारस परम धात सकल उजाल कौ।
सरिता अनेक जैसे बिबिध प्रवाह गति,
सुरसरि संगम सम जल सुढाल कौ।
तैसे ही सकल देव टेव टरत नाहि,
सतिगुर असरन सरन अकाल कौ ॥ 459 ॥

गिरगट कै रंग कमल समेह बहु,
बन बन डोलैं काग कहाधौ सवान है।
घर घर फिरत मंजार अहार पावै,
बेस्वा बिशनी अनेक सती न समान है।
सर सर भ्रमत न मिलत मराल माल,
जीव घात करत न मोनी बग धयान है।
बिन गुर देव सेव आन देव सेवक हवै,
माखी तियाग चन्दन दुरगन्ध असथान है ॥ 460 ॥

आन हाट के हटआ लेत है घटात मोल,
देत है चढ़ाइ डहकत जोई आवे जी।
तिन सैं बणज किए बड़ता न पावैं कोऊ,
तोटा को बणज पेखि पेखि पछतावै जी।
काठ की हांडी जैसे चढ़ै एकै वारि,
॥ कोऊ ॥ कपट विउहार कीए आपहि लखावै जी।
सतिगुर साह गुण बेच अवगुण लेत,
सुन सुन सुजस जगत उठ धावैं जी ॥ 461 ॥

पूरन ब्रहम समसरि दुतीआ नासत,
प्रतिमा अनेक होइ कैसे बन आवई।
घट घट पूरन ब्रहम देखै सुनै बोलै,
प्रतिमा में काहे न प्रगट हवै दिखावई।
घर घर घरनि अनेक एक रूप हुते,
प्रतिमा सकल देव होइ न सुहावई।
सतिगुर पूरन ब्रहम सावधान सोई,
एक जोति मुरति जुगल हवै पुजावई ॥ 462 ॥

मानसर तयागि आन सर जाइ बैठे हंस,
खाइ जल जंत हंस बंसहि को लजावई ।
सलिल बिछोह भए जीवत जौ रहै मीन,
कपट सनेह कै सनेही न कहावई ।
बिनु घनु बूंद जौ अनत जल पान करै,
चात्रिक संतान बिषै लांछन लगवई ।
चरन कमल अलि गुरसिख मोख होइ,
आन देव सेवक हवै मुकति न पावई ।। 463 ।।

जौ कोऊ मवासि साध भूमीआ मिलावै आन,
ता पर प्रसन्न होत निरख नरिन्द जी ।
जौ कोऊ नृपत भृतभोग जाइ भूमीआ पै,
धाइ मारे भूमीआ को सहित रजिंद जी ।
आन को सेवक रादवार जाइ सोभा पावै,
सेवक नरेस आन दवार जात निन्द जी ।
तैसें गुरसिख आन अनत सरण गुर,
आन न सामर्थ गुर सिख प्रति बिंद जी ।। 464 ।।

जैसे उपवन आम्ब, सेवब हवै ऊच नीच,
निहफल सफल प्रगट पहिचानीऐ ।
चन्दन समीप जैसे बास औ बनासपती,
गन्ध निरगन्ध सिव सकत कै जानीऐ,
सीप संखदोऊ जैसे रहत समुद्र बिषै,
स्वांति बूंद संतत न संतत बिधानीऐ ।
तैसे गुरदेव आन देव सेवकन भेद,
अहबुध निम्रता अमान जग, मानीऐ ।। 465 ।।

जैसे पतिब्रता पर पुरषु न देखियो चाहै,
पूरन पतिब्रता कै पति ही मैं धयान है ।
सर, सरिता, समुदुर, चात्रिक न चाहै काहुं,
आस घन बूंद प्रिया प्रिया गुन गान है ।
दिनकर और भोर चाहत चकोर नहीं,
मन बच कर्म हिमकर प्रिया परान हैं ।
तैसे गुर सिख आन देव सेव रहत ।। पै ।।,
सहज सभाव न अवगया अभिमान है ।। 466 ।।

दोइ दहपन देखै एक से अनेक रूप,
दोइ नाव पाव धरै पहुचे न पार है ।
दोइ दिसा गहे गहाए से हाथ पाउं टूटे,
दुराहे दुचित होइ भूल पग धार है ।
दोइ भूप ताको गाउ परजा न सुखी होत,
दोइ पुरखन की न कुलबधू नारि है ।
गुरसिख होइ आनि देब सेव टेव गहै,
सहै जम दण्ड ध्रिग जीवन संसार है ॥ 467 ॥

जैसे तौ ब्रिरख मूल संचीऐ सललि ताते,
साखा साखा पत्र करि हरिओ होइ है ।
जैसे पतिब्रता पतिब्रत सति सावधान,
सकल कुटुम्ब सुप्रसन्न धन्न सोइ है ।
जैसे मुख द्वार मिसटान पान भोजन कै,
अंग अंग तुशट पुशट अवलोइ है ।
तैसु गुर देव सेव एक टेक जाहि, ताहि,
सुर नर बरबरह कोटि मक्षी कोइ है ॥ 468 ॥

सोइ पारो खात गात बिबिध विकार होत,
सोई पारो खात गात होत उपचार है ।
सोई पारो परतत कंचनहि सोख लेत,
सोई पारो परस तांबो कनिक धार है ।
सोई पारो अगहु है हाथ से न गहयो जाइ,
सोई पारो गुटका हवै सिध नमसकार है ।
मानस जनम पाइ जैसीऐ संगत मिलै,
तैसो पावै पदबी प्रापत अधिकार है ॥ 469 ॥

कूआ को मेडक निधि जानै कहा सागर की,
स्वांत बूंद महिमा न संख जीअ जानई ।
दिनकर जोति को उदोत कहा जानै उलू,
सेंबल सैं कहा खाइ सूआ हित ठानई ।
बाइस न जानत मराल माल संगत को,
मरकट न माणक हीरा न पहचानई ।
आन देव सेवक न जाने गुर देव सेव,
गुंगें बहिरे न कहि सुन मन आवई ॥ 470 ॥

जैसे धाम तीखन तपति अति विषम,
वैसन्तर बिहुन सिध करत न ग्रास कौ ।
जैसे निस ओस कै सजल होत मेर तिन,
बिन जल पान न निवारत पयास कौ ।
जैसे है ग्रीषम हुत प्रगटे प्रस्वेद अंग,
मिटत न फूकै बिन पवन प्रगास कौ ।
तैसे आवागवन न मिटै आन देव सेव,
गुरमुख पावैं निज पद के निवास कौ ॥ 471 ॥

अम्ब की सधर कत मिटत आंबली खाइ,
पिता को पयार न परोसी पहि पाईऐ ।
सागर की निधि कत पाइत पोषर सै,
दिनकर सर दीप जोत न पुजाईऐ ।
इन्द्र बरखा समान पुजसि न कूल जल,
चन्दन सुबास न पलास महिकाईऐ ।
स्री गुर दयाल सी दया न आन देव मैं,
जो खण्ड ब्रहमण्ड उदे असत लै धाइए ॥ 472 ॥

गिरत अकास ते परत प्रिथी पर जबै,
आसरो पवन गहै सोरो कौन काज है ।
जरत बैसन्तर जो धाय धाइ धाइ धूम्र गहै,
निकसयो न जाइ बल बुधि उपराज है ।
सागर अपार धार बूडत जो फेन गहै,
अनिथा बीचार पार जैबो को न साज है ।
तैसे आवागवन दुखत आन देव सेव,
बिन गुर सरन न मोख पद राज है ॥ 473 ॥

जैसे रूप रंग बिधि पूछै अन्धु, अन्धु प्रति,
आप ही न देखे ताहि कैसे कै दिखावई ।
जैसे राग नाद पूछै बहरो जो बहिरा पै,
समझे न आप ताहि कैसे समझावई ।
जैसे गुंग गुंग पहि बचन बिबेक पूंछैं,
बोल न सकत कैसे सबद सुनावई ।
बिन सतिगुर खोजै ब्रहम ग्यान धंयान जौपै,
अनथा अग्यान मति आन पै न पावई ॥ 474 ॥

अम्बर बेचन जाइ देत दिगम्बरन के,
प्राप्त न होइ लाभ सहसे है मूल को।
रतन परीखया सीखया चाहै जौ आन्धन सै,
रंकन पै राज मांगै मिथया भ्रम भूल को।
गुंगा पै पढ़न जाइ जोतक बैदक विदिग्रा,
बहरा पै राग नाद अनिथा अभूल को।
तैसे आन देव सेव दोष मेटि मोख चाहै,
बिन सतिगुर दुख सहै जम सूल को ॥ 475 ॥

बीज बोइ कालर में निपजै न धान पान,
मूल खोइ रोवै पुनि राज डण्ड लागई।
सलिल बलोइ जैसे निकसत नाहि ध्रित,
मटकी मथनीग्रा हू फोरि तोर भागई।
भूतन पै पूत मांगै होत न सपूती कोऊ,
जीग्र को परत संसो तयागै हूं न तयागई।
बिन गुर देव आन सेव दुखदाइक है,
लोक परलोक सोक जाहिं अनुरागई ॥ 476 ॥

जैसे मिरगराज तन जुंबक अधीन होत,
खगपति सुत जाइ जुहारत काग है।
जैसे राहू केतू बस ग्रैहन मैं,
सुरतरु सोभ न अरक बन रबि ससि लाग है।
जैसे काम धेन सुत सूकरी सथन पान,
ऐरापति सुत गरदभ अग्र भाग है।
तैसे गुर सिख सुत आन देव सेवक ह्वै,
निहफल जनम जयों बंस मै बजाग है ॥ 477 ॥

जो पै तंबूरी न डूबे सरिता प्रवाह विषे,
विषम कटक तऊ न तजत है मन ते।
जो पै लपटै पषाण पावक न जरै सूत्र,
जल मैं लै बोरत रिदै कठोरपन ते।
जो पै गुढ़ी उढ़ी देखिग्रति है अकास चारी,
बरखत दहं वांचीग्रै न बालकन ते।
तैसे रिधि सिधि भाउ दुतीग्रा त्रिगुण खेल,
गुरमुख सुख फल नाहि क्रितघन ते ॥ 478 ॥

कौडा पैसा रुपया सुनैया को वणज करै,
रतन पारखो होइ जौहरी करावई ।
जौहरी कहाइ पुन कौडा को वणज करो,
पंच परवान मैं पतिशटा घटावई ।
श्रान देव सेव गुर देव को सेवक होइ,
लोक परलोक बिखै ऊच पद पावई ।
छाड गुरुदेव सेव श्रान सेवक हवै,
निहफल जनम कपूत हवै हसावई ॥ 479 ॥

मन बच कर्म कै पतिब्रत करै जौ नारि,
तांहि मन बच कर्म चाहत भतार है ।
श्रभरण सिंगार चारु सिहजा संजोग भोग,
सकल कुटम्ब ही मैं ताको जै जै कार है ।
सहज श्रनन्द सुख मंगल सुहाग भाग,
सुन्दर मन्दर छबि सोहत सुचार है ।
सतिगुर सिखन कौ राखै ग्रिहे सावधान,
श्रान देव सेव भाउ दुबिधा निवार है ॥ 480 ॥

जैसे तौ पतिब्रता पतिब्रत मैं सावधान,
तां ही ते महेसुर हवै नाइका कहावई ।
श्रसन बसन धनधाम कामना पुजावै,
सोभत सिंगार चार सिहजा समावई ।
सतिगुर सिखन को राखत ग्रहसत में,
सम्पदा समूह सुख लुडे ते लुडावई ।
श्रसन बसन धन धाम कामना पवित्र,
श्रान देव सेव भाउ दुतिश्रा मिटावई ॥ 481 ॥

लोग बेद ज्ञान उपदेस है पतिब्रता कौ,
मन बच कर्म स्वामी सेवा श्रधिकार है ।
नाम इसनान दान संजम न जाप ताप,
तीरथ ब्रत पूजा नेम न तकार है ।
जग भोग नईवेद नहीं देव देव,
राग नाद बाद न सम्बाद श्रान दवार है ।
तैसे गुर सिखन मैं एक टेक ही प्रधान,
श्रान ग्यान धयान सिमरन बिभचार है ॥ 482 ॥

जैसे पतिब्रता को पवित्र घर वास नात,
असन बसन धन धाम लोकाचार है ।
तात मात भ्रात सुत सुजन कुटम्ब सखा,
सेवा गुरजन सुख अभरण सिंगार है ।
किरति विरति परसूत मल मूत्र धारी,
सकल पवित्र जोई बिबिध अचार है ।
तैसे गुर सिखन को लेपु न ग्रहसत मैं,
आन देव सेव धृरिग जनम संसार है ॥ 483 ॥

आदिक औ सोम भौम बुधि हूं ब्रहसपति,
सुकर शनीचर सातोबार बांट लीने हैं ।
थित्त पख मास रुत लोगन मैं लोगाचार,
एक एकंकार को न कोऊ दिन दीन है ।
जनम अष्टमी रामनौमी एकादसी भई,
द्वादसी चतुरदसी जनमु ए कीने है ।
परजा उपराजन को न कोऊ पावै दिन,
अजोनी जनम दिन कैसे कहो चीने है ॥ 484 ॥

जांको नाम है अजोनी कैसे कै जनम लेत,
कहा जान ब्रत जनमाशटमी को कीनो है ।
जांको जगजीवन अकाल अविनाशी नाम,
कैसे कै बधक मारयो अपयस लीनो है ।
निरमल निरदोख मोख पद जांकै नाम,
गोपी नाथ कैसे हवै विरह दुःख दीनो है ।
पाहन की प्रतिमा को अन्ध कन्ध है पुजारी,
अन्तर अग्यान ग्यान गुर हीनो है ॥ 485 ॥

सूरज प्रगास, नास उडगन अगणित जयों,
आन देव सेव गुर देव के धिआन कै ।
हट बाट घाट ठाट घटै घटै निस दिन,
तैसे लोग बेद भेद सतिगुर ग्यान कै ।
चोर जार औ जुआर मोह द्रोह अन्धकार,
प्रात समै सोभा नाम दान इशनान कै ।
आन सर मेडक सिवाल घोघा, मानसर,
पूर्ण ब्रहम गुर सरब निधान कै ॥ 4·6 ॥

निसि दिन अन्तर ज्यों अन्तर बखानीअति,
तैसे आन देव गुगदेव सब जानीऐ ।
निस अन्धकार बहु तारका चमतकार,
दिन दिनकर एकंकार पहिचानीऐ ।
निस अन्धयारी में विकारी है विकार हेतु,
प्रात: समै नेह निरंकारी उनमानीऐ ।
रैन सैन समैं ठग चोर जार हवै अनीत,
राज नीति रीत प्रीति वासर बखानीऐ ॥ 487 ॥

निस दुरमति हवै अधरम करम हेत,
गुरमात वासर धरम करम हैं ।
दिनकर जोत को उदोत सब कुछ सूझै,
निस अन्धयारी भूले भ्रमत भरम है ।
गुरमुख सुख फल दिबि देह द्रिशटी हवै,
आन देव सेवक हवै द्रिशटी चरम है ।
संसारी संसारी संग अन्ध कन्धलागै,
गुरमुख संध परमार्थ मरम है ॥ 488 ॥

जैसे जल मिल बहु बरन बनासपति,
चन्दन सुगन्ध बन चन्दन करत है ।
जैसे अगनि अगनि धात जोइ सोइ देखियत,
पारस परस जोति कंचन धरत है ।
तैसे आन देव सेव मिटत कुटेव नहीं,
सतिगुर देव सेव भै जल तरत है ।
गुरमुख सुख फल महातम अगाध बोध,
नेति नेति नेति नमो नमो उचरत है ॥ 489 ॥

प्रगट संसार बिभचार करै गनिका, पै,
ताहि लोग बेद अरु ग्यान की न कान है ।
कुलाबधु छाडि भरतार आन द्वार जाइ,
लाछन लगावै कुल—अकंसु न मान है ।
कपट सनेही बग धयान आन सर फिरै,
मानसर छाडै हंस बंस में अग्यान है ।
गुरमुख मनमुख दुरमति गुरमति,
पर तन धन निरलेप धयान है ॥ 490 ॥

पान जै कपूर लौंग चर काग आगै राखे,
बिसटा बिगन्ध खात अधिक सियान कै ।
बार बार स्वान जौ पै गंगा इशनान करै,
टरै न कुटेव देव होत न अग्यान कै ।
साप जो पै पान मिसटान महा अम्रित कै,
उगलत कालकूट होमै अभिमान कै ।
तैसै मानसर साध संगत मराल सभा,
आन देव सेवक तकत बग धयान कै ।। 491 ।।

चकई चकोर अहिनिसि ससि भान धयान,
जाही जाही रंग रचयो ताही ताही चाहै जी ।
मीन औ पतंग जल पावक प्रसंग हेत,
टारी न टरत टेव और बिरबाहै जी ।
मानसर आनसर हंस बग प्रीत रीत,
उत्तम औ नीच न समान समता है जी ।
तैसे गुरुदेव आन देव सेवकन भेद,
समसर न होत समुन्द्र सरता है जी ।। 492 ।।

प्रीतपाइ पेखै प्रतिबिम्ब चकई जयों निस,
गुरमति आपा आप चीन पहिचानीऐ ।
बैर भाइ पेखै परछाई कूपन्तर परै,
सिंध दुरमति लग दुबिधा कै जानीऐ ।
गौ सुत अनेक एक संग हिलमिल रहै,
स्वान आन देखत विरुध जस ठानिए ।
गुरमुख मनमुख चन्दर औ बांस बिधि,
ब्रन के दोषी बिकारी उपकारी उनमानीऐ ।। 493 ।।

कोऊ जो बुलावै कहि स्वान म्रिग सरप कै,
सुनत रिसाइ धाइ गार मार दीजीऐ ।
स्वान स्वामि काल लग जामनी जागत रहै,
नादहि सुनाइ म्रिग प्राण हाज कीजीऐ ।
धुन मन्त्र पढ़ै सरप अरपदेत तन मन,
दन्त हंत होत गत लाज गहि लीजिऐ ।
मोहन भगतभाव सबद सुरत हीन,
गुर उपदेस बिन ध्रिग जग जीजीऐ ।। 494 ।।

जैसे घर लागै आग जाग कूआ खोदयो चाहै,
कारज न सिध होइ रोइ पछताईऐ ।
जैसे तौ सग्राम समै सीखियो चाहै बीर विदया,
अनथा उतम जैत पदवी न पाईऐ ।
जैसे निस सोवत संगाती चल जात,
पाछै भोर भए भार बांध चले कत जाईऐ ।
तैसे माया धन्ध अन्ध अवध विहाइ जाइ,
अन्तकाल कैसै हरिनाम लिव लाईऐ ।। 495 ।।

जैसे तौ चपल जल अन्तर न देखीअति,
पूरन प्रगास प्रतिबिम्ब रवि ससि को,
जैसे तो मलीन दर्पन मैं न देखीअति,
निरमल बदन सरूप उरबसि को ।
जैसे बिन दीप न समीप को बिलोकीअति,
भवन भयान अन्धकार त्रास तस को ।
तैसे माया भरम कै अधम अछादयो मनु,
सतिगुर धयान सुखदा न प्रेम रस को ।। 496 ।।

जैसे एक समै द्रुम सफल सपत्र पुनः,
एक समै फूल फल पत्र गिरजात है ।
सरिता सलिल जैसे कबहूं समान बहै,
कबहूं अथाह अनि प्रबल दिखात है ।
एक समै जैसे हीरा होत जीरनांबर मैं,
एक समै कंचन जड़े जगमगात है ।
तैसे गुर सिख राज कुंवर जोगीशर है,
माया धारी भारी जोग जुगत जुगात है ।। 497 ।।

अशन बसन संग लीनि औ बचन कीने,
जनम लै साध संग स्री गुर अराधे है ।
ईहा आइ, दाता बिसराइ, दासी लपटाइ,
पंच दूत भूत भ्रम भ्रमत असाध है ।
साच मरणो बिसार, जीवन मिथया संसार,
समझै न जीत हार सुपन समाधि है ।
औसर ह्वै है बतीत, लीजिऐ जनम जीत,
कीजै साध संग प्रीति अगम अगाध है ॥ 498 ॥

सफल जनम गुर चरण शरण लिव,
सफल द्रिशटी दरस अलोईऐ ।
सफल सुरति गुर सबद सुनत नित,
जिह्वा सफल गुननिध गुर गोईऐ ।
सफल हसत गुर चरण पूजा प्रणाम,
सफल चरन परदक्खना कै पाईऐ ।
संगत सफल साध संगत सहज घर,
हिरदा सफल गुरुमति कै समोईऐ ।। 499 ।।

कत पुन मानस जनम कत साध संग,
निस दिन कीरतन समै चल जाईऐ ।
कत पुन द्रिशटी दरस ह्वै परस पर,
भावनी भगतिभाइ सेवा लिव लाईऐ ।
कत पुन राग नाद बाद है संगीत रीत,
स्री गुर सबद धुनि सुन पुन गाईऐ ।
कत पुन कर किरतास लेख मसवानी,
श्री गुर सबद लिख निजपद पाईऐ ।। 500 ।।

जैसे तौ पलास पत्र नागबेल मेल भए,
पहुचत कर नरपति जग जानीऐ ।
जैसे तौ कुचील नील बरन बरन बिषै,
हीर चीर संग निरदोख उनमानीऐ ।
सालग्राम सेवा समै महा अपवित्र संख,
परम पवित्र जग भोग बिषै आनीऐ ।
तैसे मम काग साध संगत मराल माल,
मार न उठावत—गावत गुर बानीऐ ।। 501 ।।

जैसे जल मध मीन महिमा न जाने पुन:
जल बिन तलफ तलफ मर जात है ।
जैसे बन बस्त महातमै न जानै पुन:
पर बस भए खग म्रिग अकुलात है ।
जैसे प्रिय संगम को सुखहै न जानै त्रिया,
बिछुरत बिरह ब्रिथा कै बिललात है ।
तैसु गुर चरन शरन आतमा अचेत,
अन्तर परत सिमरत पछुतात है ।। 502 ।।

भक्त वछल सुन हौं निरास रिदै,
पतित पावन सुन आशा उरधार हौं ।
अंतरजामी सुन कंपत हूौं अन्तरगत,
दीन कै दयाल सुन भै भरम टार हौं ।
जलधर संगम कै अफल सेंबल द्रुम,
चन्दन सुगन्धि समबन्ध मलगार हौं ।
आपनी करनी कर नरक न पावों ठौर,
तुमरे विरद कर आसरो समार हौं ॥ 503 ॥

जौ हम अधम करम के पतित भए,
पतित पावन प्रभ नाम प्रगटायो है ।
जो भए दुखत अरु दीन परचीन लग,
दीन दुख भंजन बिरद बिरदायो है ।
जो ग्रसे अर्क-सुत नरक निवासी भए,
नरक निवारण जगत जस गायो है ।
गुण किये गुण सब कोऊ करै क्रिया निधान,
अवगुण किये गुण तोही बनआयो है ॥ 504 ॥

जैसे तो अरोग भोग भोगवे नाना प्रकार,
बिथावंत खान पान रिदै न हितावई ।
जैसे महिषी सहन सील कै धीरज धुजा,
अजिया मैं तनक कलेजो न समावई ।
जैसे जोहरी बिसाहै वेचै हीरा माणकादि,
रंक पै न राखयो परे जोग न जुगावई ।
तैसे गुर परचे पवित्र है पूजा प्रसादि,
अपचु अपरचे दुसह दुख पावई ॥ 505 ॥

जैसे विष तनक ही खात मर जात तात,
गात मुरझात प्रतिपाली बरखान की ।
महिषी दुहाइ दूध राखिऐ भांजन भर,
परत कांजी की बूंद बाद न रखान की ।
जैसे कोट भार तूल रंचक चिनक परे,
होत भस्मात छिन मै अकरखान की ।
तैसे परतन धन दूषना विकार किये,
हरै निधि सुक्रित सहज हरषन की ॥ 506 ॥

चन्दन समीप बस महिमा न जानी बांस,
आन द्रुम दरों भए बासना के बोहे है ।
दादर सरोवर मै जानी कमल गति,
मधुकर मन मकरंद के विमोहे है ।
तीरथ बसत बग मरमु न जानयो कछ,
सरधा के जात्रा हेत जात्री जन सोहे है ।
निकट बसत मम गुर उपदेस हीन,
दुरन्तर सिर उर अन्तर ले पोहे है ॥ 507 ॥

जैसे परदारा को दरस द्रग देखयो चाहै,
तैसे गुर दरसन देख है न चाहि कै ।
जैसे पर निन्दा सुने सावधान सुरति कैं,
तैसे गुर शब्द न सुने उतसाहि कै ।
जैसे पर दरब हरण को चरण धावै,
तैसे कीरतन साध संग न उमाहि कै ।
उल्लू काग नाग धयान खान पान को न जानै,
ऊच पद पावै नहीं, नीच पद गहि कै ॥ 5(8 ॥

जैसे रैन समै सब लोग मैं संजोग भोग,
चकई बियोग सोग, भाग हीन जानीऐ ।
जैसे दिनकर के उदोति जोति जग मग,
उल्लू अन्ध कन्ध परचीन उनमानीऐ ।
सरवर सरिता समुंदर जल पूरन है,
त्रिषावंत चात्रिक रहत बकबानऐ ।
तैसे मिल साध संग सकल संसार तरयो,
मोहि अपराधी अपराधन बिहानीऐ ॥ 509 ॥

जैसे फल फूल को लिजाइ बनराइ प्रति,
करै अभिमान कहो कैसे बनिआवे जी ।
जैसे मुकताहन समुंदर को दिखावै जाइ,
बार बार ही सराहै सोभा तो न पावै जी ।
जैसे कणी कंचन सुमेर सनमुख राख,
मन मैं गरव करै बावरो कहावै जी ।
तैसे ग्यान धयान ठान प्राण दै रिझाइ चाहै,
प्राणपति सतगुर कैसे के रिझावै जी ॥ 510 ॥

जैसे चोग्रा चन्दन ग्रौ धान पान बेचन को,
पूरब दिसा लै जाइ कैसे बनिग्रावै जी ।
पछम दिसा दाख दारन लिजाइ जैसे,
म्रिगमद केसर लै उतर को धावै जी ।
दक्खन दिसा लै जाइ लाइची लवंगलादि,
बाद ग्रासा उदम है बिड़तो न पावै जी ।
तैसे गुण निधि गुरु सागर कै विदमान,
ग्यान गुण प्रगट कै बावरो कहावै जी ॥ 511 ॥

चलनी मे जैसे देखीग्रति है ग्रनेक छिद्र,
करै करवा की निन्दा कैसो बनिग्रावै जी ।
बिरख बंबूर भरपूर बहु सूरन सै,
कमलै कटीलो कहै काहूं न सुखावै जी ।
जैसे उपहास करे बाइस मराल प्रति,
छाड मुकताहल द्रुगन्धि लिवलावै जी ।
तैसे हम महा ग्रपराधी ग्रपराध भरयो,
सकल संसार को विकार मोहि भावै जी ॥ 512 ॥

ग्रपदा ग्रधीन जैसे दुखत दुहागन, को,
सहज सुहागु न सुहागन को भावई ।
बिरहणी बिरह बियोग बियोग मैं संजोगनि, को,
सुन्दर सिंगार ग्रधिकोरु न सुहावई ।
जैसे तन मांझि बांझि रोग सोग संसो स्रम,
सौतन कै सुत पेख महा दुःख पावई ।
तैसे पर तन धन दूषण त्रिदाप मम,
साधन को सुक्रित न हिरदै हितावई । 513 ॥

जल सै निकास मीन राखिये पटम्बर में,
बिन जल तलफ तजत प्रिया प्राण है ।
बन सैं पकर पंछी पिंजरी मै राखीग्रै,
॥ तौ ॥ बिन बन मन उनमन उनमान है ।
भावनी भतार बिछुरत ग्रति छीन दीन,
बिलख बदन ताहि भवन भैग्रान है ।
तैसे गुरसिख बिछरत साध संगत सैं,
जीवन जतन, बिन संगत न ग्रान है ॥ 514 ॥

जैसे टूटे नागबेल से बिदेस चल जाति,
सलल संजोग चिरकाल जुगवत है ।
जैसे कूंज बक्चरा तिश्राग दिसन्तरि जाति,
सिमरन चित निरबिघन रहत है ।
गंगोदिक जैसे भरि भांजन लै जात जात्री,
सुंजस ग्रधार निरमल निबरत है ।
तैसे गुर चरण शरण कै ग्रन्तर सिख,
शब्द संगत गुर धयान से जीग्रत है ॥ 515 ॥

जैसे विन पवन, कवन गुण चन्दन के,
बिन मलिग्रागर पवन कत बास है ।
जैसे विन बैद ग्रवखद गुण गोप होत,
ग्रवखद बिन बेद रोग को न ग्रास है ।
जैसे बिन बोहिथ न पार परै खेवट सै,
खेवट बिहून कत बोहिथ बिसवास है ।
तैसे गुर नाम बिन गम्म न परम पद,
बिन गुर नाम निहकाम न प्रगास है ॥ 516 ॥

जैसे काचो पारो खात उपजे विकार गात,
रोम रोम कै पिरात महा दुख पाइग्रै ।
जैसे तो लसन खाइ मोन कै सभा में बैठे,
प्रगटै द्रुगन्ध नाहि दुरत दुराईग्रै ।
जैसे मिसटान पान संगम कै माखी लीले,
हेत उकलेद खेद संकट सइाईग्रै ।
तैसे ही ग्रपरचे पिण्ड सिखन की भिखग्रा खाइ,
ग्रन्त काल भारी होइ यमलोक जाईग्रै ॥ 517 ॥

जैसे मेघ बरसत हरखत है क्रिसान,
बिलख बदन लोधा लोन गर जाति है ।
जैसे प्रफुलत हवै सकल बनसपति,
सुकस जवासों ग्राक—मूल मुरझात है ।
जैसे खेत सरवन पूरन किरष जल,
ऊच थल कालर न जल ठहिरात है ।
गुर उपदेस परवेस गुरसिख रिदै,
साकति सकत मन सुन सकुचात है ॥ 518 ॥

जैसे राजा रवत अनेक रवनी सहेत,
सकल सपूती एक बांझ न संतान है।
सीचत सलिल जैसे सफल सकल द्रुम,
निहफल सेंबल सलिल निरवान है।
दादर कमल जैसे एक सरवर बिषै,
उत्तम औ नीच नीच दिनकर धयान है।
तैसे गुर चरण शरण है सकल जगु,
चन्दन बनासपति बास उनमान है ॥ 519 ॥

जैसे तो बछुरा बिललात मात मिलबे को,
बन्धन कै बस कछु बसु न बसात है।
जैसे तौ बिगारी चाहै भवन गवन कियो,
पर बस परे चितवत ही बिहात है।
जैसे बिरहनी प्रिया संगम सनेह चाहे,
लाज कुल अंकुस कै दुरबल गात है।
तैसे गुर चरण शरण सुख चाहै सिख,
आगया बध रहत बिदेस अकुलात है ॥ 520 ॥

परतन परधन पर अपवाद बाद,
बल छल बंच परपंच ही कमात है।
मित्र, गुर, सवामि, द्रोह, काम क्रोध लोभ मोह,
गोबधु बिसवास बंस विप्र घात है।
रोग सोग हवै बियोग अपदा दरिद्र छिद्र,
जनम मरन जम लोक बिललात है।
क्रितघन विसख विषादी कोटि दोषी दीन,
अधम असख मम रोम न पुजात है ॥ 521 ॥

बेसवा के संगार बिभचार को न पार पाईअै,
बिन भरतार काकी नार कै बुलाईअै।
बगु सेत जीव घात कर खात केते को है,
मोन गहि धयान धरे जुगति न पाईअै।
भाण्ड की भण्डाई बुराई न कहत आवै,
अति ही ढिठाई सकुचत न लजाइअै।
तैसे पर तन धन दूषण त्रिदोष मम,
अधम अनेक एक रोम न पुजाईअै ॥ 522 ॥

जैसे चोर चाहीग्रै चढ़यौ सूरी चौबटा में,
चुहुटी लगाइ छाडियै तो कहा मार है।
खोट शरहयों निकारयों चाहीग्रै नगर हूं से,
तांकी ग्रोर मोर मुख बैठे कहां ग्रार है।
महा बज्र भार डारियो चाहीग्रै जो हाथी पर,
तांहि सिर छार के उडाइ कहा भार है।
तैसे ही पतित पति कोट न पासंग भर,
मोह सम डण्ड ग्रौ नरक उपकार है ॥ 523 ॥

जो पै चोर चोरी कै बतावै हंस मानसर,
छूटै के न जाइ घर, सूरी चाढ़ मारीग्रै।
बाटमार बाटपार बग मीन जो बतावै,
तत् खिन ततकाल मूंड काट डारीग्रै।
जो पै परदारा भज भ्रिमन बतावै बिटु,
कान नाक खण्ड डण्ड नगर निकारीग्रै।
चोरी बाटपारी परनारी कै त्रिदोष मम,
नरक ग्ररक सुत डण्ड देत हारीग्रै ॥ 524 ॥

जात है जगत जैसे तीरथ यात्रा नमित,
मांझ ही बसत बग महिमा ना जानी है।
पूरन प्रगास भासकर जग मग जोति,
उलू ग्रन्ध कन्ध बुरी करनी कमानी है।
जैसे तो बसन्त समै सफल बनासपती,
निहफल सेंबल बडाई उन ग्रानी है।
मोहि गुर सागर में चाखयो नहीं प्रेम रस,
त्रिभावंत चात्रिक जुगत बकवानी है ॥ 525 ॥

जैसे गजराज-गाज मारत मनुष, सिर
डारत है छार ताहि कहत ग्ररोग जी।
जैसे सुग्रा पिंजरे में कहत बनाइ बाते,
पेख सुन कहे तांहि राज ग्रिह जोग जी।
तैसे सुख सम्पत मदोनमत्त पाप करै,
तांहि कहै सुखीग्रा रमत रस भोग जी।
जती सती ग्रौ संतोषी साधन की निन्दा करै,
उलटो ग्यान धयान है ग्रग्यान लोग जी ॥ 526 ॥

सवैया

जो गरवै बहु बूंद चिन्ततरि,
सनमुख सिन्ध सोभा नहीं पावै ।
जो बहु उड़ै खग धार महा बल,
पेख अकास रिदै सुकचावै ।
जयों ब्रह्मण्ड प्रचण्ड बिलोकत,
गूलर जन्त उडन्त लजावै ।
तूं करता हम कीए तिहारे जी,
तोपहि बोलन कयों बन आवै ॥ 527 ॥
तोसो न नाम, अनाथ न मोसर,
तोसो न दानि, न मोसो भिखारि ।
मोसो न दीन, दयाल न तोसर,
मोसो अग्यान, न तोसो बिचारी ।
मोसो न पतत, न पावन तोसर,
मोसो विकार न तोसो पकारी ।
मोरे हैं औगुण, तू गुन सागर,
जात रसतल ओट तिहारी ।' 528 ॥

कवित्त

उलट पवन मन मीन की चपल गति,
दसम दुवार पार अगम निवास है ।
तह न पावक पवन जल प्रिथमी अकास,
नांहि ससि सूर उतपत न बनास है ।
नाहि परकृत विरत पिण्ड प्राण ग्यान,
शब्द सुरति नाहिं द्रिशटि प्रगास है ।
सवामी न सेवक उनमान अनहद परै,
निरालम्ब सुन्न मैं न बिसन बिसवास है ॥ 529 ॥
जैसे अहिनिसि मद रहत भांजन विषै,
जानत न मरम किधौं कवन प्रकारी है ।
जैसे बेली भर भर बाटि दीनीअति सभा,
पावत न भेद कुछ बिधि न बिचारी है ।
जैसे दिन प्रति मद बेचत कलाल बेठो,
महिमा न जानई दरब हितकारी है ।
तैसे गुर शबद को लिख पढ़ गावत है,
बिरलो अमृतरस पद अधिकारी है ॥ 530 ॥

तिनु तिनु मैल जैसे छान छाइग्रति, पुन,
ग्रगनि प्रकाश तास भसम करत है ।
सिन्ध के किनारे जैसे बालु ग्रिह बालु रचै,
लहर उमग भए धीर न धरत है ।
जैसे बन बिषै मिल बैठत ग्रनेक म्रिग,
एक म्रिगराज गाजे रहयो न परत है ।
द्रिशटि शब्द ग्रर सुरति सो ग्यान धयान,
प्रगटे पूरन प्रेम सगल रहत है ।। 531 ।।

चन्दन की बार जैसे दीजिग्रै बंबूर द्रुम,
कंचन संपट मधि काच गहि राखीग्रै ।
जैसे हंसु पास बैठ बाइस गरब करै,
म्रिगपति भवन मैं जम्बक भलाखीग्रै ।
जैसे गरधब गज प्रति उपहार करै,
चक्रवै को चोर डांडै दूध मध माखीग्रै ।
साधन दुराइ कै ग्रसाध ग्रपराध करै,
उलटीग्रै चाल कली काल भ्रम भाखीग्रै ।। 532 ।।

जैसे बिन लोचन बिलोकीग्रै न रुप रंग,
स्रवन बिहून राग नाद न सुनीजीग्रै ।
जैसे बिन जिहवा न उच्चरै बचन ग्रर,
नासका बिहून बास बासना न लीजीग्रै ।
जैसे बिन कर कर सकै न क्रित क्रम,
चरन बिहून भौन गौन कत कीजीग्रै ।
ग्रसन बसन बिन धीरज न धरै देह,
बिन गुर सबद न प्रेम रसु पीजीग्रै ।। 533 ।।

जैसे फल तैं बिरख, बिरख से होत फल,
ग्रदभुति गति कछु कहनु न ग्रावै जी ।
जैसे बास बावन मैं, बावन है बासु बिषै,
बिसम चरित्र कोऊ मरम न पावै जी ।
काशट मैं ग्रगनि ग्रगनि में काशट है,
ग्रति ग्रसचरज है कौतक कहावै जी ।
सतिगुर मैं शबद, शबद मैं सतिगुर है,
निरगुण ग्यान धियान समझावै जी ।। 534 ।।

जैसे तिल बास बास लीजीग्रत कुसम से,
तांते होत है फुलेल जतन के जानीग्रै ।
जैसे तो ग्रोटाइ दूध, जामन जगाइ मथ,
संजम, सहत घ्रित प्रगट कै मानिए ।
जैसे कूग्रा खोद कै वसुधा धसाइ कौरी,
लाजु कै वहाइ डोल काढ जल ग्रानीग्रै ।
गुर उपदेश तैसे भावनी भगति भाइ,
घटि घटि पूरन ब्रहम पहिचानीग्रै ।। 535 ।।

जैसे तो सरिता जलु काशट को न बोरत,
करत चितलाज ग्रपनो ही प्रतिपारयो है ।
जैसे तो करत सुत ग्रनिक ग्रयानपन,
तऊ न जननि ग्रवगुण उरधारयो है ।
जैसे तो सरण सूर पूरन प्रतगया राखै,
लख ग्रपराध कीये मार न विडारियो है ।
तैसे ही परमगुर परस गति,
सिखन को क्रितक्रमु कछु न बिचारयो है ।। 536 ।।

जैसे जल धोइ बिन ग्रम्बर मलीन होत,
बिन तेल मेले तैसे केस हूं भयान है ।
जैसे बिन मांजे दरपन जोति हीन होत,
बरषा बिहून जैसे खेत मैं न धान है ।
जैसे बिन दीपक भवन ग्रन्धकार होत,
लोन घृत बिन जैसे भोजन मासान है ।
तैसे बिन साध संग जन्म मरण दुख, मिटत न
भै भरम बिन गुर ग्यान है ।। 537 ।।

जैसे मांझि बैठे बिन बोहिथ न पार परै,
पारस परस बिन धांत न कनिक है ।
जैसे बिनु गंगा नाहि पावन है ग्रान जल,
नारि न भतार बिन सुत न ग्रनिक है ।
जैसे बिन बीज बोइ निपजै न धान धारा,
सीप सवांति बूंद बिनु मुकता न मनिक है ।
तैसे ही सो चरण शरण गुर भेटे बिन,
जनम मरण मेट जननि जनक है ।। 538 ।।

जैसे तौं मंजार कहै, करों न अहार मास,
मूसा देख पाछे दौर धीर न धरत है ।
जैसे काग रीस कै मराल सभा जाइ बैठे,
छाड मुकताहल द्रुगन्ध सिमरत है ।
जैसे मौन गहि सयार जतन अनेक कर,
सुनत सयार भाषया रहयो न परत है ।
तैसे पर तन पर धन दूषना त्रिदोष मन,
कहत कै छाड़िऐ चाहै टेव न टरत है ॥ 539 ॥

झूलना छन्द ॥

सिम्रित पुरान कोटान बखान बहु,
भागवत बेद बिआकरण गीता ।
सेस मरजेस अखलेस सुर महेस मुनि,
जगत अर भगत सुर नर अतीता ।
ग्यान अरु धयान उनमान उनमन उकत,
राग नादि दिनसुर मति नीता ।
अरध लग मात्र गुर शबद अखरमेक,
अगम अति अगम अगाध मीता ॥ 540 ॥

कवित्त ।

दरसन देखयो देखयो सकल संसर कहै,
कवन सों द्रिशटि मन दरस समाईऐ ।
गुर उपदेस सुनयो सुनयो सब कोऊ कहै,
कवन सुरत सुन अनत न धाईऐ ।
जै जै कार जपत जपत गुर मन्त्र जीह,
कवन जुगत जोती जोति लिव लाईऐ ।
द्रिशटि सुरति ग्यान धयान सरबंग हीन,
पतित पावन गुर मूढ़ समझाइऐ ॥ 541 ॥
जैसे खाण्ड खाण्ड कहै मुख नहीं मीठा होइ,
जब लगु जीभ सवादि खाण्ड नहीं खाईऐ ।
जैसे राति अन्धेरी में दीपक दीपक कहै,
तिमर न जाइ, जब लग न जराईऐ ।
जैसे ग्यान ग्यान कहै ग्यान हूं न होत कछू,
जग लग गुर ग्यान अन्तर न पाईऐ ।
तैसै गुर धयान कहे धयान हूं न पावत है,
जब लग गुर दरस जाइ न समाईऐ ॥ 542 ॥

सिम्रिति पुराण बेद शासत्र बिरंच बयास,
नेति नेति नेति सुक सेख जश गायो है।
सिव सनकादि नारदादिक रखीसरादि,
सुर नर नाथ जोग धयान से न आयो है।
गिर तर तीरथ गवन पुन दान व्रत,
होम जग भोग लई वेद कै न पायो है।
अस बडभाग माया मध गुर सिखन को,
पूरन ब्रहम गुर रुप ह्वै दिखायो है ॥ 543 ॥

बाहर की अगनि जयों बूझै जल सरिता कै,
नाओं मैं जो आग लागै कैसे कै बुझाईऐ।
बाहर से भाग ओट लीजीअत कोट गढ़,
गढ़ में जो लूट लीजै कहो कत जाईऐ।
चोरन कै त्रास जाए सरण नरिन्द गहै,
मारै महीपति जीओ कैसे कै बचाईऐ।
माया डर डरपत हार गुरदवार जावै,
तहां जो बिआपै माया कहां ठहराईऐ ॥ 544 ॥

सप कै त्रास सरण गहै खगपति जाइ,
तहां सो सप ग्रसे कहो कैसे कीजीऐ।
जम्बक से भाग म्रिगराज की सरण, गहै,
तहा जो जम्भक हरै कहो कहा कीजीऐ।
दारिद्र कै चांपै जाहि सरण सुमेर सिन्ध,
तहां जो दारिद्र दहै काहि दोस दीजीऐ।
करम भरम के शरण गुरदेव गहै,
तहा न मिटै करम कीन ओट लीजीए ॥ 545 ॥

जैसे तो सकल निधि पूरन समुद्र बिषै,
हंस मरजीव निरभै प्रसादि पावई।
जैसे परबत हीरा माणिक पारस, सिध
खनवारा खनि जग विषै प्रगटावई।
जैसे बन विषै मलिआगर कपूर सोधा, सोध कै,
सुबास सुवास बिहसावई।
तैसे गुरु वाणी विषै सकल पदारथ है,
जोई जोई खोजै सोई सोई निपजावई ॥ 545 ॥

पर त्रिया दीरघ समान लघु जावदेक,
जननि भगति सुता रुप कै निहारीऐ।
पर दरवासा गऊ मास तुल जानी रिदै,
कीजै न सपरस अपरस सिधारीऐ।
घटि घटि पूरन ब्रहम जोति ओत पोत,
अवगुण गुण कांहू रिदै न विचारीऐ।
गुरु उपदेस मन धावत बरज राखै,
पर तन धन पर पर दूषना निवारीऐ ॥ 547 ॥

जैसे प्रात: समै खग जात उड बिरख सैं,
बहुराइ बैठत बिरख ही मैं आइ कै।
चीटी चीटा बिल से निकस धर गवन कैं,
बहुरु पैसत जैसे बिल ही में जाइ के।
लरका लरै कै रूठ जात मात तात सन,
भूख लागे तयागे हठ आवै पछुताइ कै।
तैसे ग्रहि तयाग भाग युवत उदास बास,
आसरो तकत पुन: असत को धाइ कै ॥ 548 ॥

काहूं दिसाको पवन गवन कै बरखा है,
काहूं दिसा को पवन बादर बिलात है।
काहूं जल पान कीए रहत अरोग देही,
काहूं जल पान बियापै बिललात है।
काहूं ग्रिह की अगन पाक साक सिध करै,
काहूं ग्रिह की अगनि भवन जरात है।
काहूं की संगत मिल जीवन मुकति होइ,
काहूं की संगत मिल जमपुर जात है ॥ 549 ॥

प्रीतम के मेल खेल प्रेम नेम के पतंग,
दीपक प्रगास जोती जोति हूं समावई।
सहज संजोग अर बिरह बियोग विषै,
जल मिल बिछुरत मीन हवै दिखावई।
सबद सुरति लिव थकत चकत होइ,
सब्द बेधी कुरग जुगति जतावई।
मिलि बिछुरत अर सब्द सुरति लिव,
कपट सनेह कै सनेही न कहावई ॥ 550 ॥

दर्शन दीप देखि होइ न मिलै पतंग,
परचा बिहून गुर सिख न कहावई ।
सुनत सबद धुनि होइ न मिलत म्रिग,
सबदि सुरति हीन जनमु लजावई ।
गुर चरनाम्रित कै चात्रिक न होइ मिलै,
रिदै न विसवास गुरदास हवै हसावई।
सति रुप सतिनाम सतिगुर ग्यान धयान,
एक टेक सिख जल मीन हवै दिखावई ॥ 551 ॥

उत्तम मधिम अर अधम त्रिबिधि जग,
आपनो सुवन काहू बुरो तो न ताग है ।
सब कोऊ वणज करत लाभ लभद को,
आपने बयोहार भलो जान अनुराग है ।
तैसे आपने आपने इसट चाहत सबै,
अपने पहिरे सब जगत सुजाग है ।
सुबन समरथ भए बणज बिकाने जानै,
इशट परताप अन्तकाल अग्रभाग है ॥ 552 ॥

अपनो सुवन सब काहूऐ सुन्दर लागै,
सफल सुन्दरता, संसार मैं सहारीऐ ।
आपनो वणजु बुरो लागत न काहू रिदे,
जाहि जग भलो कहै सोई तौ बिसाईऐ ।
अपनो करम कुला धरम करत सबै,
उत्तम करम लोग बेद अवगाहीऐ ।
गुर बिन मुकति न होय सब कोऊ कहै,
माया मैं उदास राखै सोई गुर चाहीऐ ॥ 553 ॥

जैसे मधु माखी सींच सींच कै इकत्र करै,
हरै मधु आइ ताकि मुख छार डार कै ।
जैसे बछ हेत गऊ संचत है छीर, ताहि,
लेत है अहीर दुहि बछुरे बिटार कै ।
जैसे धर खोद खोद कर बिल साजै मूसा,
पैंसत सरप धाइ खाई तांहि मार कै ।
तैसे कोट पाप कर माया जोर जोर मूढ़ं,
अन्तकाल छाड चलै दोनो कर झार कै ॥ 554 ॥

जांके एक फनि अग्र भाग है धरन धारी,
ताहि गिरधर कहै कौन सी बडाई है।
जांको एक बावरो हूं विसवनाथ नाम कहै,
तांहि बिजरनाथ कहे कौन अधिकाई है।
अनिक अकार उअंकार के बिथार,
ताहि नन्द नन्दन कहै कौन प्रभु है।
जानै उततुति और करत है निन्दा मूढ़,
ऐसे अराधवै ते मौन सुखदाई है ॥ 555 ॥

सवैया ॥

बेद बिरंच बिचार न पावत,
चक्रत सेष शिकाद भए हैं।
जोग समादि उराधत नारद,
सारद शुक्र सनात नए हैं।
आदि अनादि अगाध अगोचर,
नाम निरंजन जाप जए हैं।
स्त्री गुरदेव समेव सु संगत,
पैरि पए भाई पैरि पए हैं॥ 556 ॥

दूसरा स्कंध

कवित्त

जैसे तौ कंचने पारो परसत सोखि लेत,
अगनि में डारे पुन पारो उड़ जात है।
जैसे मल मूत्र लगि अंबर मलीन होत,
साबन सलिल मिलि निरमल गात है।
जैसे अहि ग्रसे बिष ब्यापत सगल अंग,
मन्त्र के बिखै विकारू सब सु बिलात है।
तैसे माया मोह के विमोहत मगनु मनु,
गुरु उपदेसि माया मूलि मुरझात है ॥ 557 ॥

जैसे पाट चाकी के न मूँड के उठाये जात,
कल। कीये लीये जात ऐंचत अचिंत ही।
जैसे गज केहरि न बल कीये बसि होत,
जतन के अनीयात समत समत ही।
जैसे सरिता प्रबल देखत भयान रूप,
करदम चढ़ पार उतरै तुरत ही।
तैसे दु:ख सुख बहु बिषम संसार बिखै,
गुर उपदेस जल जल जाह कत ही ॥ 558 ॥

जैसे तौ मराल माल बैठत हैं मानसर,
मुकता अमोल खाइ बिगसात है।
जैसे तौ सुजन मिलि बैठत है पाकसालि,
अनिक प्रकार बिंजनादि रस खात है।
जैसे द्रुम छाया मिलि बैठत अनेक पंछी,
खाई फल मधुर बचन कै सुहात है।
तैसे गुर सिख मिलि बैठत धरमसाल,
सहज सबद रस अम्रित अघात है ॥ 559 ॥

जैसे बनिता बचित्र आमरण सिंगार सजि,
भेटत भतार चित्त बिमल अनन्द है।
जैसे सरुवर परिफुलत कमल दल,
मधुकर मुदत मगन मकरन्द है।
जैसे चित चाहत चकोर देख धयान धरै,
अम्रित किरन अचत अचवत हित चन्द है।
तेजे गायबो सुनायबा सुसबद संगत बिखै,
मानो दान कुरखेत्र पाप मूल कंद है ॥ 5 0 ॥

जैसे किरतासु गर जात जल बूंद परी,
घ्रित सनबंध जल मधि सावधान है।
जैसे कोट भारतूल तनक चिनग जरै,
तेल मेलि दीपक मैं बाती बिदमान है।
जैसे लोहो बूड जात सलिल में डारत ही,
कासट प्रसंग गंग सागर न मान है।
तैसे जम काल बचाल सगल संसार ग्रासै,
सतिगुर भेंटत ही दासनि दासान है ॥ 561 ॥

जैसे खांड चून घृरित होत घर ही बिखै पै,
पाहुंना के आये पूरी कै खुवाई खाईयै ।
जैसे चीर हार मुकता, कनक आभरन पै,
बयाहु काज साजि तन सुजन दिखाइयै ।
जैसे हीरा मानिक अमोल होत हाट ही मैं,
गाहकै दिखाई विद्वता विसेख पाईयै ।
तैसे गुरबानी लिख पोथी बांधी राखीयत,
मिल गुर सिख पढ़ि सुनि लिव लाईयै ।। 562 ।।

जैसे नरपति बनिता अनेक बयाहृत है,
जांकै सुत जनम ह्वै तांही ग्रिह राज है ।
जैसे दधि बोहथ बहाइ देत चहुं और,
जोह पार पहुंचे पूरन सभि काज है ।
जैसे खान खनत अनंत खनवारो खोजै,
हीरा हाथि आवै जांकै तांकै बाजु बाजि है ।
तैसे गुर सिखन वतन अउ पुरातन मैं,
जा पर क्रिपा कटाछ ताके छबि छाजि है ।। 563 ।।

जैसे बीराहाधी मिसटान पान आन कहु,
खुवावत मंगोइ मांगे आप नहीं खात है ।
जैसे द्रुम सफल फलत फल खात नांहि,
पथक, पखेरू तोर तोर लै लै जात है ।
जैसे तौ समुद्र निधि पूरन सकल विधि,
हंस मरजीवा हेरि काढ़त सुगात है ।
तैसे निहकाम साधु सोभत संसार बिखै,
परउपकार हेत सुन्दर सु गात है ।। 564 ।।

जैसे दीप जोति लिव लागै चले जात,
सुखगहे कर दुचितु दुइ भटका सो भेट है ।
जैसे दधि कूल बैठ मुकता चुनत हंस,
पैरत न पावै पार लहर लपेट है ।
जैसे निरखि अगनि कै मधि भाव,
सिध होत निकट विकट दुख सहसा न भेट है ।
तैसे गुर शब्द सनेह कै परम पद मूरति,
समीप सिंध साप की अखेट है ।। 565 ।।

स्वामी काज लगि सेवा करत सेवक,
जैसे नरपति निरखि सनेह उपजावही।
जैसे पूत चोचला करत पिता विदिमान,
देखि देखि सुनि सुनि आनन्द बढ़ावही।
जैसे पाकसाला मधि बिंजन परोसे नारि पति,
खात पिआर कै परम सुख पावही।
तैसे गुर शब्द सुनत स्रोता सावधान,
गावै रीझ गाइन सहजि लिव लावही ॥ 566 ॥

जैसे सिआम घटा गगन घंमंड घोर,
मोर अरु पपीहा सुभ सबद सुनावही।
जैसे तरु बसन्त सभै मौलत अनेक,
आंब कोकला मधुर धुनि बचन सुनावही।
जैसे परफुलत कमल सरवरु बिखै,
मधुप गुंजारत अनन्द उपजावहि।
तैसे पेखि स्रोत सामधानह गाइन,
प्रगटै पूरन प्रेम सहजि समावही ॥ 567 ॥

जैसे अहि निस अंधिआरी मणि काढ़ राखै,
क्रीड़ा कै दुरावै पुन काहू न दिखावही।
जैसे बर नारि करि सिहजा संजोग भोग,
होत परभाति तन छादन छिपावही।
जैसे अलि कमल संपुट अचवत मध,
भोरु भये जाति उड़ नातो न जतावही।
तैसे गुर सिख ऊठि बैठत अम्रित जोग,
सम सुधा रस चाखि सुख त्रिपतावही ॥ 563 ॥

सिहजा संजोग प्रिय प्रेम रस खेल जैसे,
पाछे बधू जनन सै गरभ समावहीं।
पूरन अंधान भये सौंप गुरजन बिखै,
जागै परसूत समै सभन जगावही।
जनमत सुत खान पान सो संजम करै,
तोतें सुत सम्रथ ह्वै सुखह दिखावही।
तैसे गुरु भेटत भै भाइ सिखु सेवा करै,
अलप अहार निंद्रा सबद कमावही ॥ 569 ॥

जैसे अनुचर नरपति की पछानैं भाखा,
बोलत बचन खिन बूझै बिन देख ही ।
जैसे जऊहरी परख जानत है रतन की,
देखत ही कहे खरौ खोटो रुप रेख ही ।
जैसे खीर नीर को निबेरौ करि जानै हंस,
राखीग्रै मिलाइ भिन भिन कं सरेख ही ।
तैसे गुर सबद सुनत पहिचानै सिख,
ग्रान बानी क्रितमी न गनत है लेख ही ।। 570 ।।

बायस उड़स बल जाउं वेग मिलौ दीप,
मिटै दुखु रोगु सोगु बिरह बियोग कौ ।
ग्रवध बिकट कटैकपट ग्रंतरि पटु,
देखऊ दिन प्रेम रस सहज संजोग कौ ।
लाल न ग्रावत शुभ लगन सगन भले,
होइ न विलंब कछु भेदु बेद लोक कौ ।
ग्रतिहि ग्रातुर भई ग्रधिक ग्रौसेर लागी,
धीरज न धरौ खोजौ धारि भेख जोग कौ ।। 571 ।।

ग्रगनि जरत, जल बूड़त, सरप ग्रसहि,
शसत्र ग्रनेक रोम रोम करि थात है ।
बिरथा ग्रनेक ग्रपदा ग्रधीन दीन गति,
ग्रीखम ग्रौ सीत बरख माहि निस प्रात है ।
गो, द्विज, बधू, विस्वास, बंस, बधि कोटि हतया,
त्रिसना ग्रनेक दुख होत बसि गात है ।
ग्रनिक प्रकार जोरि सकल संसार सोधि,
पीय के बिछोह पल एक न पुजात है ।। 572 ।।

पूरन सरद ससि सकल संसार कहै,
मेरे जाने बर बैसंतर की ऊक है ।
ग्रगन ग्रगन तन मधय चिनगारी छाडै,
बिरह उसास मानो फनंग की फूक है ।
परसत पावक पखान फूटि टूटि जात,
पीय को सिधारे भारी जीवन मरन भये,
जनम लजायो प्रेम नेम चित चूक है ।। 573 ।।

बिन प्रिय सिहजा भवन आन रु रंग,
देखीअै सकल जमदूत भै भयान है ।
बिन प्रिय राग नाद बाद गयान आन कथा,
लागै तन तीछन दुसह उर बान है ।
बिन प्रिय असन बसन अंग अंग सुख
बिखया बिसमु अऊ बैसंतर समान है ।
बिन प्रिय मानों मीन ससिल अंतरगति,
जीवन जतन बिन प्रीतम न आन है ॥ 574 ॥

पाइ लागि लागि दूती बेनती करत हुती,
मान मती होइ काहू मुखि नलगावती ।
सजनी सकल कहि मधुर बचन नित,
सीख देति हुती प्रति उत्तर नसावती ।
आपन मनाइ प्रिया टेरत है प्रिआ प्रिआ,
सुनि सुनि मौन गहि नायका कहावती ।
बिरह बिछोह लग पूछत न बात कोऊ,
ब्रिथा न सुनत ठाढी दवारि बिललावति ॥ 575 ॥

पाही मसतक पेखि रीझत को प्रान नाथ,
हाथि आपनै बनाइ तिलकु दिखावते ।
याही मसतकि धारि हसत कमल प्रिय,
प्रेम कथा कहि कहि मानन मनावते ।
याही मसतक नाही नाही कहि भागती थी,
धाइ धाइ हेत करि उरहि लगावते ।
साई मसतक धुनि धुनि पुन रोइ उठौं,
स्वपने हू नाथ नाहि दरस दिखावते ॥ 576 ॥

जैसे तौ प्रसूत समै सत्रु करि जानै प्रिअै,
जनमत सुत पुन रचत सिंगारै जी ।
जैसे बंद साला बिखै भूपत की निंदा करै,
छूटत ही वाही स्वामि कामहि सम्हारे जी ।
जैसे हर हाइ गाइ सासना सहित नित,
कबहूं न समझै कुटवहि न डारै जी ।
तैसे दुख दोख पापी पापहि तयागायो चाहै,
संकट मिटत पुन पापहि बीचारै ॥ 577 ॥

जैसे बैल तेली को आनत कईकोस चल्यो,
नैन अघरत बाही ठौर ही ठिकानों है ।
जैसे जेवरी बटत आंधरो उचित चित,
खात जात बछरो टटोरे पछुतानो है ।
जैसे म्रिग त्रिसना लौ धावै म्रिग त्रिखावंत,
आवत न शांति भ्रम भ्रमत हिरानो है ।
तैसे स्वपनन्तरु दिसंतर बिहाय गई,
पहुंच न सकयो तहां जहां मोहि जानो है ॥ 578 ॥

सुतन के पिता अरु भ्रातन के भ्राता भये,
भामनी भतार हेत जननी के बारे है ।
बालक सै बाल बुधि, तरुन सै तरुनाई,
बिरथ मैं बिरध बिवसथा बिसथारे हैं ।
द्रिसटि कै रुप रंग सुरति कै नाद बाद,
नासका सुगंधि रस रसना उचारे हैं ।
घटि अवघटि नट वट अद्भुत गति,
पूरन सकल भूत सम ही ते नयारे है ॥ 57) ।

जैसे तिल पीड़ तेल काढ़ीअत कसटु कै,
तांते होइ दीपकु जराए उजियारो जी ।
जैसे रोम रोम करि काटीअै ऊजा को तन,
तांकी तंत बाजै राग रागनी में प्यारो जी ।
जैसे तऊ ऊटाय दरपन कीजै लोस सेती,
तांते कर गहि मुख देखत संसारो जी ।
तैसे दूख भूख सुध साधना के साध भए,
तांही ते जगत को करत निसतारो जी ॥ 580 ॥

जैसे तऊ अनादि आदि अन्त परचंत हंत,
सगल संसार को आधार भयो ताही सैं ।
जैसे तऊ कपास त्रास देत न ऊसास काढ़ै,
जगत की उट भए अंबर दिवाही सैं ।
जैसे आपा खोइ जल मिलै सभ बरन सै,
खग म्रिग मानस त्रिपति गति याही सैं ।
तैसे साधि साधि साधना कै साध भऐ,
सकल संसार को उधार अवगाही सैं ॥ 581 ॥

संग मिलि चलै निरविघन पहुंचै धरि,
बिछुरे तुरत बटवारो मारि डारि हैं।
जैसे बार दीए खेत छूवत न म्रिग नर,
छेडी भए म्रिग पंख खेतहि ऊजारि हैं।
पिंजरा मैं सुआ जैसे राम नाम लेत हेतु,
निकसति खिन तांहि ग्रसत मजार हैं।
साध संगि मिलि मन पहुंचै सहज धरि,
बिचरत पचो दूत प्रान परिहार है ॥ 582 ॥

जैसे तात मात ग्रिह जनमत सुत धने,
सकल न होत समसर गुन मथ्थ जी।
चटीआ अनेक जैसे आवैं चटसाल बिखै,
पढ़त न ऐकसे सरब हरि कथा जी।
जैसे नदी नाव मिलि बैठत अनेक पंथी,
होत न समान सभै चलत हैं पथ्थ जी।
तैसे गुरचरन सरनि हैं अनेक सिख,
सतिगुर करन कारन समरथ जी ॥ 583 ॥

जैसे जनमत कंनया दीजीऐ दहेज धनो
ताके सत आगे बयोहे बहु पुन लीजीऐ।
जैसे दाम लाईअत प्रथम बनज बिखै,
पाछै लाभ लेत मनि सकुच न कीजीऐ।
जैसे गऊ सेवा कै सहेत प्रतिपालीअत,
सकल अखाद वाको दूध दुहि पीजीऐ।
तैसे तन मन धन अरपि सरनि गुर,
दीखया दान लै अमर सद सद जीजीऐ ॥ 584 ॥

जैसे लाख कौर लिखत न कन भार लागै,
जानत सु स्रम होइ जांके गन राखीऐ।
अम्रित अम्रित कहै पाइऐ न अम्रित रस,
जोलौ जिव्हा के सुरस अम्रित न चाखीऐ।
बदी जन की असीस भूपति न होई कोऊ,
सिंघासन बैठे जौ लौ चक्रवै न भाखीऐ।
तैसे लिखै सुनै कहै पाईऐ न गुर मति,
जौ लौ गुरसबद की सु जुगति न लाखीऐ ॥ 585 ॥

जैसे तऊ चंपक बेल बिबध बिथार चारु,
बासना प्रगट होत फूल ही में जाइके।
जैसे द्रम दीरघ सवरुप देखीग्रै प्रसिध,
स्वाद रस होत फल ही में पुन ग्राइके।
जैसे गुर गयान राग नाद हिरदै बसत,
करत प्रकास तास रसना रमाइके।
तैसे घट घट बिखं पूरन ब्रह्म रुप,
जानीग्रै प्रतयछ महा पुरत्र मनाइके ॥ 586 ॥

जैसे ब्रिथावंत जंत पूछै बैद बैद प्रति,
जौ लौ न मिटत रोग तौ लौ बिललात है।
जैसे भीख मांगत भिखारी घरि घरि डोलै,
तौ लौ नहीं ग्रावै चैन जौ लौ न ग्रघात है।
जैसे बिरहनी सऊन सगन लगन सोधै,
जो लौ न भेटै तौ लौ ग्रकुलात है।
तैसे खोजी खोजै ग्रल कमल कमल गति,
जो लौ न परम पद संपुट समात है ॥ 587 ॥

पेखत पेखत जैसे रतन पारुखु होत,
सुनत सुनत जैसे पंडित प्रबीन है।
सूंघत सूंघत सौधा जसे तऊ सुबासी होत,
गावत गावत जैसे गाइन गुनीन है।
लिखत लिखत लेख जैसे तऊ लेखक होत,
चाखत चाखत जैसे भोगी रसु भीन है।
चलत चलत जैसे पहुंचे ठिकाने जाई,
खोजत खोजत गुर सबदु लिवलीन है ॥ 588 ॥

जैसे ग्रल कमल कमल बास लेत फिरै,
काहूं एक पदम कै संपट समात है।
जैसे पंछी बिरख बिरख फल खात फिरे,
बरहने बिरख बैठे रजनी बिहात है।
जैसे तौ बयापारी हाटि हाटि के देखत फिरै,
बिरले की हाटि बैठि बनज बै जात है।
तैसे ही सब्द गुर रतन खोजत खोजी,
कोटि मधे काहूं संगि रंगि लपटात है ॥ 589 ॥

जैसे दीप दीपत पतंत लोट पोट होत,
कबहूं कै ज्वारा मैं परत जरि जाइ है ।
जैसे खग दिन प्रति चोग चुगि आवै ऊड़ि,
काहू दिन फासी फसै बहुरथ न आई है ।
जैसे अल कमल प्रति खोजो नित,
कबहूं कमल दल सपुट समाइ है ।
तैसे गुरबानी अवगाहन करत चित,
कबहूं मगन ह्वै सबद उरझाइ है ॥ 590 ॥

जैसे पोसती सुनत कहत पोसत बुरो,
तांके बसि भयो छाडयो चाहै पै न छूटई ।
जैसे जूआ खेलि बित हारि बिलखै जूआरी,
तऊ पर जुआरन की संगत न टूटई ।
जैसे चोर चोरी जात हिरदै संकात पुन,
तजत न चोरी जौ लौ सीस ही न फूटई ।
तैसे सभ कहत सुनत माया दुखदाई,
काहू पैं न जीती परैं माया जग लूटई ॥ 591 ॥

तरुवरु गिरे पात बहुरो न जोरो जात,
जैसे तात मात सुत भ्रात मोह माया को ।
जैसे बुदबुदा उरा पेखत बिलाई जाइ,
ऐसो जानि त्यागहु त्यागहु भरोसो भ्रम काया को ।
त्रिण की अगनि जरि बूझति न बार लागे,
ऐसो आवा औधि जैसे नेहु द्रम छाया को ।
जनम जीवन अंतकाल को संगाती राचहु,
सफल औसर जग तब ही तौ आया को ॥ 592 ॥

कोऊ हर जोरै, बोवै, कोऊ रांकै, लुनै कोऊ,
जानीऐ न जाइ तांहि कौन खाइधो ।
कोऊ गढ़ै, चिनै कोऊ, कोऊ लीपै, पोचै कोऊ,
समझ न परै कौन बसै ग्रिह आइधो ।
कोऊ चुनै लोडै कोऊ, कोऊ कावै, बुनै कोऊ,
बूझीऐ न उदै कौन अंग से बनाइधो ।
तैसे आपा काछि काछि कामनी सगल बाछै,
कवन सुहागनि ह्वै सिहजा समाइधो ॥ 593 ॥

जोई प्रभु भावे ताहि सोवत जगावै जाई,
जागत बिहावै जाहि ताहि न बुलावई।
जोई प्रभ भावै ताहि माननि मनावै धाइ,
सेवक सवरुप सेवा करत न भावई।
जोई प्रभु भावै ताही रीझ कै रिझावै आपा,
काछि काछि आवे ताहि पग न लगावई।
जाई प्रभु भावै ताहि सबै बनि आवै, ताकी,
महिमा अपार न कहत बन आवई ॥ 594 ॥

जैसे तऊ समुद्र बिखै बोहथो बहाइ दीजै,
कीजै न भरोसो जौ लौ पहुंचे न पार कऊ।
जैसे तऊ क्रिमान खेत हतु करि जोतै बोवै,
मानत कुसल आनि पैठे ग्रिह द्वार कऊ।
जैसे पिर संगम कै होत गर हारि नारि,
करत है प्रीत पेखि सुत के लिलार कऊ।
तैसे उमतति निंदा करीऐ न काहू केरी,
जानीऐ धौ कैसो दिन आवे अन्तकार कऊ ॥ 595 ॥

जैसे चूनों खांड स्वेत एक से दिखाइ देत,
पाइये तौ स्वाद रस रसना कै चाखीऐ।
जैसी पीत बरन ही हेम अरु पीतरि है,
जानीऐ महत पारखद अग्र राखीऐ।
जैसे कऊआ कोकिला है दोनो खग स्याम तन,
बूझीऐ असुभ सुभ सबद सु भाखीऐ।
तैसे ही साध चिहन कै समान होत,
करनी करतूत लाग लछन कै लाखीऐ ॥ 596 ॥

जैसे करपूर लोन एक से दिखाई देत,
केसर कुसंभ समसर अरुनाई कै।
रुपो कांसी दोनो जैसे ऊजल बरन होत,
काजर औ चोआ है समान स्यामताई के।
इन्दराइन फल अम्रित फल पीत सम,
हीरा अऊ फटक सम रुप है दिखाई के।
तैसे खल दिस्टि मैं असाध साध सम देह,
बूझत बिबेकी जल जगति समाइ के ॥ 597 ॥

कालर में बोए बीज ऊपजै न धान पान,
खेत में डारे सु तांते अधिक अनाज है ।
कालर सै करत सबार जम सा ऊसु तौ,
पावक प्रसंग तप तेज अपराज है ।
जसत संपुकत ह्वै मिलत है सीत जल,
अचवत साति सुख त्रिखा भ्रम भाज है ।
तैसे आतमा अचेत संगत सुभाव हेत,
सकित सकित गति सिव सिव साज है ।। 598 ।।

केहरि अहार मास, सुरही अधार घास,
मधुप कमल बास, लेत सुख भान ही ।
मीनहि निवास नीर, बालक अधार खीर,
सरपद सखा समीर, जीवन कै जान ही ।
चन्दहि चाहै सकोर घनहर घटा मोर,
चात्रिक बूंदन स्वांति धरत धिआन ही,
पंडित बेद बीचारि, लोकन में लोकाचार,
माया मोह में संसार, गयानि गुर गयान ही ।। 599 ।।

जैसे पीत स्वेत स्याम अरुन बरन रुप,
अग्र भाग राखै आंधरो न कछू देख है ।
जैसे राग रागनी और नाद बाद आन गुन,
गावत बजावत न बहरो परख है ।
जैसे रस भोग बहु बिंजन परोसे आगै,
बिथावंत जंतु नाहि रुचित बिसेख है ।
तैसे गुर दरस, बचन प्रेम नेम निधि,
महिमा न जानी मोहि अधम अभेख है ।। 600 ।।

कवन भगति करि भगत बछल भए,
पतित पावन भए कऊन पतिताई के ।
दीन दुख भंजन भए सु कऊन दीनता कै,
गरब प्रहारी भए कवन बड़ाई के ।
कवन सेवा के नाथ सेवक सहाई भए,
असुर संघारन है कऊन असुराई के ।
भगति जुगति अघ दीनता गरब सेवा,
जानऊ न बिरद मिलै कवन कमाई के ।। 601 ।।

कऊन गुन गाइकै रीझाईग्रै गुन निधान,
कवन मोहन जग मोहन विमोहिग्रै ।
कऊन सुख देके सुख सागर सरन गहौं,
भूखन कवन चिन्तामणि मन मोहीग्रै ।
कोटि ब्रह्माण्ड के नायक की नायका है ।
कै से ग्र ंतरजामी कऊन ग्रकित के बोहीग्रै ।
तनु मनु धनु है सरबसु विस्व जांके बसु,
कैसे बसि ग्रावै जांकी सोभा लगि सोहीग्रै ।। 602 ।।
जैसे जल मिली द्रम सफल नाना प्रकार,
चन्दन मिलत सब चन्दन सुबास है ।
जैसे मिल पावक दुरत पुन सोई धात,
पारस परसि रुप कंचन प्रकाश है ।
ग्रवर नखत बरखत जल जल मई,
स्वाति बूंदन सिन्ध मिलि मुकता बिगास है ।
तैसे परविरति ग्रौ निवरित जो स्वभाव दोऊ,
गुर मिलि संसारी, निरंकारी ग्रभिग्रासु है ।। 603 ।।
जैसे बिबिध प्रकार करत सिंगार नारि,
भेटत भतार उर हार न सुहात है ।
बालक ग्रचेत जैसे करत ग्रनेक लीला,
सूरत समार बाल बुधि बिसरात है ।
जैसे प्रिया संगभ सुजस नामका बखानै,
सुनि सुनि सजनी सकल बिगसात है ।
तैसे खट करम धरम स्रम ग्यान काज,
ग्यान भानु उदै उड़ि करम उड़ात है ।। 604 ।।
जैसे प्रिय संगम सुजस नायका बखानै
सुनि सुनि सजनी सगल बिगसात है ।
जैसे सिमर सिमर प्रिग्रा प्रेम रस बिसम होइ,
सोभा देत मोन गहे मन मुस्कात है ।
पूरन ग्रधान परसूत समै रोदत है,
गुरजन मुदत हवै ताही लपटात है ।
जैसे मानवती मान त्यागि के ग्रमान होइ,
प्रेम रस पाइ चुप हुलसत गात हे ।
तैसे गुरमुख प्रेम भक्ति प्रकास जास,
बलत, बैराग मौन गहै बहु सुहात है । 605 ।।

जैसे अन्धकार बिखै दिपत दीपक देख,
अनिक पतंग उतपोत हुइ गुंज़ार ही।
जैसे मिसटान पान जान कान भोजन मैं,
राखत ही चीटी लोभ लुभत अपार ही।
जैसे म्रिदु सौरभ कमल उरधाइ जाइ,
मधुप समूह सुभ सबद ऊचार ही।
तैसे ही निधान गुर ग्यान परवान जामै,
सगल संसार ता चरन नमस्कार ही ।। 606 ।।

रुप कै जो रीझै रुपवंत ही रिझाइ लेहि,
बल कै जु मिलै बलवंत गहि राखई।
दरब कै जो पाईऐ दरबेस्वर लेजाहि ताहि,
कबित के जो पाईऐ कबीस्वर अभिलाख ही।
जोग के जो पाईऐ जोगी जटा मैं दुराइ राखे,
भोग के जो पाईऐ भोगी भोग रस चाख ही।
निग्रह जतन पान परत न प्रान मान,
प्रान पति एक गुर सबद सु भाख ही ।। 607 ।।

जैस फल ते बिरख, बिरख ते होत फल,
अदुभुत गति कछु कहत न आवै जी।
जैसे बास बावन में बावन है बास बिखै,
बिसम चरित्र कोऊ मरम न पावै जी।
कासट में अगनि अरु अगनि में कासट जैसे,
अति असचरज मय कौतक कहावै जी।
सतिगुर महि सबद महि सतगुर है,
निगुन सगुन गयान ध्यान समझावै जी ।। 608 ।।

जैसे तिल बास बास लीजिअत कुसम ते,
तांते होत है फुलेल जतन कै जानीऐ।
जैसे तऊ अऊ टाइ दूध जामन जमाइ मथि,
संजम सहत घ्रित प्रगटाइ मानीऐ।
जैसे कूआ खोद करि बसुधा धसाइ कोठी,
लाजकउ बहोइ डोल काढ़ि जल आनीऐ।
गुर उपदेस तैसे भावनी भक्त भाइ,
घटि घटि पूरन ब्रह्म पहिचानीऐ ।। 609 ।।

जैसे धरि धनुख चलाईअत बान तनि,
चल्यो जाइ तितही कऊ जितही चलाईग्रै ।
जैसे अस्व चाबुक लगाए तन तेज करि,
दौर्यो जाइ आतुर हुइ जित ही दऊ राईग्रै ।
जैसो दासी नाइका कै अग्रभाग ठाढी रहै,
धावै तित तितहि कऊ जितहि पठाइग्रै ।
तैसे प्रानी फिरत संजोग लगि भ्रमै भूम,
जत जत खान पान तहि जाइ खाईग्रै ॥ 610 ॥

जैसे खर बोल सुनि सगुनीग्रा मान लेत,
गुन अवगुन ताको कछु न बिचार ही ।
जैसे म्रिगनाद सुनि सनमुख सहै बान,
प्रान देति बधि कहि बिरदु न समारही ।
सुनत जुझाऊ जैसे जूझे जोधा जुध समै,
ठाड़ी को बरन बिहन कछु न ऊरधार ही ।
तैसे गुर सब सुनाइ गाह सिख ठगे,
भेख धारी जानि मोहि मारि न बिडारही ॥ 611 ॥

रिधि सिधि, निधि सुधा पारस, कलत तरु,
कामधेनु चिन्ता मनि, लछमी, स्वमेय की ।
चतुर पदारथ सुभावासील, रुप गुण,
मुक्त जुकत मत अलख अभेव की ।
ज्वाला जोति, जै जैकार, कीरति, प्रताप छबि,
तेज तप कांति, बिभै सोभा साध सेव की ।
अनद सहज, सुख सकल प्रकाश कोटि,
किंचत कटाछ क्रिया जोहि गुरदेव की ॥ 612 ॥

गुरु उपदेस प्रात समै इसनान करि,
जिह्वा जपत गुरमंत्र जैसो जानहि ।
तिलक लिलार पाह परत परसपर,
मधर सुनाइ गाह सुनि उनमान ही ।
गुरमति भजन तजन दुरमति कहै,
ग्यान, ध्यान गुरसिख पंथ परवान ही ।
देखत सुनत अऊ कहत सब कोऊ भले,
रहत अंतरि गति सतिगुर मानही ॥ 613 ॥

जैसे धोबी साबन लगाई पीटै पाथर से,
निरमल करत है बसन मलीन कऊ ।
जैसे तऊ सुनार बारंबार गार गार ढार,
करत असुध सुध कंचन कुलीन कऊ ।
जैसे तऊ पवन झकझोरत बिरख मिल,
मलय गंध करत है चन्दन प्रबीन कऊ ।
तैसे गुर सिखन दिखाइकै ब्रिथा बिबेक,
माया मल काटि करै निज पद चीन कऊ ।। 614 ।।

पातर में जैसे बहु बिंजन परोसीअत,
भोजन कै डारीअत पावै नाहि ठाग को ।
जैसे ही तमोल रस रसना रसाइ खाइ,
डारीऐ अगार नाहि रहै आढ़ दाम को ।
फूलन को हार उर धार बास लीजै जैसे ।
पाछै डार दीजै कहै है न काहू काम को ।
जैसे केस पख थान भ्रिसट न सुहात काहू,
प्रिय बिछुरत सोई सूत भयो बाम को ।। 615 ।।

जैसे अस्वनी सुत छाडि अंधकारि मधि,
जाति पुन आवत है सुरति सनेह कै ।
जैसे निंद्रावंत सुपनन्तर दिसन्तर मै,
बोलत घटंतर चैतन्न गति गेह कै ।
जैसे तऊ परेवा त्रिया त्याग हुइ अकास चारी,
देखि परकर गिरै तन बूंद मेंह कै ।
तैसे मन बच क्रम भगत जगत बिखै,
देखकै सनेही हेत बिसम बिदेह कै ।। 616 ।।

जैसे जोधा जुध समै ससत्र सनाहि साजि,
लोभ मोह त्यागि बीर खेत बिखै जात है ।
सुनत जुझाऊ घोर मोर गति बिगसात,
पेखत सुभट घटा अंग न समात है ।
करत संग्राम स्वामि काम लागि जूझ मरै,
कै तऊ रनजीत बीती कहत जुगात है ।
तैसे ही भगत मत भेटत जगत पति,
मोनि औ सबद गदगद मुसकात है ।। 617 ।।

जैसे तउ नरिंद चढ़ि बैठत प्रयंक परि,
चारो खुट मे दरबु देत ग्रानि ग्रानि के ।
काहू कऊ रिसाइ ग्रानया करतु जऊ मारबे की,
तातकाल मारि डारीग्रत प्रान हानि के ।
काहू कऊ प्रसन्न हवै दिखावत है लाख कोटि,
तुरत भंडारीगन देति ग्रान मानि के ॥
तैसे देत लेत हुते नेत के ब्रह्म ग्यानी,
लेप न लिपत है ब्रह्म ग्यान स्थान को ॥ 618 ॥

ग्रन भै भवन प्रेम भगति मुकति द्वार,
चारो बसि चारो कुंट रात राजान हैं ।
जाग्रत स्वप्न दिन रैन उठि बैठि चलि,
सिमर स्रवन सक्ति परवान है ।
जोई जोई ग्रावै सोई भावे पावै नामु निध,
भगति बछल मानो बाजत नीसान है ।
जीवन मुकति साम राज सुख भोगवत,
ग्रदुभुत छबि ग्रति ही बिराजमान है ॥ 619 ॥

लोचन बिलोकि रुप रंग ग्रंग ग्रंग छबि,
सहज बिनोद मोद कऊतक दिखावहि ।
सुवन सुजस रस रसिक रसाल गुन,
सुन सुन सुरति संदेस पहुचावही ।
रसना सबदु राग नाद स्वाद बिनती कै,
नासका सुगंधि सनबंध समझावहि ।
सरिता ग्रनेक मानो संगम समुन्द्र गति,
रिदै प्रिय प्रेम नेमु त्रिपति न पावही ॥ 620 ॥

लोचन क्रिपन ग्रवकोलत ग्रनूप रुप,
परम निधान जानि त्रिपत न ग्राई है ।
स्रवन दारिद्री सुनि ग्रम्रित बचन प्रिय,
ग्रचवति सुरत पिग्रास न मिटाइ है ।
रसना रटत गुन गुरु ग्रग्रनीव गूढ़ं,
चात्रिक जुगति गति मति न ग्रघाई है ।
पेखत सुमत सिमटत बिसमाद रसि,
रसिक प्रगास प्रेम त्रिसना बढ़ाई है ॥ 621 ॥

द्रिगन में देखत हो द्रिग हू जो देखयो चाहै,
परम अनूप रुप सुन्दर दिखाइऐ ।
स्रवन में सुनत जु सुवन हूं सुनयो चाहै,
अनहद सब्द प्रसन्न हुइ सुनाईऐ ।
रसना भे रटत जु रसना हू रसि चाहै,
प्रेम रसु अम्रित चुआइकै चखाईऐ ।
मन माहि बसहु मलि भया कीजै महाराज,
धावत बरजि उनमानि लिव लाईऐ ॥ 622 ॥

नरिद्रा मैं कहा धऊ जाइ, खुध्या में कहा धऊ खाई,
त्रिखा में कहा जराह कहा जलपोन है ।
हसन रोवन कहा, कहा पुन चिंता चाऊ,
कहां भय भाऊ भीर कहा धऊ भयान है ।
हिचकी, उकार औ खधार जमहाइ छीक,
अपसर गात खुजलात कहा आन है ।
काम क्रोध लोभ मोह अहंमेव टेव कहा,
सत औ संतोख दया धरम न जान है ॥ 623 ॥

पंच तत मेल पिंडु लोक वेद कहै पांचो,
तत कहै काहे भांति रचत भे आदि ही ।
काई से धरन धारी धीरज कैसे बिथारी,
काहे सयो गढ़यो अकाश ठाढ़ो बिन पाद ही ।
काईसों सलल साजे, सीतल पवन बाजे,
अगनि तपत काहे अति बिसमाद ही ।
कारन करन देव अलख अभेव नाथ,
उनकी भी उही जाने बकनो है बाद जी ॥ 624 ॥

जैसे जल सिंचि सिंचि कासट समथ कीने,
जल सनबंध पुन बोहिथ बिस्वास है ।
पवन प्रसंग सोइ कासट स्री खण्ड होत,
मलया गिर बासना सुमउ परगास है ।
पावक परस भसमी करत देह गेहु,
मित्र सत्रु सगल संसार ही बिनास है ।
तैसे आतमा त्रिबिध त्रिबिध सकल सिव,
साध संग भेटत ही साध को अभ्यास है ॥ 625 ॥

कवन अंजन करि लोचन बिलोकीअत,
कवन कुंडल करि स्रवन सुनीजी अै ।
कवन तमोल करि रसना सुजसु रसै,
कऊन करि कंकन नमस्कार कीजीअै ।
कवन कसुम हार करि उर धारीअत,
कौन अंगीआ सु कर अंकमाल दीजीअै ।
कऊन हीर चीर लपटाइकै लपेट लीजै,
कवन संजोग प्रिया प्रेम रसु पीजीअै ।। 626 ।।

गवरि महेस अऊ गनेस से सहसरसु,
पूजा कर बेनती बखानयो हित चीत ह्वै ।
पंडित जोतिक सोधि सगुन लगन ग्रह,
सुभ दिन साहा लिख देहु बेद नीत ह्वै ।
सगल कुटंब सखी मगल गावहु मिलि,
चाढ़हु तिलक तेल माथे रस रीति ह्वै ।
बेदी रचि गांठ जोर दीजीअै असीस मोहि,
सिहजा संजोग मैं प्रतीति प्रीत रीति ह्वै ।। 627 ।।

सीस गुर चरन करण उपदेस दीखया,
लोचन दरस अवलेक सुख पाईअै ।
रसना सबद गुर, हसत सेवा डंडोत,
रिदै गुर ग्यान ऊनमन लिवलाईअै ।
चरन गवन साधं संगति परक्रमा लऊ,
दासन दासान मति निम्रता समाईअै ।
संत रेन मंजन, भगति भाऊ भोजन दे,
स्री गुर कृपा कै प्रेम पैज प्रगटाईअै ।। 628 ।।

जैसे मेघ बरखा स्रबत्र बरखै समान,
ऊचो तज नीचै बल गवन कै जात है ।
तीरथ परब जैसे जात है जगत चल,
जात्रा हेत देत दान अति बिगसात है ।
जैसे निृप सोभत है बैठिउ सिंघासन पै,
चहूं ओर ते दरब आवै दिन रात है ।
तैसे निहाम धाम साध है संसार बिखै,
असन बसन चल आवत जुगात है ।। 629 ।।

जैसे बान धनख सहित हवै निज बस,
छुटति न ग्रावै फुन जतन सै हाथ जी ।
जैसे बाघु बंदसाला बिखै बांधयो रहै पुन,
खुलै तऊ न ग्रावै बस बसहि न साथ जी ।
जैसे दीप दिपत न जानीग्रै भवन बिखै,
दावानल भये न दुराए दुरै नाथ जी ।
तैसे मुख मधि बानी बसत न कोऊ लखै,
बोलीग्रै बिचार, गुरमति गुन गाथ जी ॥ 6:0 ॥

जैसे माला मेरु पोईग्रत सभ ऊपर कै ।
सिमरन संख्या मैं न ग्रावत बड़ाई के ।
जैसे बिरखन बिखे पेखीग्रै सबल ऊचो,
निहफल भयो सोऊ ग्रति ग्रधिकाई के ।
जैसे चील पंछन मैं उडत ग्रकाश चारी,
हेरै ग्रित पिंजरन ऊचे मतु पाई के ।
गाइबो पजाइबो सुनाइबो न कछू तैस,
गुर उपदेस बिना ध्रिग चतुराइ कै ॥ 631 ॥

जैसे पांचो तत बिखै बसुधा नवन मन,
ता मै उतपत हुइ समात सभ ताही में ।
जैसे पांचो ग्रांगुरी मैं सूखम कनुग्रीग्रा है,
कंचन खचत नग सभत है वाही में ।
जैसे नीच जोनि गनीग्रत ग्रति माखी क्रिम,
हीर चीर मधु ऊपजत सुख जाही में ।
तैसे रविदास नाभा बिदर कबीर भए,
हीन जाति ऊच पद पाए सभ काही में ॥ 632 ॥

जैसे रोग रोगी को दिखाइग्रै न बैद प्रति,
बिन उपचार छिन छिन हुइ ग्रसाध जी ।
जैसे रिन दिन दिन उदम ग्रदिग्राउ बिन,
मूल ग्रै बिग्राज बढ़े, उपजै बिग्राध जी ।
जैसे सत सासना संग्राम करि साधे बिन,
पलपल प्रबल हुइ करत उपाध जी ।
जयों जैयों भीजै कामरी त्यों त्यों भारी होत जात,
बिन सतगुर उर बसै ग्रपराध जी ॥ 633 ॥

जैसे केला बसत बबूर कै निकट, ताहि,
भालत है सूरैं आपा सके न बचाई जी ।
जैसे पिंजरी मैं सुआ पदत गाथा अनेक,
दिन हेरति बिलाई अति खाह जी ।
जैसे जल अंतर मुदत मन होत मीन,
मास लपटाइ लेत बनछी लगाइ जी ।
बिन सतगुर साधं मिलत असाध संगि,
अंग अंग दुरमति गति प्रगटाइ जी ।। 634 ।।

कोटि परकार नार साजै जऊ सिगार चारु,
बिन भरतार भेटे सुत न खिलाइ है ।
सिंचीऐ सलिल निस बासुर, बिरख मूल,
फल न बसंत बिन तासु प्रगटाइ है ।
साव समै किसान खेत जोत बीज बोवै,
बरखा बिअुन कत नाज निपजाइ है ।
अनिक प्रकारि भेख धारि प्रानी भ्रमे भूम,
बिन गुर उर ग्यान दीप न जगाइ है ।। 635 ।।

जैसे नीर खीर ऊंन भोजन खुवाइ अति,
गरो काटि मारत है ऊजा स्वन कऊ ।
जैसे बहु भार डारीअत लघु नौका माहि,
बूडत है मझधार पार न अवन कऊ ।
जैसे बुर नारि धारि भए सिंगार तनि,
आप आमै अरपत चिंता कै भवन कऊ ।
तैसे ही अधरम करम कै अधरम नर,
भरत अकाल जमलोकहि खन कऊ ।। 636 ।।

जैसे पाकसाला बाला बिंजन अनेक रचै,
छूअत अपावन छिनक छोत लागि है ।
जैसे तन साजत सिंगार नारि आनंद कै,
पुहुपवंती हवै प्रिया सिहजा तिआगि है ।
जैसे ग्रभधार नारि जतन करत नित,
मल मैं गरभ छेद खेद निहभाग है ।
तैसे सील संजम जनम परत कीजै,
तनक ही पाप कीए तूल में बजाग है ।। 637 ।।

चीकने कलस पर जैसे न टिकत बूंद,
कालर में परे नाज निपजै न खेत जी।
जैसे धरि पर तरु सेंबल अफल तरु,
बिखिआ बिरख फले जगु दुख देत जी।
चंदन सुबास बांस बास बास बासीऐ ना,
पवन गवन मल मूतता समेत जी।
गुर उपदेस परकेस न मो रिदै भिदै,
जैसे मानो स्वाति बूंद अहि मुख लेत जी॥ 638 ॥

चंदन समीप बसि बांस महिमा न जानि,
आन द्रुम दूर भए बासना कै बोहै है।
दादर सरोवर मैं जाने न कमल गति,
मकरंद करि मधुकर ही बिमोहे है।
सुरसरि बिखै बग जानयों न मरम कछू,
आवत है जात्री जंत्र जात्रा हेत सोई है।
निकट बसत मम गुर उपदेस हीन,
दूर ही दिसंतर उर अंतर लै पोहै है॥ 639 ॥

नाहिन अनूप रुप चितवै किउ चिंतामणि,
लौने है न लोइन जो लालन बिलोकीऐ।
रसना रसीली नाहि बेनती बखानऊ कैसे,
सुरति न स्रवनन बचन मधोकीऐ।
अंग अंगहीन दीन कैसे बर माल करऊन,
मसतक माही भाग प्रिय पग धोकीऐ।
सेवक स्वभाव नाहि, पहुच न सकऊ सेव,
नाहिन प्रतीत प्रभ प्रभता समोकीऐ॥ 640 ॥

बस्वा के सिंगार बिभचार को न पारावार,
बिन भरतार नारि काकी कै बुलाईऐ।
बग सेत गात जीव घात करि खात केते,
मौन गहे, ध्यान धरे, जुगति न पाईऐ।
भांड की भंडाई बुरवाई न कहित आवै।
अति ही ढिठाई, सकुचत न लजाईऐ।
तैसे पर तन धन दूखना त्रिदोख मम,
पतित अनेक ऐक रोम न पुजाइऐ॥ 641 ॥

जाकै नाइका अनेक एक से अधिक एक,
पूरन सुहाग भाग सऊते सम धाम है ।
मानन हुइ मान भंग बिधुर बिदेस रही,
बिरह बियोग लंग बिरहनी भाम है ।
शिबल समान त्रीया सके न रिझाइ प्रिय,
दयो है दुहाग वे दुहागन सकाम है ।
लोचन स्रवन जीह कर अंग अंग हीन,
परसिउ न पेख्यों सुनय मेरो कहा नाम है ॥ 642 ॥

जैसे जार चोर उर हेरति न आहि कोऊ,
चोर जार जानत सकल भूत हेर ही ।
जैसे दिन समै आवा गवन भवन बिखै,
ताही ग्रिह पैसत संकात है अंधेर ही ।
जैसे परमात्मा कऊ देखीऐं धरमराइ,
पापी कउ भइआन जम त्राह त्राह टेर ही ।
तैसो निवर सतिगुर दरपन रुप,
तैसो ही दिखावै मुख जैसे जैसे फेर ही ॥ 643 ॥

जैसे दरपन सूधो सुध मुख देखीअत,
उलट के देखै मुख देखीऐ भइआन से ।
मधुर बचन ताही रसना सै प्यारो लागै,
कौरक सबद सुन लागै उर बान सो ।
जैसे दानो खात गात पुष्ट मिष्ट स्वाद मुख,
पोसत कै पीए दुख बयापत समान से ।
तैसे म्रित निंदज स्वभाव चकई चकोर,
सतिगुर समत सहनशील भानु सो ॥ 644 ॥

जैसे तऊ पपीहा प्रिय प्रिय टेर हैरै बूंद,
वैसे पतिब्रता पतिब्रता प्रतिपाल है ।
जैसे दीप दिपत पतंग पेखि ज्वारा जरै,
तैसे प्रिया प्रेम नेम प्रेमनी सम्हार है ।
जल सै निकसि जैसे मीन मरि जात तात,
बिरह बियोग बिरहनि बपुहार है ।
बिरहनी प्रेम नेम पतिब्रता कै कहावै,
करनी कै ऐसी कोटि मध कोऊ नार है ॥ 645 ॥

ग्रनिक ग्रनूप रुप रुप समसार नाहि,
ग्रम्रित कोटानि कोटि मधुर बचन सर ।
धरम ग्ररथ कोटि कामनी कटाछ पर,
वार डारऊ बिबिध मुकति मंदहासु पर ।
स्वरग ग्रनेक कोट किंचत समागम कै ।
संगम समूह सुख सागर न तुल धरि,
प्रेम रस के प्रताप सरि कछु पूजे नाहि,
तन मन धन सबरस बलिहार करि ।। 646 ।।

ग्रछल ग्रछेद प्रभु जाकै बसि बिस्व बल,
तै जु रस बसि कीए कवन प्रकार कै ।
सिव सनकादि ब्रहमादिक न ध्यान पावै,
तोरा ध्यान धारै ग्राली कवन सिंगार कै ।
निगम ग्रसंख सेख जपत है जाको जसु,
तेरो जस गावत कवन उपकार कै ।
सुन नर नाथ जाहि खोजत न खोज पावै,
खोजत फिरत तोहि कावन पिग्रान कै ।। 647 ।।

कैसे के ग्रगह गहिउ कैसे के ग्रछल छलिउ,
कैसे कै ग्रभेद भेद्यो, ग्रलख लखायो है ।
कैसे के ग्रपेख पेख्यो, कैसे के ग्रगद गह्यो,
कैसे के ग्रप्यो पीउ, ग्रजर जरायो है ।
कैसे कै ग्रजाय जपथो, कैसे के ग्रथाप थप्यो,
परसिउ ग्रपरस, ग्रगम सुगमायो है ।
ग्रदभुत गति ग्रसचरज बिसम ग्रति,
कैसे कै ग्रपारु निराधार ठहिराइउ है ।। 648 ।।

कहिधो कहाकू रमा रम पूरब जनम बिखै,
ग्रैसी कौन तपसिग्रा कठन तोहि कीनी है ।
जाते गुन रुप ग्रौ करम कै सकल कला,
स्रेसट हवै सरब नाइका की छबि छीनी है ।
जगत की जीवन जगतपति चिन्तामणि,
मुख मुसकाइ चितवत हिर लीनी है ।
कोटि ब्रहमाण्ड के नायक की नायका भई,
सकल भवन की स्रिया तुमहि दीनी है ।। 649 ।।

रुप कोटि रुप पर, सोभा पर सोभा,
चतुराई कोटि चतुराई पर वारीअँ ।
गयान गुन कोट गुन ग्यान पर वार डारै,
कोटि भाग भाग दर धरि बलिहारीअँ ।
सील सुभ लाछ्न कटान सील लछ्न के,
लजा कोट लजा के लजाइमान मारीअँ ।
प्रेमन पतिब्रता हूं प्रेम अउ पतिब्रत के,
जाकऊ नाथ किंचत कटाछ के निहारीअँ । 650 ॥

कोटन कोटानि सुख पुजै न समानि सुख,
आनंद कोटानि तुल आनंद न आवही ।
सहजि कोटान कोटि पुजै न सहज सर,
मंगल कोटानि सम मगल न पावही ।
कोटन कोटान परताप न प्रतापसर,
कोटन कोटान छबि छबि न पुजावहि ।
अरथ धरम काम मोख न कोटान सम,
अऊसर अभीच नाह सिहजा बलावही ॥ 651 ॥

सफल जनम धन आज को दिवस रैनि,
पहर महूरत धरी औ पल पाए हैं ।
सफल सिंगार चारु सिहजा संजोग भोग,
आंगन मंदर अति सुन्दर सुहाए हैं ।
जगमग जोति सोभा कीरति प्रताप छबि,
आनंद सहजि सुख सागर बढ़ाए हैं ।
अरथ धरम काम मोख निहकाम नामु,
प्रेम रस रसिक ह्वै लाल मेरे आए हैं ॥ 651 ॥

निस न घटै, न लटै ससीअर दीप जोति,
कुसम बास हूं न मिटै, औ सु टेव सेव की ।
सहज कथा न घटै, स्रवन सुरत मत,
रसना परस रस रसिक समेव की ।
निंद्रा न परै अंर करै न अरस प्रवेस,
रिदै, बरीआ संजोग, अलख अभेव की ।
चाऊ चितु चउगुनों बढ़ै प्रबल प्रेम नेम,
दया दम गुनी उपजै दयाल देव की ॥ 653 ॥

निमख निमख निस निस परमान होइ,
पल पल मास परयंत हवै बिथारी है।
बरख बरख परयंत छटिका बिहाइ,
जुग जुग सम जाम जामनी पिश्रारी है।
कला कला कोटि गुन जगमग जोति ससि,
प्रेम रस प्रबल प्रताप अधिकारी है।
मन बच क्रम प्रिया सेवा सनमुख रहों,
अरसु न आनै निंद्रा आज मेरी बारी है ॥ 654 ॥

जैसी ग्रै सरद निस तैसे ई पूरन ससि,
वैसे ई कुसम दल सिहजा सुवारी है।
जैसी ग्रै जोबन बैस, तैसे ई अनूप रुप,
वैसे ई सिंगार चारु गुन अधिकारी है।
जैसे ई छबीले नैन तैसे ई रसीले बैन,
सोभत परसपर महिमा अपारी हे।
जैसे ई प्रबीन प्रिय प्यारे प्रेम रसिक है,
वैसे ई बचित्र अति प्रेमनी पिश्रारी है ॥ 655 ॥

जा दिन जगत मन टहिल कही रिसाइ,
ग्यान ध्यान कोट जोग जग न समान है।
जा दिन भई पनिहारी जगन नाथ जाकी,
ता सम न छत्रधारी कोटन कोटान है।
जा दिन पिसनहारी भई जगजीवन की,
अरथ धरम काम मोख दसन दासान है।
छिरकारी पनिहारी पीसनकारी को जो सुख,
प्रेमनी पिश्रारी को अकथ उनमान है ॥ 656 ॥

घरि घरि टेर घरिश्रार सुनाइ संदेसो,
पहिर पहिर पुन पुन समझाइ है।
जैसे जैसै जल भरि भरि बेली बूडत है।
पूरन हुइ पापन की नावहिं हराइ है।
चहुं उर सेर कै पाहरूआ पुकार हारै,
चार जाम सोवते अचेत न लजाइ है।
तमचूर सबद सुनत ही उधार आंखे,
बिन प्रिय प्रेम रस पाछै पछुताइ है ॥ 657 ॥

मजन के चीर चार अंजन तमोल रस,
अभरन सिंगार साज सिहजा बिछाई है।
कुसम सुगंधि अरु मंदर सुन्दर मांझ,
दीपक दिपत जगमग जोति छाइ है।
सोधत सोधत सऊन लगन मनाइ मन,
बांछत बिधान चिरकार बारी आई है।
अऊसर अभीव नीच नरिंद्रा मैं सोवत खोए,
नैन उघरत अंत पाछै पछुताइ है ॥ 658 ॥

कर अंजुल जल जोबन प्रवेसु आली,
मान तजि प्रानपति रति मानीऐ।
गंध्रव नगर गति रजनी बिहात जात,
अऊसर अभीच अति दुलभ कै जानीऐ।
सिहजा कुसम कमुलता मुरझात, पुन,
पुन पछुतात समे आवत न आनीऐ।
सोइ बर नारि प्रिय प्यार अधिकारी प्यारी,
समझ सिआनी तौ सो बेनती बखानीऐ ॥ 659 ॥

मानन न कीजै मान, बदौ न तेरो सिआन,
मेरो कह्यो मान जान औसुर अभीच कौ।
प्रिया की अनेक प्यारी चिरंकाल आई बारी,
लेहु न सुहाग, संग छाडि हठ नीच को।
रजनी बिहात जात, जोबन सिंगार गात,
खेलहु न प्रेम रस मोह सुख बीच को।
अबकै न भेटै नाथ बहुरियों न आवे हाथ,
बिरहा बिहावै बलि बडो भाई मीच कौ ॥ 660 ॥

जउ लउ दीप जोत होति नाहिन मलीन आली,
जउ लउ नाहि सिहजा कुसम कुमलात हैं।
जउ लउ न कमलन प्रफुलत उडत अल,
बिरख बिहंगम न जऊ लउ चुहचुहात है।
जउ लउ भासकर को प्रकास न अकास बिखै,
समचुर सख नाद सबदि न प्रात है।
तउ लउ काम केल कामना सकूल पूरन कै,
होइ निहकाम प्रिय प्रेम नेम घात है ॥ 661 ॥

जोई मिलै आपा खोइ तउ नायका होइ,
मान कीए मानमती पाईऐ न मान जी।
जैसे घनहर बरसे सरबतर सम,
ऊचे न चढ़त जल बसत नीचान जी।
चंदन समीप जैसे बूड़यो बड़ाई बांस,
आसपास बिरख सुबास परवान जी।
क्रिपासिंध प्रिय तीय होइ मरजीवां गति,
पावत परम गति सरब निधान जी ॥ 662 ॥

सिहजा समै अग्यान मान कै रसाए नाहि,
तनक ही मैं रिसाइ मउत के सिधारे हैं।
पाछे पछुताइ हाइ होइ करि कर मीज,
मूंड धुनि धुनि कोटि जनम धिकारे हैं।
औसुर न पावैं बिललावैं दीन दुखत ह्वै,
बिरह बियोग सोग आतम संघारे हैं।
परउपकार कीजै लालन मनाइ दीजै,
ती पर अनंत सरबंस बलिहारे हैं ॥ 663 ॥

प्रेम रसु अउसुर अग्यान मैं न आग्या मानी,
मान कै मानन अपनो ई मान खोयो है।
तांते रिस मान प्राननाथ हूं जु मानी भये,
मानत न मेरे मान आनि दुख रोहउ है।
लोक बेद ग्यान दुत भुगत प्रधान तांते,
लुनत सहज गुनो जैसो बीज बोय है।
दासन दासान गति बेनती कै पाइ लागऊ,
है कोऊ मनाइ दै सगल जग जोयो है ॥ 664 ॥

फरकत लोचन अधर भुजा, तापै तन,
मन मैं अउसरे कब लाल ग्रिह आवही।
नैनन से नैन अर बैनन से बैन मिले,
रैन समै चैन को सिहजासन बुलावही।
कर गहि कर उर उर सै लगाइ पुन,
अंक अंक माल करि सजि समावहि।
प्रेम रस अम्रित पीआइ त्रिपताइ आली,
दया के दयाल देव कामना पुजावही ॥ 665 ॥

लोचन अनूप रुप देखि मुरछात भए,
सोइ सुख बहिरिउ बिलोकि ध्यान धारि है ।
अम्रित बचन सुनि स्रवन बिमोहे आली,
ताही मुख बैंन सुनि सुरति समारि है ।
जापै बेनती बखानि जिहवा थकत भई,
ताही के बुलाए पुन बेनती उचारि है ।
जैसे मद पीए ग्यान ध्यान बिसरन होइ,
ताही मद अचवत चेतन प्रकार है ।। 666 ।।

सुनि प्रिय गवन स्रवन बहरे न भए,
काहे की पतिव्रता पति ब्रत पाय है ।
द्रिशट प्रिय अगोचर हुइ अंधेरो न भए नैन,
काहे की प्रेमनी प्रेम हूं लजाये है ।
अवधि बिहाइ, धाइ धाइ बिरहा बिग्रापै,
काहे की बिरहनी, बिरह बिलखाये है ।
सुनत ब्रिदेस के संदेस नाहि फूटयो रिदा,
कऊन कऊन गनउ उत्तर न आय है ।। 667 ।।

बिरह दावानल प्रगटी न तन बन बिखै,
असन बसन तामै धृरित परजारि है ।
प्रथम प्रकासे धूम अतिही दुसहा दुख,
ताही ते गगन घन घटा अंधकार है ।
भभक भभके हवै प्रकाश्यो है अकाश शशि,
तारका मंडल चिनगारी चमकार है ।
कासिउ कहउ कैसे अंतकाल ब्रिथावंत गति,
मोहि दुख सोई सुखदाई संसार है ? ।। 668 ।।

एई अखीआं जु पेखि प्रथम अनूप रुप,
कामना पूरन करि सहज समानी है ।
एई अखीआ जु लीला लालन की इक ठक,
अति असचरज हवै हेरत हिरानी है ।
एइ अखीआं जु बिछुरत प्रिय प्रानपति,
बिरही बियोग रोग पीरा कै पिरानी है ।
नासका स्रबन रसना मैं अग्र भाग हुती,
एई अखीआं सगल अंग में बिरानी है ।। 669 ।।

इक टक ध्यान हुते चंद्रमे चकोर गति,
पल न लागत स्वपन हूं न दिखाइग्रै ।
ग्रंम्रित बचन धुनि सुनति ही बिद्यामान,
ता मुख संदेसों पथकन पै न पाईग्रै ।
सिहजा समै न उर ग्रन्तर समाते हार,
ग्रनिक पहार उट भए कैसे जाईग्रै ।
सहज संजोग भोग रस परताप हुते,
बिरह बियोग सोग रोग बिललाईग्रै ।। 670 ।।

जाकै एक फल पै धरन है सो धरनीधर,
ताहि गिरधर कहे कऊन बडिग्राई है ।
जाको एक बावरो कहावत है विस्वनाथ,
ताहि ब्रिजनाथ कहो कौन ग्रधिकाई है ।
सगल ग्रकार ऊंकार के बिथोर जिन,
ताहि नंद नंद कहै कउन ठकुराई है ।
उसतुति निंदा करत ग्रग्यान ग्रंध,
ऐसे ही ग्रराधन ते मौन सुखदाई है ।। 671 ।।

नख विख लऊ सगल ग्रंग रोम रोम करि,
काटि काटि सिखन के चरन पर वारीग्रै ।
ग्रगनि जलाइ फुनि पीसन पीसाइ तांहि,
लै उडै पवन होइ ग्रनिक प्रकारीग्रै ।
जत कत सिख पग धरै गुर पंथ प्रात,
ताहू ताहू मारग भै भसम कै डारीग्रै ।
तिह पद पादक चरन लिव लागी रहै,
दया कै दयाल मोहि पतित उधारीग्रै ।। 672 ।।

पंच बार गंग जाइ बार पंच प्राग लाइ,
तैसा पुन एक गुर सिख कऊ नवाए का ।
सिख कऊ पिलाइ पानी भाऊकर कुरखेत
ग्रस्वमेघ जग फल सिख कउ जिवाए का ।
जैसे सत मंदर कंचन के ग्रसार दीने,
तैसा पुन सिख कऊ इक सबद सिखाए का ।
जैसे बीस बार दरसन साध की ग्रा काहू,
तैसा फल सिख कउ चापि पग सुग्राए का ।। 673 ।।